दो शब्द

श्रीमती कामिनी अग्रवाल के द्वारा विरचित ''वेदना से चेतन की ओर'' शीर्षक से सम्बन्धित इस पुस्तक को पढ़ने का मौका मिला। यह पुस्तक मुख्यरूप से नारी की दिशा और दशा पर केन्द्रित है। इस पुस्तक में लेखिका ने अपनी मौलिक प्रतिभा के माध्यम से नारी के जीवन के विषय में अपनी व्यथा-कथा को निरूपित करने का प्रयास किया है। यद्यपि भारतीय संस्कृति एवं भारतीय वाङ्मय में नारी की सुस्थिति के बारे में विस्तृत चर्चाएँ हुई हैं और नारी को प्रकृति के रूप में चित्रित किया गया है। वह उत्पादयित्री शक्ति है, प्रेरणादायिनी है, गृहलक्ष्मी है। उसके बिना मनुष्य की सुरक्षा ही नहीं अपितु सत्ता ही खतरे में पड़ सकती है। उसे गृहलक्ष्मी भी कहा गया है। अतः नारी का सम्मान व आदर एक सभ्य समाज के लिए आदर्श ही नहीं अपितु प्राणिमात्र का कर्त्तव्य भी है। यदि हम इतिहास को देखें तो ज्ञात होता है कि पुरुष सत्ता के समान ही नारी सत्ता का भी स्थान रहा है। देश-विदेशों में भी नारियों ने अपनी ओजस्विनी शक्ति व सामर्थ्य के माध्यम से स्थान तो बनाया ही है, साथ ही नेतृत्व के द्वारा समाज एवं राष्ट्र को दिशा-निर्देश भी प्रदान किया है। इस क्षेत्र में भारत की नारियों का नाम विशेष उल्लेखनीय है। आवश्यकता है, नारी शक्ति को पहचानने की और उसका समादर करने की। वैदिक काल से लेकर आधुनिक काल तक के भारतीय मनीषा के वरेण्य लेखकों एवं कवियों ने नारी शक्ति का मूल्यांकन करते हुए समुचित सम्मान किया है और नारी को आदर्श गृहिणी एवं आदर्श नारी के रूप में चित्रित किया है। महाभारतकार ने लिखा है

प्रजनार्थं महाभागाः पूजार्हाः गृहदीप्तयः।
स्त्रियः श्रियश्च गेहेषु न विशेषोऽस्ति कश्चन।।(म. 9-26)

स्वां प्रसूतिं चरित्रञ्च कुलमात्मानमेव च।
स्वञ्च धर्मं प्रयत्नेन जायां रक्षन् हि रक्षति।।

(मनु. 9/07)

इन उपर्युक्त उद्धरणों से ज्ञात होता है कि भारतीय संस्कृति के अनुरूप भूषण एवं अलंकारों के द्वारा तो स्त्री का सम्मान करना ही चाहिए साथ ही मनवाणी एवं कर्म के द्वारा भी नारी का सम्मान करें जिससे हमारी मर्यादाएँ सुरक्षित होंगी, समाज व राष्ट्र भी सुरक्षित होगा। महाभारतकार का यह उद्घोष आज भी उतना ही प्रासंगिक है जितना की उस काल में प्रासंगिक था। जैसा कि कहा गया है

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।

(म. 3/56)

जहाँ पर स्त्रियों का सम्मान व आदर होता है, वहाँ देवताओं का निवास होता है।

कामिनी अग्रवाल जी का यह ग्रन्थ आज के परिप्रेक्ष्य में निश्चय ही समाज के लिए प्रेरणादायक है, और आईना भी। प्रकृत ग्रन्थ में बारह निबन्धों का संकलन प्रस्तुत किया गया है। इन निबन्धों के माध्यम से लेखिका ने नारी से सम्बन्धित विभिन्न विधाओं को उपस्थापित कर नारी शक्ति की वेदना व चेतना को रेखांकित करने का स्तुत्य प्रयास किया है, जिसके लिए लेखिका धन्यवाद के पात्र हैं। मैं इस पुनीत कार्य के लिए उनको हार्दिक बधाई देता हूँ, और उनके समुज्ज्वल भविष्य की कामना करते हुए महाकवि कालिदास के शब्दों में वाणी विराम देता हूँ।

शान्तानुकूलपवनश्च शिवश्च पन्थाः।।

डॉ. देवनारायण झा
कुलपति,
कामेश्वर सिंह दरभंगा संस्कृत विश्वविद्यालय,
कामेश्वरनगर, दरभंगा।

भूमिका

'21वीं सदी नारी की सदी है' ऐसा आज माना जाता है। मेरे मन में तो यह प्रश्न उठता है कि कौन सी सदी नारी की नहीं रही? 20वीं सदी में ही देखें तो विश्व के मानचित्र पर चार नारियाँ छायी रही हैं और एक तरह से राष्ट्राध्यक्ष और प्रधानमंत्री की भूमिका में श्री लंका की श्रीमती भंडारनायक, इजरायल की गोल्डामेयर, ब्रिटेन की मार्गेरिट थैचर और भारत की श्रीमती इन्दिरा गांधी। इससे आगे की पड़ताल करें तो भारत वर्ष के इतिहास में कोई ऐसी सदी खाली नहीं मिलेगी जिसमें किसी युग का नेतृत्व किसी महिला ने न किया हो। 19वीं सदी में ही झांसी की रानी, अहल्याबाई होलकर ने पति विहीन होकर राज्य की बागडोर थामी और संघर्ष किया था। यहां मेरा उद्देश्य इतिहास की पड़ताल नहीं है और न ही यह कहना कि 21वीं सदी में नारी सशक्तीकरण का उद्घोष गलत हे। मेरा कहना यह है कि नारी के पावों से 21वीं सदी के पूर्व आहट सुनाई पड़ती थी तो आज वह 'आधी दुनिया की धमक' (लेखिका की प्रथम पुस्तक) बन गई है। इससे पूर्व वह घर की रोशनी होती थी तो आज वह घर और बाहर दोनों ही अश्वों का सह सवार बन गई है।

श्रीमती कामिनी अग्रवाल नारीवादी सोच के सन्दर्भ में शिक्षा क्षेत्र की अग्रणी महिला हैं। मानवाधिकार के क्षेत्र में नारी का वर्चस्व

कायम करने के लिए ये आज भी संघर्षरत हैं और इनके घर पर हुई कई सभाओं में मैंने भाग भी लिया है। अगर इससे भी पहले जायें तो ये बिहार प्रान्त की एक ऐसी सफल प्रधानाध्यापिका के रूप में स्थापित रही हैं जिसे राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रपति द्वारा सम्मानित किया गया है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी जापान फाउन्डेशन के निमंत्रण पर वर्ष 1999 में जापान के अध्ययन भ्रमण हेतु बिहार सरकार द्वारा इनका मनोनयन किया गया। अपने समय की ये सफल शिक्षिका तो रही ही हैं, कुशल प्रशासिका और अनुकरणीय अनुशासिका भी रही हैं।

लेखन के क्षेत्र में यह उनकी दूसरी पुस्तक है और इससे यह प्रकट होता है कि ये नारी स्वातन्त्रय और उसकी मर्यादा के लिए किस प्रकार चिन्तनरत रहती हैं। जिस प्रकार फल्गु नदी ऊपर से शुष्क दिखाई पड़ती है किंतु जैसे ही उसके अन्तस्थल में जल के लिए हाथ फैलाया जाय तो वहीं धार फूट पड़ती है, उसी तरह श्रीमती अग्रवाल ख्याति से अधिक कर्त्तव्य और प्रदर्शन से अधिक परितोष में विश्वास करती हैं। यह प्रसन्नता का विषय है कि अब अपने भीतर संचित ज्ञान-राशि का वितरण करने के लिए अपने सम्पूर्ण जीवन का अनुभव और श्रम लेकर ये सारस्वत मैदान में निकल पड़ी हैं। इनका जीवन कोरा किताबी ज्ञान नहीं वह अनुभव से सम्पन्न और समर्थित है। अपने प्रायः चालीस वर्षों के शिक्षण काल में इन्हें जो भी अनुभव प्राप्त हुए हैं और उसके अतिरिक्त परिवार और समाज से अबतक जो भी ज्ञानार्जन किया है, उसकी सुगन्ध जन-जन तक अब पहुंचेगी, इसका हमें पूर्ण विश्वास है। भले ही इन्होंने इसे स्वान्तः सुखाय लिखा हो लेकिन यह वैसे ही सर्वान्तः सुखाय बन जायेगी जैसे किसी एक व्यक्ति को किसी प्रकार का दर्द होता है और वह उसके लिए कोई दवा खाकर जब दूसरे से उसका बखान करता है तो वह दवा स्वतः ख्यात होती जाती है। एक फ्रेन्च कहावत के अनुसार भी ''हम जो भी करते हैं वह दूसरों के लिए भी होता है''

श्रीमती कामिनी अग्रवाल की पुस्तक 'वेदना से चेतना की ओर' ऐसा ही काम करेगी जो भविष्य में न केवल नारियों के लिए वरन् प्रत्येक व्यक्ति के लिए, जहान और जिन्दगी के लिए, समाज और सोच के लिए, परिवार और प्रेम के लिए एक बरदान सिद्ध होगी।

इस पुस्तक की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि लेखिका ने इसमें जो बारहों निबन्ध प्रस्तुत किया है, वे एकदम ताजातरीन हैं जो उनकी नव्यतर सूचनाओं के साक्ष्य हैं और इसका इजहार करते हैं कि लेखिका जानकारियां प्राप्त करने में किस तरह अद्यतन रहती हैं।

यह ठीक है कि उनके निबन्ध के विषय आज सुपरिचित हैं लेकिन उनकी अपनी शैली, अपनी भाषा और अपनी सोच से समन्वित होकर उनका प्रस्तुतीकरण उन्हें और भव्य बना देता है। हाँ, उनकी रचनाओं में डूबना होगा, उन्हें समझना होगा, उन्हें ग्रहण करना होगा और केवल मनोरंजन के लिए उनको पढ़ना, उनके साथ अन्याय करना होगा। इतना अवश्य है कि उनकी अभिव्यक्ति शैली इन तथ्यों को भी ऐसे मनोरम रूप में प्रस्तुत करती हैं कि वे अत्यन्त आहलाद्कारी और आकर्षक बन गये हैं। केवल पाक-कला की निपुणता जिस प्रकार धन्यवाद का हकदार नहीं है बल्कि उसके साथ परोसने की प्रवीणता भी अपेक्षित है उसी तरह कामिनीजी के इस लेखन में दोनों ही की चरितार्थता सिद्ध होती है। आकाश में चमकते हुए सितारों के बारे में किसी शायर ने बड़ा ही अच्छा कहा है

'न केवल चमकते दमकते सितारे
अरे! ये तो चलने के करते इशारे।

श्रीमती कामिनी की यह पुस्तक ऐसी ही है जो प्रेरणा का पथ बनती है और अपना अलग अन्दाजे बयाँ रखती हुई नारी के शोषण और उसकी पीड़ा से लेकर बच्चों के चरित्र निर्माण और वहां से भी आगे

विश्व-कल्याण की सीमा नापती है। उनके निबन्धों के शीर्षक भी अत्यन्त मनोहारी है कोपलान्तक युग, बालविवाह बनाम विधवापन, स्थानापन्न माता तीसरा लिंग इत्यादि।

पुस्तक आपके हाथ में है आप जैसे-जैसे इसे पढ़ेंगे वैसे-वैसे इसका आनन्द लेंगे। इस पुस्तक का शीर्षक अनायास ही मुझे एक कवि की पंक्तियों को उद्धत करने के लिए प्रेरित करता है और मैं चाहूँगा कि उसी वेदना को समझते हुए इस पुस्तक को पढ़ा भी जाय

प्यारे आओ अगर ज़िन्दगी जानते
घूंट पी लो अगर बन्दगी मानते
दिल जलाया नहीं 'वेदना' में अगर,
स्वाद जीवन का उसने चखा ही नहीं।

डॉ॰ महेश झा
पूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष
ल॰ना॰ मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा

■

एक दृष्टि

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा हमारे दिलों में पिछड़े, गरीब तबकों के प्रति संवेदनशीलता और समझ पैदा करती है।

राष्ट्रीय विकास के कार्यक्रमों को सफल बनाने हेतु उपलब्ध संसाधनों और वातारण को समझकर उनमें सकारात्मक परिवर्तन लाने, जनशक्ति में वांछित चेतना जाग्रत करने के लिए नारी शिक्षा प्रथम सोपान है।

स्त्रियों हेतु जीवनोपयोगी कार्यात्मक शिक्षा एकसतत् और अनिवार्य पद्धति के रूप में विकसित की जानी चाहिए जिससे देश को स्वस्थ, सुखी नागरिक, गुणी महिलाएँ, कुशल कामगार एवं जागरूक जनता मिल सके।

साक्षरता, स्वावलम्बन, शैक्षिक दक्षता समाज के हर क्षेत्र में प्रभावी पहल मुख्य और महत्वपूर्ण बिन्दु हैं। ये चेतना के चरण, चेतना के चरम पर पहुँचायेंगे।

लेखिका श्रीमती कामिनी अग्रवाल के इस रचना संग्रह में महिला सशक्तीकरण के विभिन्न पहलुओं जैसे सर्वशक्तिमयी : नारी, नारी शोषण और पीड़ा : इक्कीसवीं सदी के शर्मनाक तथ्य, कोंपलान्तक युग (भ्रूणहत्या), बाल-विवाह बनाम विधवापन, पारम्परिक रूढ़ियाँ और महिलाएँ आदि विषय पर शोधपरक, श्रेष्ठ, सारगर्भित निबन्ध संकलित हैं। भाषा, शैली और अभिव्यक्ति आकर्षक है। साथ ही सर्वत्र इन्होंने अनुशासन बनाए रखा है। लेखिका में महिला प्रवृत्तियों की मूल्यांकन

क्षमता सराहनीय है। निस्सन्देह साक्षर, सशक्त, स्वावलम्बी महिलाएँ ही इक्कीसवीं सदी के भारत की नियामक सिद्ध होंगी।

निबन्ध संग्रह 'वेदना से चेतना की ओर' में दर्जनभर लेखों में नारी वर्ग की सम्यक उपस्थिति और उपलब्धि प्रशंसनीय व प्रेरणास्रोत हैं।

गुलाबचन्द
अपर महानिदेशक, आकाशवाणी (पूर्व)

■

अनुवाक्

अगर इस धरती पर कोई चलता-फिरता देवता है जो न केवल हमे इस दुनिया को देखने का अवसर देता है वरन् हर उम्र में शैशव से लेकर वृद्धावस्था तक हमारा लालन-पालन और सेवा-सुश्रूषा करता है तो वह नारी ही है। मनु ने कहा है 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता' निश्चित रूप से नारी देवता के तीनो ही कार्य करती है जीवन भर देती ही रहती है, परिवार, समाज अथवा संसार उसे जो भी दुःख या सुख देता है, उसे आगे बढ़कर वरण करती है, कुछ भी हो आंचल फैला कर लेती है, चाहे खुशहाली हो अथवा गाली हो। वह तारती भी है, हमें वह नौका बनकर जीवन भर ढ़ोती और मुसीबतों से बचाकर पार लगाती है।

गोस्वामी तुलसीदास ने आपत्तिकाल में नारी को मानव का सबसे बड़ा सहायक माना है और कहा है कि वही है जो जीवन की कड़ी परीक्षा में पुरुष को सफलता प्राप्त करा सकती है।

'वेदना से चेतना की ओर' पुस्तक की रचना का उद्देश्य उसका यही प्रतिफलन है कि श्रीमती कामिनी अग्रवाल ने इस पुस्तक में न केवल नारी के शोषण एवं उसकी पीड़ा को अभिव्यक्ति प्रदान की है वरन उसके अनेक रूपों को दर्शाते हुए उन्होंने यह भी दिखाया है कि 'नारी संसार की धुरी है' तो इसलिए नहीं कि वह किसी की मदद की तलबगार है, वह तो सारे जहां का दर्द अपने भीतर समेटकर अपनी पहचान बनाने में खुद समर्थ है। 'मातृ दिवस' हो अथवा 'अन्तर्राष्ट्रीय

महिला दिवस' ये सारे सम्मान नारी ने अपनी महत्ता और गरिमा से प्राप्त किया है। आजतक यह कितनी बड़ी विडम्बना रही है कि हम बच्चियों को, उनकी पैदाइस को हाशिए पर रखते आए हैं। कोपलान्तक युग निबन्ध में कामिनी जी ने भ्रूण-हत्या को मानव समाज का अभिषाप बतलाते हुए इस कोढ़ को समाज से दूर करने की अपील की है।

एक और निबन्ध जो 'स्थानापन्न माता' यानी 'सरोगेट मदर' के नाम से है उसमें ऐसी महिलाओं को जो 'मां बनने की खुशी नहीं पा सकतीं' के लिए सूचनाएं तो हैं ही, इसे कानूनी जामा पहनाने की प्रक्रिया के लिए भी लेखिका ने वकालत की है।

समाज द्वारा उपेक्षित और धर्षित 'तीसरा लिग-किन्नर' पर भी उनका निबन्ध बड़े काम का है साथ ही बहुत महत्वपूर्ण है जो तथ्य का इजहार करता है कि इस संसार में जो कुछ भी है वह परमात्मा की देन है और हमें उसे सम्मान पूर्वक जगह देनी चाहिए क्योंकि कोई भी न तो दुर्बल है और न सबल।

इसी प्रकार इस पुस्तक में जो बारहों निबन्ध हैं वे सभी केवल नारी जागरण और नारी शक्ति की मंत्र मात्र नहीं हैं, कहा जाना चाहिए ये सभी निबन्ध नारी के प्रयाण गीत हैं उद्‌बोधन है, जहाँ से उसके कदम बड़ी दृढ़ता से धरती, सागर और आकाश की ऊँचाई मापने को आकुल है। मुझे श्याम नारायण पांडेय की एक पंक्ति याद आती है

'तुम उड़ जाओ अब पाखों में
तुम एक बनो अब लाखों में मैं इस पंक्ति के साथ कामिनी जी की इस पुस्तक का अभिनन्दन करता हूँ कि यह पाठकों के लिए एक नई राह बनेगी।

डा. देवनारायण यादव
निदेशक,
मिथिला संस्कृत शोध संस्थान, दरभंगा।

■

लेखकीय

यह संसार भिन्नताओं से भरा हुआ है। अगर देखें तो हमारे शरीर में ही, हमारे हाथ में भी पांचों ऊंगलियां बराबर नहीं हैं, कोई मोटी, कोई पतली, कोई बड़ी, कोई छोटी लेकिन जब हम कोई भी काम करने चलते हैं तो सारी ऊंगलियां एक साथ होकर उसे पूरा करती हैं। यह स्वाभाविक है कि सृष्टिकर्त्ता ने जो भी चीजें बनाई हैं, वह जड़ पदार्थ हो या चेतन, पुरुष हो अथवा स्त्री किसी न किसी प्रकार का विभेद सबमे है। इस विभेद के होते हुए तत्त्व की पहचान कर लेना ही बुद्धिमानी है, सहजता है और मानवता है।

जब से यह सृष्टि है और इस सृष्टि में नर-नारी हैं तो दोनों की बनावट में भिन्नता स्वाभाविक रूप से है। यह प्रकृति-प्रदत्त है और इस प्राकृतिक गुण के साथ यह भी सत्य ही है कि पुरुष और स्त्री दोनों में कतिपय भिन्नताएं हैं। हालांकि, विश्लेषण ने, विज्ञान ने यह भी सिद्ध किया है कि पुरुष में ही एक स्त्री और स्त्री में ही पुरुष तत्त्व समाहित है। हमारा बायां भाग, यहाँ तक कि मस्तिष्क भी नारी तत्त्व प्रधान है यानी उसमें कोमलता, भावुकता, कल्पनाशीलता, प्रेम, वात्सल्य आदि गुण सन्निहित हैं। भगवान शिव के अर्द्धनारीश्वर स्वरूप की कल्पना भी

इसी प्रकार है। कवि विद्यापति ने लिखा है **''जय-जय संकर जय त्रिपुरारी/जय अधपुरुष जयति अधनारी/आध धवल तन आधा गोरा,/ आध पटोर आध मुंज डोरा।''**

समय आने पर पुरुष में नारी शक्ति प्रदीप्त होकर उसे अत्यन्त वत्सल, कोमल, भीरू, प्रिय और सुन्दर बनाती है। इसी प्रकार नारी में भी जब पुरुष शक्ति का अवतरण होता है तो वह प्रचण्ड रूप धारण कर अत्याचारियों का दमन और दुष्टों का मर्दन करती है **''हे नारि हृदय से नमस्कार/साहस का स्रोत बहाती हो/काली चण्डी दुर्गा बनकर/शोणित से नित्य नहाती हो।''**

इस प्रकार नर और नारी दोनों के शरीरावयवों को लेकर भिन्नता अथवा लिंगभेद की बात उठाना कहीं से श्रेयस्कर नहीं है और न ही ऐतिहासिक। यह तो समय और इतिहास का पटाक्षेप है कि हमने कभी नारी को अत्यन्त पूज्य और देवतुल्य माना तो कभी उसे अत्यन्त निकृष्ट और मात्र भोग्या माना। गुण और दोष किसमें नहीं है? पुरुष भी महान हो सकता है और नारी भी उसी तरह महान रही है। नारी भी पतित हो सकती है और पुरुष भी दुष्कर्मी हो सकता है ***"There is nothing good or bad/but thinking makes it so."***

गोस्वामी तुलसीदास ने भी लिखा है **''सर्वबस्तु गुन दोषमय/विश्व कीन्ह करतार।/संत, हंस गुन गहहिं पय न/परिहरि बारि विकार।।''**

तो यह सत्य है कि हमारे विचार अथवा सोच में यदि नारी कहीं से भी पुरुष से कमतर आंकी जाती है अथवा उपेक्षित की जाती है तो यह गलत है।

सच्चे पढ़नेवालों ने इसे वेद, पुराण और इतिहास तथा काव्यों से भी अवश्य ही जाना होगा कि नर और नारी की शक्ति, सामर्थ्य और प्रतिभा में विभेद करना असंगत है।

इससे पूर्व मैंने अपनी पुस्तक ''आधी दुनिया की धमक'' में अनेक प्रकार से इस तथ्य की पुष्टि की है कि नारी आज अपनी संभावनाओं की तलाश में नहीं वरन् व्यक्तित्व के विकास की होड़ में आ गई है और अनेक प्रकार से उसने धरती से लेकर आकाश तक उड़ान भरना आरम्भ कर दिया है। अपनी इस दूसरी पुस्तक ''वेदना से चेतना की ओर'' में भी मैंने इस बात की कोशिश की है कि नारी का वह स्वरूप निखरे जिससे उसकी प्रतिभा और उसके पराक्रम को लोग भलीभांति समझ सकें और इस मुगालते में न रहें कि नारी अब कुछ भी और कहीं भी सह लेगी और चुप बैठी रह जायेगी। आज वह सर्वशक्तिमयी है, वह कोपलान्तक युग (भूणहत्या) को ध्वस्त करनेवाली महाचण्डी है, पारम्परिक रूढ़ियों की बेड़ियों को झटककर तोड़ देनेवाली सिंहनी है और अपने विधवापन को अस्वीकार कर अपने जीवन का नवनिर्माण करनेवाली वह कलाकार है जो जीवन को अपनी समझदारी से एक नया रूप, एक नया ही चरित्र और एक नयी ही भूमिका प्रदान करता है। इसीलिए मेरी इस दूसरी पुस्तक 'वेदना से चेतना की ओर' की भेंट आप पाठकों को समर्पित है ताकि आप सच्ची तरह यह मूल्यांकन कर सकें कि आज नारी की जो गतिविधियां हैं और उसके व्यक्तित्व की जो सच्चाई है वह किस प्रकार खरी और निखरी है। इस पुस्तक में कुल बारह रचनाएं हैं।

इस पुस्तक के लिए कृपापूर्वक 'दो शब्द' लिखने हेतु कामेश्वर सिंह-दरभंगा-संस्कृत विश्वविद्यालय के माननीय कुलपति डॉ. देवनारायण झा के प्रति मैं अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करते हुए अत्यंत गौरव का अनुभव करती हूँ, जिन्होंने अपने अमूल्य समय का योगदान स्नेह पूर्वक किया।

मैं डॉ॰ प्रभाकर पाठक पूर्व मानविकी संकायाध्यक्ष एवं हिन्दी विभागाध्यक्ष ल॰ना॰मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा के प्रति ऋणी हूँ जिन्होंने अपना अमूल्य समय प्रदान कर मेरी इस सारस्वत साधना में

मदद की।

मैं डा॰ महेश झा, पूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष ल॰ना॰ मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा के प्रति कृतज्ञ हूँ जिन्होंने इस पुस्तक की भूमिका लिखकर मुझे प्रोत्साहित किया है।

मैं साहित्यप्रेमी श्री गुलाब चन्द अपर महानिदेशक, आकाशवाणी (पूर्व) के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होंने मेरी इस पुस्तक पर एक दृष्टि देकर मुझे कृतार्थ किया है।

मैं डा॰ देवनारायण यादव, निदेशक मिथिला संस्कृत शोध संस्थान, दरभंगा के प्रति आभारी हूँ जिन्होंने मेरी इस पुस्तक पर अपने विचार व्यक्त कर मुझे कृतार्थ किया है।

मैं उन सभी विद्वत्जन के प्रति कृतज्ञ हूँ जिन्होंने मेरी इस रचना में मदद की है।

अन्त में मैं समीक्षा प्रकाशन के प्रति भी धन्यवाद ज्ञापित करती हूँ जिनके सहयोग के बिना इस पुस्तक का इस रूप-रंग में आ पाना एवं ससमय प्रकाशन हो पाना कदापि संभव नहीं होता।

कामिनी अग्रवाल

■

नारी शोषण और पीड़ा : 21वीं सदी के शर्मनाक तथ्य

कहावत है 'मर्ज बढ़ता ही गया दवा ज्यों-ज्यों की।' जैसे-जैसे हम तथाकथित रूप से सभ्य होते जा रहे हैं, वैसे-वैसे हमारी पशुता, हमारे भीतर की क्रूरता, परपीड़क मनोवृत्ति बढ़ती जा रही है और जो भी हमारे भीतर सत्य, शिव और सुंदर वर्तमान रहा है, वह किसी-न-किसी रूप में क्षरित होता जा रहा है

"चढ़ रहे हैं अर्श पर कि गिर रहे हैं फर्श पर,
इस नयी हैवानियत की है न कोई इन्तहा !"

वैसे तो हमने नारी की पूजा भी की है, उसे दुर्गा, महाकाली, शक्ति आदि का अवतार माना है किन्तु शायद ही ऐसी कोई स्थिति इतिहास में दिखाई पड़ती है जब पुरुष अपने-आप आगे बढ़कर महिलाओं (घर या बाहर की) के विकास अथवा उनकी स्थिति के उन्नयन के लिए सकारात्मक प्रयास किया हो! अपवादों की बात छोड़ दें।

आज महिलाएं जिस मुकाम पर पहुंची हैं, उनकी राह आसान नहीं थी। स्त्री-संघर्ष के वर्तमान का निर्माण उन महिलाओं ने किया है जिन्होंने स्त्री समानता के लिए शंख फूँका था। उन्होंने एक शक्तिशाली सामंती ढाँचे के खिलाफ संघर्ष करते हुए अपना पूरा जीवन महिलाओं को कुप्रथाओं की बेड़ियों से आजाद करने के लिए होम कर दिया।

बीसवीं सदी में महिलाओं के हौसले और भी अधिक बुलंद हो

गये। इस सदी में अंग्रेजों के खिलाफ भारत की आजादी के लिए लड़ी जाने वाली लड़ाई में महिलाएँ उन क्रांतिकारी समूहों का हिस्सा बनीं, जिनका उद्देश्य ब्रिटिश राज्य को उखाड़ फेंकना था। इस लड़ाई में शामिल होनेवाली सुनीति चौधरी, भगत सिंह और उनके साथियों को लाहौर से बाहर निकालने में मदद करने वाली दुर्गा भाभी, सिविल नाफरमानी और टैक्सबंदी अभियान में अहम भूमिका निभाने वाली रानी गाइदिनलियु शामिल थीं। इन महिलाओं द्वारा दिखाई गई राह पर चलकर कई महिला संगठन तैयार हुए, जिनके माध्यम से महिलाओं ने कई क्रांतिकारी आन्दोलनों में मुख्य भूमिका निभाकर नारी के अस्तित्व की पहचान दिलाई।

बराबरी और आजादी के लिए लड़ते-लड़ते देश की महिलाओं ने इतिहास रच दिया। स्वतंत्रता और बराबरी का जद्दोजहद आज भी जारी है। वक्त के साथ महिलाएँ सभी क्षेत्रों में अपनी प्रतिभा को साबित कर अपने हक की लड़ाई को बखूबी जीत रही हैं।

यह सही है कि महिलाओं को आजादी मिली है, लेकिन महिलाओं को यह कैसी आजादी मिली है कि वे आज अपनी खुद की रक्षा करने में विफल हैं। वह महिला जो नींव है घर, परिवार, समाज, देश और रिश्तों की। बिना नींव के कोई समाज उन्नति नहीं कर सकता है, कोई परिवार फल-फूल नहीं सकता है, कोई रिश्ता कायम नहीं रह सकता है। महिला के बिना पुरुष का कोई अस्तित्व ही नहीं है, फिर क्यों नहीं महिलाओं को प्राथमिकता दी जाती है ? उनपर हुए अपराधों और अत्याचारों से सम्बद्ध फैसले क्यों नहीं जल्दी सुनाए जाते? क्यों नहीं उनका सम्मान किया जाता? क्यों नहीं उनकी रक्षा की जाती? क्यों बालिकाओं को गर्भ में ही मार दिया जाता है? क्यों इन्हें जिंदा जला दिया जाता है? क्यों इन्हें बेड़ियों में जकड़ा जाता है? क्यों इन्हें इस्तेमाल करके फेंक दिया जाता है?

पहले राज्य स्त्री को मताधिकार देने को तैयार नहीं था। अब कानून बनाने में बराबर की हिस्सेदारी देने को तैयार नहीं। 1789 ई. में

फ्रांसीसी क्रांति में स्त्री-पुरुष दोनों ने बराबर की भूमिका निभाई। क्रांति की सफलता के बाद स्थापित गणतंत्र में पुरुष नागरिकों के लिए घोषणापत्र जारी किया गया लेकिन इसमें स्त्रियाँ सारे अधिकारों से वंचित थीं। बराबरी, आजादी और भाईचारे के नारे के साथ यूरोप का नेतृत्व करने वाले फ्रांस ने अपनी ही स्त्रियों को 1944 ई. तक मतदान देने के अधिकार से वंचित रखा। फ्रांस की महिलाओं ने 29 अप्रैल 1945 में पहली बार मतदान किया। अमेरिका की संसद 52 वर्षों तक यह बहस करती रही कि स्त्रियों को मतदान का अधिकार दिया जाय या नहीं। बहस के दौरान यह भी बात आई कि मतदान का अधिकार देने से परिवार बिखर जाएगा। अमेरिका की महिलाओं को 1920 में मताधिकार मिला। आज भी लोकतांत्रिक देशों के विधान मण्डलों में सिर्फ 10 प्रतिशत ही स्त्रियाँ हैं। संयुक्त राष्ट्र के प्रशासन संघ में महिलाओं की भागीदारी 15 प्रतिशत ही है।

महिलाओं को शक्ति सम्पन्न बनाने की दिशा में राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय कई बार पहल की गई है। इंदिरा गांधी के शासनकाल में 'स्टेट्स आफ वुमैन कमिटी' का गठन 1971 में किया गया था, जिसके रिपोर्ट में कहा गया कि भारत में महिलाओं के विकास में सबसे अधिक बाधक तत्व रूढ़ियाँ और परम्पराएँ हैं।

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 1975 को 'अन्तर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन', 1980 में 'कोपेनहेगेन महिला सम्मेलन', 1985 में 'नौरोबी अंतर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन' तथा 1995 में 'बीजिंग महिला सम्मेलन' में अनेक महत्वपूर्ण मुद्दों पर महिला सशक्तीकरण की पहल की गई थी। 1993 ई. में 'अंतर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन' वियना में हुआ। इसमें विधायिका में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने की पहल की गई थी। साथ ही महिलाओं के मानवाधिकार की रक्षा पर विशेष रूप से बल दिया गया।

राष्ट्रीय स्तर पर सन् 2001 को 'महिला सशक्तीकरण वर्ष' घोषित किया गया था। इसका मुख्य विषय था महिलाओं की उन्नति, विकास और सशक्तीकरण करना, उनके प्रति हर भेद-भाव को खत्म

करना। हर क्षेत्र में उनकी भागीदारी को सुनिश्चित करना।

सन् 2009 में केन्द्र सरकार द्वारा प्रत्येक वर्ष 24 जनवरी को 'राष्ट्रीय बालिका दिवस' मनाने की घोषणा की गई और उस वर्ष से इसे मनाया भी जा रहा है। इससे महिलाओं की स्थिति में कई निर्णायक बदलाव आये भी।

वर्ष 2013 को 'स्त्री सम्मान सुरक्षा वर्ष' मनाने का संकल्प लिया गया। महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार प्राप्त हैं। महिलाएँ हर क्षेत्र में आगे आ भी रही हैं लेकिन आज भी लगभग एक तिहाई महिलाएँ अपने कार्य स्थल और सार्वजनिक स्थलों पर पुरुष हिंसा का शिकार हो रही हैं। आजादी के लगभग 68 वर्षों के बाद भी देश की महिलाएँ बुरी तरह से प्रताड़ित की जा रही हैं। इनकी प्रताड़ना दिल दहला देने वाली है।

हम इक्कीसवीं सदी में पहुँच गये लेकिन आज भी बालक-बालिकाओं में भेद-भाव, भ्रूण-हत्या, लैंगिक विषमता और दुष्कर्म के बढ़ते मामले नारी-उत्थान की राह में रोड़े बने हुए हैं। समाज में लगातार अमानवीय घटनाएँ घट रही हैं। प्रतिदिन अखबार में पढ़ने को मिलता है, तीन वर्ष की बच्ची के साथ बलात्कार, चचेरे भाई ने सात वर्ष की बहन के साथ किया दुष्कर्म, आठ वर्ष की बच्ची के साथ गैंगरेप के बाद हत्या, जिस्मफरोशी का भंडाफोड़ आदि। समाज में ऐसी घटनाएँ रोज घटित हो रही हैं। मनुष्य में आज पाश्विक वृत्ति, आसुरी वृत्ति की बहुलता है। मानवीयता समाप्त हो चुकी है। कविवर द्विज ने ठीक ही लिखा है

'बड़ी जलन है इस ज्वाला में जलना कोई खेल नहीं है।
इधर देखता हूँ करूणा से मानवता का मेल नहीं है।'

1980 ई. में दुष्कर्म संबंधित कानून संशोधित किया गया। लेकिन आज भी यह कानून दुष्कर्म रोकने में सफल नहीं हो सका।

दिल्ली में 16 दिसम्बर 2012 को मेडिकल की एक छात्रा के साथ चलती बस में गैंगरेप हुआ। स्थिति भयावह थी। इस दर्दनाक

घटना से सड़क से लेकर संसद तक उबाल उठा। पूरे देश में ऐसे जघन्य अपराध के विरुद्ध आवाज उठी। इसके कुछ वर्ष पूर्व एक और मेडिकल की छात्रा के साथ ऐसा ही दुराचार हुआ था। तब भी ऐसी ही आवाज उठी थी। इन हादसों ने देश को झकझोर कर रख दिया। जख्म इतना गहरा था कि दिल्ली की टीस को पूरी दुनिया ने महसूस किया।

चलती गाड़ी में दुष्कर्म की ऐसी घटनाएँ अक्सर होती रहती हैं किन्तु इन पीड़िताओं को क्या न्याय मिलता है? इन्हें मीडिया कॅवरेज भी नहीं मिलता है।

यह संतोष की बात है कि दिल्ली की दामिनी के साथ पूरा देश खड़ा है। उसे न्याय दिलाने के लिए नित्य नई कोशिशें की गईं लेकिन उन दामिनी के विषय में भी सोचना होगा जो आज जिन्दा तो हैं लेकिन उनकी और उनके परिवार वालों की सांस हर दिन न्याय की आस में टूटती जा रही है। उनके साथ न तो बैनर है, न समाज खड़ा है और न ही कोई राजनीतिक संगठन।

वर्ष 2012 में ही गोहाटी में 11वीं कक्षा की छात्रा को गुण्डों द्वारा नोचने-खसोटने की जो कोशिश की गई, वह दिल दहला देने वाली घृणित घटना थी।

दूसरी घटना असम में सत्तारूढ़ विधायक रूमीनाथ से संबंधित है। जून 2012 में भीड़ ने इन्हें इसलिए बेरहमी से पीटा क्योंकि इन्होंने दूसरी शादी करने की हिमाकत की थी। प्रश्न यह है कि क्या देश की जनता दूसरी शादी करनेवाले कोई पुरुष के साथ भी वैसा ही व्यवहार करती है? शायद नहीं, वजह स्पष्ट है, रूमीनाथ एक स्त्री हैं। दुष्कर्म की इस कड़ी में एक और घटना मुंबई की है। मुंबई में 22 अगस्त 2013 को सामूहिक दुष्कर्म का शिकार एक 23 वर्षीय फोटो पत्रकार हुई।

अहमदाबाद में आसाराम बापू तथा उनके पुत्र नारायण साईं का नाबालिग लड़कियों के साथ किए गए दुष्कर्म की घटनाएँ इस सभ्य समाज की बर्बरता को बेनकाब करती हैं। इनके बाद इन्हीं की तरह एक और बाबा संत रामपाल जी उजागर हुए हैं। अपनी काली करतूतों के

कारण यह भी आसाराम बापू की तरह सजा काट रहे हैं। इनके उपर महिलाओं को बंधक बनाने, लड़कियों के साथ यौन-उत्पीड़न, बलात्कार, हत्या करने तथा भोले-भाले अंधविश्वासी भक्तों को ठगने का आरोप है। यह सिलसिला आसाराम बापू और संत रामपाल पर ही खत्म नहीं होता बल्कि इस कड़ी में और भी कई बाबा चर्चा में हैं। धर्म की आड़ में ये लोग भोले-भाले भक्तों को अपनी गंदी एवं निकृष्ट हरकतों से अपने शिकंजे में फँसा लेते हैं। ऐसी ओछी हरकत करनेवालों को न तो समाज का डर है और न ही कानून का

'एकां लज्जां परित्यज्य सर्वत्र विजयी भवेत्' ऐसे संतों से समाज को बचाने के लिए समाधान पुलिस नहीं, हमारे नेताओं को आगे आना होगा।

देश का ऐसा कोई राज्य नहीं है, कोई गाँव नहीं है जहाँ दुष्कर्म नहीं होता है। सभी जगह दुष्कर्म के शर्मनाक मामले सुनकर लज्जा से सिर झुक जाता है। वर्ष 2014 में उत्तर प्रदेश में महिलाओं एवं लड़कियों के साथ शर्मनाक एवं जानलेवा बलात्कार का मामला सामने आया। मुरादाबाद के ठाकुरद्वारा थाना क्षेत्र में 11वीं कक्षा की एक छात्रा का शव पेड़ से लटका मिला। दो सप्ताह पहले बदायूँ में दो नाबालिग चचेरी बहनों के साथ बलात्कार फिर उनका कत्ल कर उनके शवों को पेड़ पर लटका दिया गया। इसके पश्चात एक के बाद एक महिलाओं के साथ शर्मनाक घटनाएँ होती रहीं। बहराइच में एक 45 वर्षीय महिला की गैंगरेप के बाद हत्या कर दी गई और फिर शव को पेड़ पर लटका दिया गया। अब प्रश्न यह है कि क्यों पेड़ों पर महिलाएँ और किशोरियाँ लटकाई जा रही हैं? शायद सबूतों से बचने और हत्या को आत्महत्या दिखाने का यह सबसे आसान तरीका लगता है। बलात्कारी मुख्य गवाह को ही खत्म कर देना चाहते हैं। इस प्रकार आज मानवता को शर्मसार करनेवाली वीभत्स घटनाएँ हो रही हैं। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इस कुकृत्य की निंदा हो रही है।

दिल्ली में चलती बस में 16 दिसम्बर, 2012 को सामूहिक

बलात्कार की घटना से पैदा हुए देशव्यापी गुस्से की पृष्ठभूमि में दुष्कर्म के खिलाफ कठोर प्रावधानों वाला कानून लागू हो गया है। इसमें दुष्कर्म के दोषी को उम्रकैद या मौत की सजा देने का प्रावधान है। राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी ने 'आपराधिक कानून (संशोधित) विधेयक 2013' को मंजूरी दे दी। नए कानून के मुताबिक दुष्कर्म मामले में अपराधी को कठोर कारावास भुगतना होगा जिसकी अवधि 20 साल से कम नहीं होगी। इसे आजीवन करावास तक बढ़ाया जा सकता है यानी अपराधी को सारी जिन्दगी जेल में सड़ना होगा।

पीछा करने और घूरने के आरोप में और अभद्र व्यवहार को एक से अधिक बार करने पर गैरजमानती अपराध बताया गया है। तेजाब हमला करने वाले को कम से कम 10 साल की जेल होगी। नये कानून में यह भी कहा गया है कि किसी भी अस्पताल को दुष्कर्म या तेजाब हमले की पीड़िता को तुरंत ईलाज मुहैया कराना होगा और ऐसा न करने पर दण्ड भुगतना पड़ेगा।

यदि कोई सरकारी कर्मी, अर्द्धसैनिक बल का जवान, प्रबंधन या अस्पताल कर्मी दुष्कर्म का दोषी पाया जाता है तो उसे न्यूनतम सात साल या आजीवन कारावास तक की सजा भुगतनी पड़ सकती है। इसके तहत भारतीय साक्ष्य अधिनियम को भी बदला गया है ताकि दुष्कर्म पीड़िता यदि अस्थायी या स्थायी तौर पर मानसिक या शारीरिक रूप से अक्षम हो गई है तो न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष वह एक द्विभाषिये या विशेष शिक्षक की मदद ले सकती है।

लेकिन इससे क्या हुआ ? इतना सब कुछ होते हुए भी दिल्ली में दुष्कर्म और उत्पीड़न और अधिक बढ़ गया है। एक साल में दो गुना बलात्कार और पाँच गुना यौन-उत्पीड़न बढ़ गया है। वहाँ नए कानून का कोई असर नहीं दिख रहा है।

बेटियों को सुरक्षा देने की जिम्मेदारी कानून के साथ-साथ हम सबकी है, लेकिन इस कोशिश में हम सभी असफल रहे हैं। निर्भया की दर्दनाक मौत के लिए उसकी माँ इंसाफ की लड़ाई लड़ रही है। उसका

और उसके परिवार का एक ही मकसद है कि 'इन दरिन्दों को फांसी के फंदे से लटके देखना'। यदि सरकार निर्भया के हत्यारों को सजा सुनाने के बाद फांसी पर लटका देती तो ऐसे अपराधियों के मन में भय पैदा जरूर होता। उन्हें पता चलता कि बुरा करने का हश्र क्या होता है ? पर ऐसा नहीं होने से अपराधी बलात्कार जैसी घिनौनी वारदातों को आज भी खुलकर अंजाम दे रहे हैं। निर्भया की माँ की सरकार से यह भी मांग है कि रात आठ बजे के बाद यदि कोई भी लड़की ऑटो वाले से सम्पर्क करे तो हर हाल में उसे सुरक्षित घर पहुँचाया जाए। इसके लिए सरकार को ऑटो वाले की मनमानी पर रोक लगाते हुए सख्त कदम उठाने ही होंगे जिससे बेटियाँ सुरक्षित, निर्भीक होकर घर पहुँच सकें।

निर्भया की माँ का कहना है कि ''अबतक व्यवस्था से लड़ने के बावजूद आज भी हम वहीं खड़े हैं। कहीं भी ठोस कदम नहीं उठाए जाते। पुलिस कभी वहाँ नहीं होती, जहाँ उसकी जरूरत होती है। बेटी की मौत के बाद हालात कागजों में बदले हैं, वास्तविकता में नहीं।''

गाँव में ज्यादा बलात्कार के मामले होते हैं। 1983 ई. से 2009 के बीच क्रिमिनल लॉ जर्नल में छपे रेप केसों का अध्ययन किया गया जिनमें हाईकोर्ट में 80 फीसदी और सुप्रीम कोर्ट में 75 फीसदी रेपकेस ग्रामीण क्षेत्र से थे। 12 साल से कम उम्र की बच्चियों के साथ बलात्कार के मामले में लगभग 68 फीसदी मामले गाँवों से थे। ग्रामीण इलाकों में बलात्कार के ज्यादातर मामले सामाजिक डर से थानों तक नहीं पहुँच पाते।

कुछ मामले मीडिया के जरिये सामने आते हैं और कुछ ऐसी वारदातें होती हैं जो पुलिस रिकार्ड में नहीं हैं और न मीडिया तक पहुँचती हैं। अखबारों और न्यूज चैनलों की सुर्खियों में आए बगैर महिलाओं के खिलाफ अपराध हर दिन, हर घंटे और लगभग हर मिनट पर होते रहते हैं। आज महिलाएँ कहीं भी सुरक्षित नहीं हैं

''खुशगवारी के सभी ख्यालात अच्छे हैं,
मगर यारों हर जगह दुश्वारियाँ दिखती हैं।''

आज हमारा सामाजिक परिवेश बिल्कुल बदलता-बिगड़ता हुआ है। शराब की बेतहाशा दुकानें खुल रही हैं। हमारा समाज व्यभिचारी, जुआरी, नशेड़ी, मतिहीन, विवेकहीन बनता जा रहा है। महिलाओं के साथ दुराचार के लिए शराब भी एक बड़ी वजह है। सरकार बहुत सी गैर जरूरी चीजों पर पाबंदी लगाती है किंतु शराब पर नहीं। बलात्कार की ज्यादा घटनाएँ शराब के नशे के बाद ही हो रही हैं। जब अपराधी शराब के नशे में होते हैं उस समय वे संवेदनहीन, निष्ठुर और क्रूर हो जाते हैं। ऐसी संवेदनहीनता की स्थिति में उन्हें कठोर कानून का क्या भय रहेगा?

जेंट्स पार्लर की आड़ में सेक्स रैकेट चलाया जा रहा है। मनचलों द्वारा युवतियों पर तेजाब फेंककर हमला किया जाता है। आज दहेज प्रथा ने भी भयानक रूप धारण कर लिया है। देश में दहेज के खिलाफ सख्त कानून बनने के बावजूद लोग दहेज लेने में हिचकिचाते नहीं बल्कि शान के साथ दहेज लेते और देते हैं। यह प्रथा समाज के लिए कलंक है। इसके कारण प्रतिदिन विवाहित महिलाओं को प्रताड़ित किया जाता है, कभी आग से जलाकर, तेजाब से जलाकर, कभी गला दबाकर तो कभी गला रेतकर मार दिया जाता है।

विधवाओं की स्थिति चिंतनीय है। समाज में उन्हें हेय दृष्टि से देखा जाता है। उनपर अनेक प्रकार की पाबंदियाँ लगाई जाती हैं। उनके पुनर्विवाह में अनेक सामाजिक अड़चने आती हैं।

आज नैतिक शिक्षा की कमी के कारण अपराधों में वृद्धि हो रही है। शिक्षा में चरित्र-निर्माण का अभाव है। ऐसे भी पुरुष आज हैं जो दूसरी शादी करने के लिए अपनी पत्नी को किन्नर बताकर घर से निकाल रहे हैं।

आज हर शहर में चारों ओर लड़कियों से संबंधित विज्ञापन नजर आते हैं। सिनेमा और टीवी दिनोदिन लड़कियों के शरीर को अधिक से अधिक नंगा दिखाने में लगे हैं।

दरिन्दों के अपराध से अपनी बेटियों को बचाने के लिए गरीब

माँ-बाप अपनी नाबालिग बेटियों की भी शादी करने के लिए तैयार हो जाते हैं।

गाँवों में जादू-टोने के नाम पर गरीब बेसहारा महिलाओं को टोनही, डायन आदि बताकर उनपर हमला किया जाता है। टोनही, डायन के नाम पर उन्हें हर तरह से प्रताड़ित किया जाता है। ऐसे प्रताड़ना के मामले बिहार, झारखण्ड, ओडिशा, पश्चिम बंगाल, मध्यप्रदेश और छत्तीसगढ़ में अधिक होते हैं। यह शुभ संकेत है कि महाराष्ट्र सरकार ने जादू-टोना के विधेयक को लागू कर दिया है। महाराष्ट्र अंधविश्वास विरोधी कानून बनाने वाला देश का पहला राज्य बन गया है। चमत्कार के नाम पर किसी को धोखा देना, उससे ठगी करना, किसी को भूत-प्रेत के नाम पर बांधकर पीटना, इस तरह के अपराधों के लिए छह माह से लेकर सात वर्ष तक जेल की सजा के साथ 5000 से लेकर 50000 तक के जुर्माने का प्रावधान किया गया है।

आज महिलाओं के खिलाफ हो रही आपराधिक घटनाओं में दिन-प्रतिदिन बढ़ोतरी हो रही है। अब लोग सीमा लांघते जा रहे हैं। हर जगह असुरक्षा की भावना बढ़ी है। असुरक्षा ने अब उम्र की सीमाओं को तोड़ दिया है। ऐसी घटनाओं के शिकार हर उम्र, हर वर्ग, हर जाति और हर धर्म के लोग हो रहे हैं। ऐसा कोई भी दिन नहीं होता, जिसमें दुष्कर्म, हत्या, अपहरण और स्त्रियों के शोषण की खबर अखबार में नहीं होती है। न जाने क्यों लोगों में जागरूकता के बदले ज्यादा जुर्म करने की क्षमता बढ़ती जा रही है। अपने घर की औरतों को लोग सम्मान की दृष्टि से देखते हैं पर दूसरे घर की स्त्री को वही दर्जा लोग क्यों नहीं दे पाते हैं।

आज आम राय यही है कि अपराध की घटनाएँ इसलिए नहीं रुक रही हैं क्योंकि बलात्कारी को या तो दण्ड नहीं मिलता है और यदि मिलता भी है तो देर से और अपराध की तुलना में अपर्याप्त।

दामिनी की घटना से गाँव की महिलाओं में भी अपनी सुरक्षा और अस्तित्व की रक्षा का भय समाया हुआ है। उन्हें भी गाँव से बाहर

जाना पड़ता है। पढ़ने-लिखने और नौकरी करने वाली तथा घर से बाहर निकलने वाली लड़कियों के दिल में भी इस घटना ने दहशत पैदा कर दी है। आज की स्थिति में महिलाओं और छात्राओं को भयमुक्त बनाना, उनकी सुरक्षा, गरिमा और अस्तित्व की रक्षा करना चुनौतीपूर्ण है। यह भी सोचना होगा कि महिलाओं की गरिमा और सुरक्षा सिर्फ कानून और पुलिस की निगरानी के भरोसे नहीं छोड़ी जा सकती है, बल्कि उस परिवेश पर भी प्रश्न उठता है जो परिवेश स्त्री को एक 'देह' और 'देह' को उपभोग की वस्तु के रूप में मानता है। पुरुष की सोच में यह बात पूर्ण रूप से बैठी है कि स्त्री का शरीर उसके इस्तेमाल की चीज है।

इस इक्कीसवीं सदी में यह कैसी त्रासदी है कि महिलाओं के स्वास्थ्य के साथ भी व्यापक रूप से बेइंसाफी की जा रही है। दुनिया में सबसे पवित्र व्यवसाय चिकित्सा को माना जाता है। प्रत्येक डाक्टर को इस पवित्र व्यवसाय की गरिमा को अक्षुण्ण बनाए रखना उनका दायित्व बनता है, किन्तु आज पूरे देश में चिकित्सा व्यवसाय में भी व्यापक पैमाने पर अनैतिकता, मूल्यहीनता और सांस्कृतिक शून्यता प्रवेश कर गई है। आज से कुछ दिन पूर्व सभी प्रांतों में खासकर गांवों में महिलाओं के गर्भाशय निकालने का धंधा जमकर चला। 20-25 हजार कमाने के चक्कर में, कैंसर का भय दिखाकर किसी भी महिला का गर्भाशय निकाल लिया जाता था। इस खेल में गांवों से लेकर शहर के बड़े नर्सिंग होम तक में एक बड़ा रैकेट काम कर रहा था। सामान्य इंफेक्शन पर भी इन्हें कैंसर का भय दिखाया जाता था और सर्जरी की सलाह दी जाती थी। 20-25 वर्ष की युवतियों पर भी डाक्टर रहम नहीं करते थे। पीठ में दर्द होते ही सीधे सर्जरी कर गर्भाशय निकाल दिया जाता था। ऑपरेशन करने के पहले उन्हें यह भी गारंटी दी जाती थी कि ऑपरेशन के बाद उन्हें सभी प्रकार की तकलीफों से छुटकारा मिल जाएगा, कमर और पीठ का दर्द मिट जाएगा, लेकिन इससे कमर और पीठ का दर्द तो दूर नहीं होता था किंतु गर्भाशय जरूर निकाल दिया जाता था। वायोप्सी कराए बिना गर्भाशय निकालने से स्पष्ट है कि केवल पैसा कमाने के

लिए सर्जरी कर दी जाती थी। गर्भाशय महिलाओं के लिए प्रकृति की देन है। बिना वजह इसे विकृति मानकर निकाल देना गलत है। इससे कई तरह की बीमारियाँ पैदा हो सकती हैं।

राज्य की सरकारें महिलाओं के विकास के लिए योजनाएँ तो बना रही हैं लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाएँ इन योजनाओं से उचित लाभ नहीं ले पा रही हैं। बाल विवाह, अशिक्षा, दहेज प्रथा, कन्या भ्रूण हत्या आदि महिलाओं के शोषण जारी रखने के प्रमुख कारण हैं। गांवों में शादी-शुदा महिलाओं को भी घर से बाहर जाने की इजाजत आज भी नहीं है। इक्कीसवीं सदी में भी पुरुषों द्वारा पर्दा प्रथा का समर्थन हैरान करता है। महिला आरक्षण के कारण पंचायत में चुनाव तो महिलाएँ जीत जाती हैं, किंतु असली प्रतिनिधित्व तो उनके परिवार के पुरुष ही करते हैं। महिलाओं के प्रति मानसिकता बदलने की जरूरत है।

हमारा समाज रूढ़ियों से ग्रस्त है। बलात्कार की मारी लड़की के लिए 'रेप' शब्द एक कलंक के रूप में उसके जीवन से जुड़ जाता है। समाज और परिवार से उसे उपेक्षा मिलती है। माँ-बाप घुट-घुटकर जीते हैं और अपराध करनेवाला निर्भीक होकर घूमता है। आज देश भर में दामिनी के अपराधियों को कड़ी से कड़ी सजा देने की मांग की जा रही है। बलात्कार का शिकार होनेवाली लड़कियों को अपराधी समझने की मानसिकता को समाप्त करने की जरूरत है। इस ओर समाज और सरकार को कठोर कदम उठाना चाहिए। सभी पक्षों पर विचार करते हुए समस्या के मूल में जाना होगा। बलात्कार का शिकार महिलाओं के लिए यह सोच कि 'सब कुछ लुट गया' नहीं जुड़ना चाहिए। यदि नारी का शील इतना महत्वपूर्ण है तो पुरुष का शील क्यों नहीं? इस पर आवाज उठनी चाहिए। समाज के मूल्यों और मान्यताओं में बदलाव की जरूरत है।

नारी संबंधी भारतीय दृष्टिकोण को बदलने के लिए भारत सरकार को सारी पाठ्य पुस्तकों को बदल देना होगा। पाठ्य पुस्तकों में कोई भी ऐसा पाठ नहीं रहता है जो बच्चों में महिलाओं के प्रति आदर

एवं सम्मान पैदा कर सके। बचपन से ही नारी के प्रति बच्चों में सम्मान जागृत हो, इसके लिए परिवार में नारी के प्रति व्यवहार सम्मानपूर्ण होना चाहिए।

नया समाज बनाने के लिए एक नये सोच की परिकल्पना करनी होगी जिसमें महिलाएँ पुरुषों से किसी भी मामले में कमजोर नहीं मानी जायें। जब तक पुरुषों की सोच में बदलाव नहीं आएगा, महिलाओं को पुरुष जब तक सम्मान की दृष्टि से नहीं देखेंगे, सारे आन्दोलन व्यर्थ हो जायेंगे। इसके लिए पुरुषों के विवेक को जगाना होगा। जागरण का यह अभियान समाज द्वारा ही संभव है। पूरे समाज के आचार, विचार और व्यवहार को बदलना होगा। नैतिक मूल्यों को जगाना होगा। शिक्षा मानवीय मूल्यों और संस्कृति पर आधारित हो। नैतिक शिक्षा के बिना बेहतर समाज नहीं बन सकता है, चरित्र निर्माण नहीं हो सकता है "Character is the crown and glory of life." आज शिक्षकों की नैतिक गरिमा में कमी आई है, बच्चों को अच्छी शिक्षा के साथ-साथ अच्छी दिशा भी मिलनी चाहिए। पहली शिक्षा बच्चों को घर से ही मिलती है जिसे संस्कार कहते हैं। वे क्या कर रहे हैं, क्या पढ़ रहे हैं, इन सब पर अभिभावकों को नजर रखनी चाहिए। उनके लिए अभिभावक कुछ वक्त निकालें। उन्हें अच्छे-बुरे का फर्क समझावें।

यह सही है कि कानून बनाने और इसे लागू करवाने की जिम्मेवारी सरकार की है लेकिन सामाजिक मूल्यों और मान्यताओं का बदलाव समाज के हाथ में है, हमारे हाथ में है। न्याय की एक प्रक्रिया समाज से भी शुरू होनी चाहिए। सबसे पहले यह शुरुआत परिवार से ही होनी चाहिए और साथ-साथ नारी के प्रति दृष्टिकोण में बदलाव की भी शुरुआत होनी चाहिए। लड़ाई उन रूढ़ियों, गलत परम्पराओं और अंधविश्वासों के खिलाफ भी होनी चाहिए जिनके कारण नारी को समाज में दूसरे दर्जे के नागरिक की जगह मिली है। आज नारी शक्ति को रचनात्मक बनाना होगा, महिलाओं में भी आत्म सुरक्षा के गुण विकसित होने चाहिए।

औरतों के साथ अपराध की घटनाओं को हमारे द्वारा पाश्चात्य संस्कृति को अपनाए जाने को कुछ लोग स्वीकार कर रहे हैं। लेकिन इसके लिए मूल्यांकन करना होगा। किसी को दोषी ठहराना उचित नहीं। जब इन्द्र ने छलपूर्वक गौतम ऋषि की पत्नी अहल्या के साथ शारीरिक संबंध स्थापित किया तो क्रुद्ध ऋषि ने अपनी पत्नी को श्राप दे दिया, इसी प्रकार जब रावण ने सीता का हरण कर लिया तो श्रीराम ने सीता को वनवास की कठोर सजा दी। परशुराम ने तो अपनी माता की हत्या केवल इसलिए कर दी क्योंकि उनके पिता ने उनकी माता को व्यभिचारिणी कहा था। ब्रह्मा भी स्वयं अपनी मानस पुत्री सरस्वती पर मोहित हो गए थे। कहने का तात्पर्य यह है कि दुष्कर्म की घटनाओं के मूल में भारतीय संस्कृति ही है, पाश्चात्य संस्कृति नहीं। भारतीय संस्कृति ने कभी भी महिलाओं को सम्मानपूर्ण स्थान दिया ही नहीं।

दिल्ली की इस घटना से (निर्भया) इस महान लोकतांत्रिक देश को दुनिया भर में शर्मिंदा होना पड़ रहा है। इस घटना से सीख लेकर समाज, शासन और प्रशासन को ऐसी व्यवस्था बनानी होगी जिसमें नारी को प्रताड़ित करने वाले दरिन्दों के लिए कहीं जगह न हो। शासन इस घटना के दिन को 'राष्ट्रीय महिला सुरक्षा दिवस' के रूप में मनाते हुए महिलाओं की सुरक्षा का संकल्प ले।

आम लड़कियों को बसों में, ऑटों में, सड़कों पर छेड़खानी और यौन-उत्पीड़न का सामना करना पड़ता है लेकिन बचपन से ही चुप रहने की घुट्टी पीते रहने के कारण वे चुप रह जाती हैं। अब इस चुप्पी को तोड़ने की जरूरत है। इसके लिए सख्त कानून के साथ-साथ मानसिकता में बदलाव की भी जरूरत है, तभी चुप्पी की आदतें बदलेंगी। इसके लिए बचपन से ही बच्चों में श्रेष्ठ संस्कार के बीज बोने होंगे। माता-पिता का दायित्व बनता है कि वे अपने पुत्रों को संस्कारी बनाएँ। लड़कियों एवं औरतों के प्रति उनमें आदर-भाव विकसित करावें। लड़कियों की तरह लड़कों को भी कोमल और संवेदनशील बनने की शिक्षा देनी चाहिए।

गैंगरेप इस देश के लिए शर्मनाक ही नहीं अभिशाप भी है। इसे

रोकने के लिए गंभीरता से विचार करना होगा। सर्वप्रथम हमें पश्चिमी सभ्यता वाली पोशाकें जो सिर्फ अंग प्रदर्शन करने वाली ही नहीं बल्कि भारतीय सभ्यता, संस्कृति को तार-तार करने वाली पोशाकें हैं, का मोह त्यागना होगा और भारतीय सभ्यता-संस्कृति के अनुरूप पोशाक को अपनाना होगा।

बलात्कारी को खुले-आम समाज द्वारा समाज के बीच शर्मसार किया जाए। सख्त कानून बनने से समाज में बढ़ रहे दानवों में भय का संचार होगा। आज पुलिस की छवि ठीक नहीं है। ईमानदार पुलिस व्यवस्था की आवश्यकता है। पुलिस को राजनैतिक प्रभाव से मुक्त रखना होगा। पुलिस की संख्या आवश्यकतानुसार बढ़ाई जाए। विशिष्ट व्यक्तियों को सुरक्षा देने के लिए एक ही पुलिस कर्मी काफी है। उनको सुरक्षा देने के बजाय जनता के लिए ज्यादा से ज्यादा पुलिसकर्मी उपलब्ध होने चाहिए।

ईमानदार पुलिस उतनी ही आवश्यक है जितना रोटी, कपड़ा और मकान। State security commission का गठन किया जाय। पुलिस में सुधार के साथ-साथ न्याय प्रणाली में भी सुधार की आवश्यकता है। अपराध रोकने के लिए ईमानदार, कड़क अधिकारियों को महत्वपूर्ण पदों पर बैठाकर उनके मनोबल को बढ़ाने की सख्त जरूरत है।

आज बढ़ता उपभोक्तावाद, सिनेमा, टी.वी. का प्रभाव हमें सिर्फ दैहिक सुख और दैहिक सौन्दर्य की ओर ले जा रहा है। यह सत्य है कि परिवर्तन एक शाश्वत सत्य है। लेकिन यह परिवर्तन कहीं बदलाव और आधुनिकता के नाम पर हमें अंतहीन अंधेरी गलियों में तो नहीं ले जा रहा है ? गहन विचार करने की जरूरत है।

कानून को समय के साथ मजबूत बनाना है। कानून का पालन करना समाज की अपनी जवाबदेही है। इसके लिए समाज को जागरूक होना होगा। हमें बदलना होगा परिवार की संरचना को, समाज की प्रवृत्ति को। हम बेटियों के जन्म पर भी बेटों के जन्म की तरह खुशियाँ मनाएँ। हमें एक सख्त कानून ही नहीं, हमारे सोच में बड़े बदलाव की

आज जरूरत है। कानून और अदालत एक समाधान जरूर है। बलात्कार की घटनाओं को रोकने के लिए नीति निर्माताओं और समाज दोनों को अपनी-अपनी जिम्मेदारियों के प्रति ईमानदारी बरतने की जरूरत है। स्त्री सशक्तीकरण रचनात्मक सोच की दरकार है।

परम्परा के नाम पर पहनाई गई बेड़ियों से आज समाज को ही नारी को मुक्त करना है। समाज ने ही तो ये बेड़ियाँ नारी को पहनायी है। जब तक नारी के प्रति समाज की दृष्टि नहीं बदलती है, इस स्थिति में अपेक्षित बदलाव नहीं आएगा। पुरानी सड़ी-गली मान्यताओं को समाप्त करने से ही समाज में बदलाव आयेगा।

कविवर सुमित्रानंदन पंत की पंक्तियां इस संदर्भ में उद्धृत करने का लोभ संवरण नहीं किया जा सकता

"गा कोकिल बरसा पावक कण
नष्ट-भ्रष्ट हो जीर्ण पुरातन
ध्वंस-भ्रंश जग के जड़-बन्धन।
गा कोकिल बरसा पावक-कण।"

■

कोपलान्तक युग (भ्रूण हत्या)

21वीं सदी के आधुनिक और तकनीक युग में भी कन्या भ्रूण हत्या जैसी तुच्छ मानसिकता समाज के लिए अभिशाप बनकर उभर रही है। हमारे यहाँ कन्या के जन्म को लक्ष्मी के आगमन के रूप में माना जाता है, किंतु पितृसत्तात्मक मानसिकता की जड़ें इतनी गहरी हैं कि पुरानी प्रथाओं और परम्पराओं में पुरुषों की सर्वोच्चता को बताकर महिलाओं के मानव अधिकार का हनन करने के अलावा उनके साथ भेद भाव किया जा रहा है। पितृसत्तात्मक मानसिकता के कारण ही महिलाओं के खिलाफ अपराधों में बढ़ोतरी हुई है।

आज के समाज में भ्रूण हत्या एक गंभीर समस्या है। हम अपनी बेटियों को इतना बोझ मानते हैं कि उन्हें हम धरती पर आने से पहले ही मार देते हैं।

भारतीय परिवारों में पुत्र मोह एक स्वाभाविक प्रवृत्ति है, लेकिन पुत्र प्राप्ति की चाह में बेटी के जन्म लेने के अधिकार को छीन लेना क्या उचित है?

आंकड़ों से पता चलता है कि दिन प्रतिदिन स्त्री पुरुष अनुपात घट रहा है। सम्पन्न और विकसित राज्यों जैसे पंजाब, हरियाणा में स्थिति भयावह है। कन्या भ्रूण हत्या का समाज पर काफी बुरा असर पड़ रहा है। स्त्री पुरुष के अनुपात के घटने के साथ ही समाज में दुष्कर्म,

यौन शोषण, छेड़ छाड़, महिला शोषण की घटनाएँ बढ़ती जा रही हैं।

भारत चयनात्मक गर्भपात और चयनात्मक शिशु हत्याओं का गढ़ रहा है। यदि आंकड़ों को देखा जाय तो सिर्फ अपने देश में 2011 में सात लाख कन्याओं की भ्रूण हत्या की गई है। 2011 की जनगणना के अनुसार पुरुषों की तुलना में महिलाओं की आबादी 3.08 प्रतिशत कम है। प्रति हजार पुरुषों पर 2009 में महिलाओं की संख्या 972 थी, जो 2011 में घटकर 940 हो गई। राष्ट्रीय जनसंख्या आयोग के द्वारा 2028 तक इसके 930 हो जाने का अनुमान लगाया गया है। बाल लिंगानुपात में 1961 के बाद से लगातार गिरावट जारी है और यह 2011 में घटकर 914 तक पहुँच गया है। इसका मुख्य कारण सामाजिक रीति रिवाज, बालिकाओं के प्रति दुर्भाव, कन्या भ्रूण हत्या, बेटों की चाह, अशिक्षा, शिशु एवं मातृत्व मृत्यु दर अधिक होना तथा गरीबी आदि है। कुछ राज्यों में जैसे केरल 1084, पांडिचेरी 1038, तमिलनाडु 995 प्रति हजार पुरुषों पर भले ही लिंगानुपात अधिक है लेकिन ज्यादातर राज्यों में स्थिति भयावह है। एक अनुमान के मुताबिक अगले 20 वर्षो में एक करोड़ बेटियों को जन्म के पहले ही मार दिया गया है, जिसकी मुख्य वजह नैतिकता का पतन, सामाजिक, आर्थिक स्तर में परिवर्तन तथा उन्नत होता विज्ञान है। सरकार को इस संबंध में नीतियों में समय के साथ परिवर्तन करना चाहिए ताकि महिला जगत को नाश होने से बचाया जा सके। पुरुषों की तरह महिलाओं को भी जन्म लेने और जीने का अधिकार है। इस अधिकार से वंचित होने पर नारी जाति का नाश हो जाएगा और सृष्टि रुक जाएगी।

महिलाओं के प्रति बढ़ते अपराध और कन्या भ्रूण हत्या को रोकने के लिए सरकार द्वारा नित नए कानून बनाए जा रहे हैं। केन्द्र सरकार ने 'पीएनडीटी एवं प्रीनेटेल डायग्नोस्टिक तकनीक' में सख्त बदलाव करते हुए भ्रूण परीक्षण करानेवाले सोनोग्राफी सेंटर तथा डाक्टर

का रजिस्ट्रेशन रद्द करने का प्रावधान किया है। ऐसे मामलों में अधिकतम 5 साल की सजा का भी प्रावधान है।

स्वास्थ्य विभाग के अनुसार पिछले पांच सालों में एक लाख अस्सी हजार तीन सौ एक गर्भपात के मामले सामने आए हैं। बेवजह गर्भपात कराना कानूनन अपराध है। नियमानुसार कुछ परिस्थितियों में गर्भपात कराया जा सकता है, जैसे जन्म लेने वाले बच्चे में कुछ विसंगतियां हो या जन्म लेने के दौरान जच्चा बच्चा को कोई खतरा हो। दिल्ली की सड़क पर हर तीसरे दिन लावारिस बच्चियां पड़ी मिलती हैं। आंकड़े बताते हैं कि हर तीसरे दिन किसी ने किसी अस्पताल के पास, कहीं कूड़ेदान में, सड़क के किनारे नवजात बच्चियां पड़ी हुई मिल जाती हैं। इन बच्चियों को अनाथालय के हवाले कर दिया जाता है। इसमें नवजात से लेकर पांच साल तक की बच्चियों की संख्या ज्यादा है। उन मांओं को भी क्या कहा जायेगा जो अपनी बच्ची को कूड़ेदान और बाथरूम के नजदीक फेंककर भाग जाती हैं।

जयपुर में आये दिन सड़कों पर इधर उधर लावारिस बच्चियां मिलती हैं। ऐसे मामलों की जांच दस दिनों में पूरी कर किशोर न्याय अधिनियम के तहत पुलिस को दत्तक ग्रहण एजेन्सी को देनी पड़ती है। उसके बाद गोद लेने की प्रक्रिया शुरू हो सकती है, लेकिन यह जांच महीनों में भी पूरी नहीं हो पा रही है ऐसी बच्चियाँ इसलिए गोद नहीं ली जा पा रही हैं क्योंकि उनकी अंतिम रिपोर्ट पुलिस ने नहीं दी है।

अब तो बेटे की चाह में गर्भवती महिलाओं का खून अमेरिका भेजा जा रहा है। हिन्दुस्तान से काफी तादाद में ब्लड सैम्पल्स अमेरिकी लैबों में भेजे जा रहे हैं। ये सैम्पल्स उन गर्भवती महिलाओं के हैं जो अपने होने वाले बच्चे के बारे में पता लगाना चाहती हैं कि वह लड़का है या लड़की। गुपचुप ढंग से काफी पैसे खर्च करके इन सैम्पलों को अमेरिका भेज रहे हैं। विदेशी लेबोरेटरी बारह दिन में टेस्ट का रिपोर्ट

भेज देता है। इस प्रकार भारत में लिंग जांच को गैर कानूनी बना देने के बाद, अमीर लोगों ने कन्या भ्रूण हत्या का नया तरीका खोज निकाला है। चूँकि यहाँ लिंग जांच गैरकानूनी है, इसलिए कानून से बचने के लिए ऐसा किया जा रहा है। इस टेस्ट का नाम है 'फीटल डीएनए टेस्ट'। जो दम्पत्ति अमेरिका जाने का खर्च उठा सकते हैं, वो फ्लाइट पकड़ते हैं और खून का सैम्पल देकर तुरत लौट आते हैं। कुछ ऐसे भी लैब हैं जो सैम्पल भेजने के लिए 'ब्लड कलेक्शन किट' का इस्तेमाल करते हैं।

विदेशों में भी अब कन्या भ्रूण हत्या हो रही है। भारत की तरह अल्बानिया और अन्य एशियाई देशों में भी कन्या भ्रूण हत्या हो रही है, यदि यही सिलसिला रहा तो भविष्य में स्थिति गम्भीर हो जायेगी। वर्तमान में अल्बानिया में 100 लड़कियों पर 112 लड़के हैं। संयुक्त राष्ट्र के रिपोर्ट के मुताबिक चीन, भारत और वियतनाम में लिंगानुपात अधिक बिगड़ा हुआ है। अल्बानिया में तो अवॉर्शन की कानूनी इजाजत भी दी गई है। अल्बानिया, अर्मेनिया और अजरबैजान जैसे देशों में स्थिति गम्भीर है।

गिरते लिंगानुपात से चिन्तित सुप्रीम कोर्ट ने सरकार से कहा कि वह लोगों को शिक्षित करे, जागरूकता अभियान चलाये जिससे लड़कियों के प्रति सामाजिक सोच में बदलाव आवे।

आज महिलाएँ साक्षरता में भले ही आगे आ गई हैं लेकिन उनकी संख्या दिन प्रतिदिन घटती जा रही है। भ्रूण हत्या गैरकानूनी है। इसे रोकने के लिए केन्द्र और राज्य सरकार ने कड़े कानून लागू किए हैं। किसी भी क्लिनिक, संस्था, अस्पताल में लिंग परीक्षण करना कानूनी अपराध है। इसका उल्लंघन करने पर तीन वर्ष की सजा और दस हजार का जुर्माना किया जा सकता है। गर्भ में पल रहे भ्रूण की हत्या करना उसके जीवित रहने के मौलिक अधिकार का हनन है।

यह जानते हुए कि लिंग जांच कानूनी अपराध है फिर भी

डॉक्टर धड़ल्ले से लिंग जांच कर रहे हैं। इसलिए भ्रूण हत्या रोकने के लिए अल्ट्रासाउण्ड तथा अन्य तकनीकों पर नजर रखनी होगी ताकि इनका सही प्रयोग हो।

भ्रूण हत्या रोकने के लिए, बेटियों को बचाने के लिए सरकारी और गैर सरकारी स्तर से अपने अपने ढंग से हर संभव कोशिश की जा रही है। कोई अधिकारों का इस्तेमाल कर रहा है तो कोई लोगों को जगाने का काम कर रहा है। इसमें सफलता भी कुछ कुछ मिल रही है।

आमिर खान का टीवी शो 'सत्यमेव जयते' की पहली कड़ी जो 6 मई 2012 को प्रसारित हुआ था उसमें आमिर ने भ्रूण हत्या मुद्दे को उठाया है। इस मुद्दे को उठाकर आमिर ने लोगों को नींद से जगा दिया है। यह शो सामाजिक और पारिवारिक बुराईयों के खिलाफ क्रांतिदूत बनकर आया है। समाज में लम्बा और सकारात्मक बदलाव इस शो के माध्यम से आया है। इसमें मधुर संगीत का भी समावेश किया गया है ''ओरी चिरैया, नन्हीं सी चिड़िया'' जैसे अच्छे गानों के माध्यम से आमिर खान ने हमारी आत्मा को जगाने का प्रयास किया है। उनका कहना है कि हर बदलाव की शुरुआत घर से ही होती है। समाज की गम्भीर समस्याओं को पेशकर इन्होंने सबकी सोई हुई भावनाओं को झकझोर दिया है। आमिर को दर्शकों से बेहतरीन रिस्पॉन्स मिला है। देश की प्रथम आइपीएस अधिकारी किरण बेदी ने इनकी बहुत प्रशंसा की और कहा कि आमिर ने समाज की सच्चाई सामने लाकर रख दी है। आमिर खान के इस शो के प्रभाव से राजस्थान के मुख्यमंत्री ने सोनोग्राफी सेंटर को नोटिस भेजा और कन्या नीति बनाने का भी एलान किया।

मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री ने 65 नर्सिंग होम का लाइसेंस रद्द कर दिया और आमिर खान को अपने अभियान 'बेटी बचाओ' से जुड़ने का न्योता दिया।

आमिर ने अपने शो में पंजाब के एक गांव का उदाहरण दिया

है, जहां सारे लोगों ने मिलकर कन्या भ्रूण हत्या को नकारा और कुछ ही वर्षों में उस कस्बे में पुरुष नारी अनुपात समान हो गया। सोच में परिवर्तन लाने से, ज्योत से ज्योत जलाना संभव होगा। परिवर्तन के लिए सरकार की पहल का इंतजार व्यर्थ है। हृदय परिवर्तन से बदलाव आ सकता है। हर व्यक्ति अपनी जवाबदेही समझकर स्वयं प्रेरणा से आगे आवे। यदि हम सभी अपने दायित्वों को समझकर इस अभिशाप को दूर करने का संकल्प लेंगे तो कुछ तो बदलाव और सुधार होगा ही।

मध्यप्रदेश के चंबल इलाके के मुरैना और भिण्डे में बेटियों के जन्म को वर्षो से अभिशाप माना जाता है। बेटियों को जन्म से पहले या तो गर्भपात करा दिया जाता है या उन्हें जन्म के बाद मार दिया जाता है। यही कारण है कि यहां बेटियों की संख्या का अनुपात राज्य के अन्य जिलों के मुकाबले सबसे कम है। यहां 1000 बालकों पर 912 लड़कियाँ हैं और मुरैना में 1000 पुरुषों पर 825 तथा भिण्डे में 835 महिलाएँ हैं। यह स्थिति चिंताजनक है।

आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं के सहयोग से मुरैना और भिण्डे में 'मुट्ठी बांधो बहना' नाम से 'जन-जागृति दल' बनाए गए हैं। इनकी ओर से महिलाओं को संदेश दिया जा रहा है कि बेटियों को न मारें और न ही ऐसा अपराध करने में किसी का साथ दें। ये गीत संगीत, नाटक के जरिए महिलाओं को बेटी का महत्व बतलाती हैं। यह जन जागृति दल महिलाओं को संदेश देती हैं कि बालिकाएं रहेंगी तो सृष्टि बचेगी। गीत संगीत के जरिए यह जन जागृति दल महिलाओं को उनका अधिकार बताती हैं और बेटियों को बचाने का संदेश देती हैं।

मध्यप्रदेश में प्रति वर्ष 5 अक्टूबर से 11 अक्टूबर तक 'बेटी बचाओ सप्ताह' मनाया जाता है। राज्य के सभी जिलों में 5 अक्टूबर से 11 अक्टूबर तक विभिन्न प्रकार के कार्यक्रम आयोजित किये जाते हैं जिससे बेटियों के जन्म के प्रति मानसिकता में बदलाव आवे तथा समाज

में सकारात्मक सोच पैदा हो। राज्य की सरकार ने सभी जिला अधिकारियों को निर्देश दिया है कि 'बेटी बचाओं' अभियान पूरे राज्य में जोर शोर से हो। सभी शासकीय कार्यक्रम के पहले सभी प्रतिभागियों द्वारा बेटी बचाने के संबंध में संकल्प लेना सुनिश्चित किया गया। बेटियों के संबंध में वहां एक गीत तैयार करवाया गया और प्रत्येक शासकीय कार्यक्रमों के आरम्भ में यह गीत प्रस्तुत किया जाना है।

राजस्थान के कई गांवों में लड़कियों को जन्म देना उनके माता पिता के लिए सुखद अनुभूति होने के बदले कमाई का एक जरिया बनकर रह गया है। यहां के सरकारी अस्पतालों में 'जननी सुरक्षा योजना' से मात्र 1400 रुपये पाने के लिए बेटियों को पैदा किया जाता है लेकिन रकम के हाथ लगते ही उन्हें मौत के घाट उतार दिया जाता है। अस्पताल से छूटते ही 'बच्ची की मृत्यु हो गई', ऐसा नवजात शिशु के अभिभावक बताते हैं, लेकिन छानबीन पर यह पता चला कि बच्चियों को जबरन मार दिया जाता है। यहां कई गाँवों में नवजात बच्चियों को मारने के लिए अफीम सुंघाने, गर्म रेत के गड्ढ़े में दफन करने या गर्म पानी में डूबोने की अमानवीय हरकत की जाती है। अस्पताल में न तो बच्चियों के जन्म संबंधी कोई ब्योरा है और न बच्चियों को जन्म देने वाली माताओं के स्वास्थ्य जांच का कोई रिकॉर्ड उपलब्ध है।

महाराष्ट्र में 2011 की जनगणना के अनुसार प्रति हजार लड़कों पर मात्र 883 लड़कियाँ हैं। महाराष्ट्र सरकार के अभियान के तहत 395 अल्ट्रासाउण्ड केन्द्रों को सील किया गया और 95 एमटीपी केन्द्रों से मान्यता छीन ली गई। अल्ट्रासाउण्ड केन्द्रों और डाक्टरों के क्लीनिकों की निगरानी बढ़ा दी गई।

करनाल की पूर्व डिप्टी कमिश्नर नीलम कासनी ने भ्रूण हत्या रोकने के लिए एक दिलचस्प प्रयोग किया। इसमें एक ही वर्ष में 813 से 870 तक लड़कियों का आंकड़ा बढ़ गया। एक बार उन्होंने 35 कि.

मी. लम्बी मानव श्रृंखला बना दी और पांच लाख लोगों को एक साथ भ्रूण हत्या नहीं करने की शपथ दिलाई। देश विदेश के मीडिया के लोगों का ध्यान इस ओर खींचा। साथ ही इन्होंने फोटोग्राफर एसोसिएशन को पाबंद किया कि वे दुल्हा दुल्हन को आठवां फेरा भी दिलावें। यह 'आठवां फेरा, आठवें वचन के लिए कि भ्रूण हत्या नहीं करेंगे।' एक बार उन्होंने 501 कन्याओं के पूजन का भी कार्यक्रम बना डाला। इसी विषय को लेकर इन्होंने स्कूलों में पेन्टिंग प्रतियोगिता, निबन्ध प्रतियोगिता और भजन मंडलियों का कार्यक्रम आयोजित करवाया। ऑटो चालक यूनियन, बार एसोसिएशन, सबने एक एक करके नीलम के सामने शपथ ली कि 'भ्रूण हत्या के मामले में न तो शामिल होंगे और न ही कोई सहयोग करेंगे।' सभी नीलम के साथ जुड़ने लगे और धीरे धीरे यह कारवां बनता गया

'हम अकेले ही चले थे, जानिवे मंजिल मगर
लोग सब आते गए, कारवां बनता गया'

रायपुर राजधानी में सप्ताह में दो दिन कहीं न कहीं भ्रूण हत्या रोकने की शपथ ली जाती है लेकिन यहां प्रतिदिन कन्याओं का कत्ल होता है।

पंजाबी समाज ने लिंग अनुपात के बढ़ते फासले को देखते हुए एक सख्त पहल की है। कन्या भ्रूण हत्या करने वालों का समाज में 'हुक्का पानी' बंद करने का दृढ़ निश्चय किया गया, साथ ही यह भी निर्णय लिया गया कि ऐसे लोगों का सामाजिक बहिष्कार किया जाय।

सबसे दुखद तो यह है कि जगत जननी जानकी की धरती पर बेटियों की संख्या लगातार घट रही है, जिसकी गणना शक्तिपीठों में होती है, मतलब नारी शक्तिरूपा है और इसी से हमें ऊर्जा प्राप्त होती है। इसी मिथलांचल में अब भ्रूण का मिलना आम बात है।

लुधियाना की प्रकाश कौर के पास 60 70 ऐसी बेटियां हैं,

जिन्हें उन्होंने सड़क, नाले और कूड़े के ढ़ेर से प्राप्त किया है। इन बेटियों को बड़े प्यार से, बड़े अच्छे माहौल में वह पाल रही हैं। लड़कियों की शादी ब्याह भी करा रही हैं।

गुजरात के बड़ोदरा की शीतल पांड्या स्केटिंग के जरिए लोगों में बेटी बचाने का संदेश दे रही हैं। वह हजारों कि.मी. स्केटिंग के जरिए भारत की लाखों लड़कियों में जज्बा और जोश पैदा करने का अनूठा कार्यक्रम चला रही हैं।

बीकानेर की जिलाधिकारी आरती डोंगरा ने सोनोग्राफी के प्रवेश द्वार पर सीसी टीवी कैमरे लगाने के निर्देश दिए जिससे सोनोग्राफी कराने वाली महिला की तस्वीर दिखाई दे। सोनोग्राफी करने से पहले फोटो के साथ पहचान पत्र रोगी से प्राप्त कर उसे अपनी पंजी से चिपका कर रखने का निर्देश दिया। उन्होंने यह भी कहा कि बिना फोटो पहचान पत्र के सोनोग्राफी करते पाये जाने वालों के विरूद्ध सख्त कार्रवाई की जाएगी।

मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री का **'बेटी बचाओ'** अभियान की गूंज पड़ोसी देश पाकिस्तान भी जा पहुँची है। वहां के मीडिया वालों ने इसे बेहद सकारात्मक पहल बताया है। उन्होंने कहा कि यह पहल काबिलेतारीफ है। बेटियां कुदरत की अनमोल रत्न हैं। वास्तव में भारत और पाकिस्तान में बेटों को बेटियों से अधिक तरजीह देने की परम्परा है, जबकि हकीकत यह है कि बेटियां किसी मायने में बेटों से कम नहीं हैं बल्कि उनसे आगे ही हैं। वे बच्चों को जन्म देने के साथ साथ बाहर का काम भी करती हैं और घर के प्रति भी समर्पित रहती हैं।

अब तो शवयात्रा में भी बेटी का संदेश देने की अनोखी शवयात्रा देखने को मिलती है। शवयात्रा में शामिल लोगों के हाथों में 'बेटी बचाओ' के संदेश लिखी तख्तियां और बैनर होते हैं **'अगले जनम मुझे बिटिया ही दीजौ', 'बेटी है राष्ट्र का सम्मान'** जैसे संदेश

लिखी तख्तियां लिये लोग शवयात्रा में साथ साथ दिखाई पड़ते हैं।

भ्रूण हत्या एक ऐसा अपराध है जो घर में ही प्लान किया जाता है। इस पर रोक तभी लगेगी जब हम स्वयं अपने आपको बदलेंगे। बेटियों की घटती आबादी को रोकने के लिए भ्रूण हत्या रोकनी ही होगी। कानून को सख्ती से लागू करना होगा। लिंग भिन्नता और सामाजिक सोच पर आधारित सेमिनार का आयोजन होना चाहिए। वर्कशॉप, नुक्कड़-नाटक, वाद-विवाद, परिचर्चा और पोस्टर के माध्यम से लोगों को जागरूक करने की जरूरत है और इसमें हमेशा सकारात्मक पक्ष को रखा जाना चाहिए। दहेज रूपी सामाजिक कोढ़ को खत्म करना होगा। शिक्षा और रोजगार में बराबरी का अधिकार देकर महिलाओं को स्वावलम्बी बनाना होगा। धार्मिक अंधविश्वास, रूढ़ियों और पुरानी गलत मान्यताओं का त्याग करना होगा। इस कुप्रथा पर यदि अंकुश नहीं लगा तो पुरुषों को विवाह हेतु कन्याएं नहीं मिलेंगी और वंश रुक जायेगा।

समय बदल गया लेकिन अभी भी विचारों में पूरी तरह से बदलाव नहीं आया है। गाँवों की तुलना में शहरों में कन्या भ्रूण हत्या के आंकड़े अधिक हैं। शहरों में पढ़े लिखे लोगों के द्वारा ही भ्रूण हत्या कराई जा रही है जबकि गाँवों में अभी भी संस्कार है। वहां ऐसी घटनाएं कम होती हैं।

जो डाक्टर और क्लीनिक इस तरह के मामलों में शामिल हैं, उन्हें सजा मिलनी चाहिए। जो घरवाले जबरन महिलाओं को भ्रूण हत्या के लिए मजबूर करते हैं, उन्हें सामाजिक तौर पर कड़ी से कड़ी सजा मिलनी चाहिए।

अभी भी लोगों का यह सोच है कि वंश बेटों से ही चलता है। लड़की होगी तो दहेज देना होगा। जब तक यह मानसिकता नहीं बदलेगी बेटियां सुरक्षित नहीं हो सकतीं।

भ्रूण हत्या रोकने के लिए महिलाओं को आगे आना होगा। आसपास में भ्रूण हत्या होने वाली घटनाओं के लिए उन्हें आवाज उठानी होगी।

समाज के जड़ से इस कुरीति को समाप्त करने के लिए एक मुहिम चलानी होगी। 'बेटियों को जीने दो और कुछ करने दो', 'बेटियों को जीने का अधिकार है' इन नारों के साथ दृढ़ निर्णय लेने में जब तक महिलाए भागीदार नहीं होंगी, तब तक न तो बालिका भ्रूण हत्या पर पूरी तरह से रोक लग सकेगी, न ही बालिकाओं को उनका हक मिल सकेगा। सच यही है कि आज भी हालात में खास परिवर्तन नहीं हुआ है। आज भी लड़की पैदा होने पर घर में बड़े बुजुर्ग एवं स्वयं माँ बाप निराशा जाहिर करते हैं। ऐसा उन घरों में भी होता है जहां लोग पढ़े लिखे हैं। हमारी सामाजिक व्यवस्था ही ऐसी है। इसके बदलाव में लम्बा समय लगेगा। आज भी महिला अपनी इच्छा से बेटी को जन्म नहीं दे सकती, जबकि यह हक उसी का है। कोई भी मां अपनी कोख में पल रहे बच्चे को लिंग के आधार पर मार देना नहीं चाहेगी।

परिवार में बालिकाओं को महत्व तब मिलेगा जब समाज में महिलाओं का महत्व समझा जायेगा। एक पीढ़ी तकलीफों से गुजरती है तो दूसरी पीढ़ी की बात आती है, तो पहली पीढ़ी उसे तकलीफ देने में कमी नहीं करती है।

स्कूल में नामांकन के समय बेटों के लिए अभिभावक कोई समझौता नहीं करते लेकिन बेटी के मामले में उनका रुख बदल जाता है। बेटी पास के ही किसी स्कूल में पढ़ ले, उसका कॅरियर बने या न बने, उसे पोषक आहार मिले न मिले, इसकी परवाह कोई नहीं करता, लेकिन बेटे के लिए बढ़िया स्कूल, अच्छा कॅरियर, अच्छा खान-पान, उसके शौक, सभी बातों का ध्यान रखा जाता है। मां को बेटी के लिए भी बेटो की तरह ही दृढ़ फैसले लेने होंगे और यह तभी होगा जब निर्णय

लेने में मां की भागीदारी होगी।

बेटी की पढ़ाई पूरी होने से पहले ही उसकी शादी कर दी जाती है। मां को चाहिए कि वह अपनी बेटी को अपने पैरों पर पहले खड़ी होने दे, बाद में उसकी शादी करे। इस सम्बन्ध में मां को दृढ़ फैसला लेना चाहिए। ऐसा करने से आगे आने वाले समय में इससे बेटी भी प्रेरित होगी। वह भी अपनी संतान के लिए ऐसा ही सोचेगी। तभी दुनिया की आधी आबादी को उसके अधिकार से वाकिफ किया जा सकता है। बेटियों को यदि बेहतर जीवन और खुशहाल भविष्य देना है तो महिलाओं को अधिकारों की लड़ाई स्वयं ही लड़नी होगी।

अमीर घराने में जन्म लेने पर भी बेटियों के लिए जीवन जीना आसान नहीं है। उन्हें भी अनेक बाधाओं के खिलाफ संघर्ष करना पड़ता है। चुनौतियों से जूझकर ही वे अपने कॅरियर को दिशा दे पाती हैं।

सख्त कानून के बावजूद कन्या भ्रूण हत्या बड़े पैमाने पर हो रही है। इसका मुख्य कारण है कानून का सही ढंग से पालन नहीं होना। जो कानून को लागू करने वाले हैं, वे भी मानते हैं कि बेटों का महत्व बेटियों से अधिक है। यही कारण है कि इतने सालों से कानून बनने के बाद भी इसका कोई प्रभाव नहीं दिख रहा है। लिंग परीक्षण लोग केवल बेटों की चाहत में ही कराते हैं। भारत के बाहर भी जो अप्रवासी भारतीय हैं, उन्होंने भी अपनी मानसिकता नहीं बदली है। अमेरिका, चीन, यूरोप, ऑस्ट्रेलिया जैसे देशों में रहनेवाले भारतीय भी इसी मानसिकता के हैं, उन्हें बेटा जरूर होना चाहिए।

बेटा-बेटी में फर्क के पीछे महिलाओं का हाथ भी कम नहीं है। माताएं खुद अपनी बेटियों से ज्यादा तरजीह अपने बेटों को देती हैं।

बेटी बचाने के अभियान में डाक्टर प्रभावी कड़ी होते हैं। इस कार्य की सफलता में चिकित्सक को प्रभावी कड़ी बनाना होगा।

'बेटी पढ़ाओ बेटी बचाओ' योजना दिनांक 22.01.2015 को

हरियाणा के पानीपत में शुरू किया गया। बॉलीबुड अभिनेत्री माधुरी दीक्षित को इस अभियान का ब्रांड एम्बेसडर बनाया गया है। इसी दिन **'सुकन्या समृद्धि योजना'** की भी औपचारिक शुरुआत की गई।

बेटियों को सम्मान के नजरिए से देखा जाना चाहिए न कि कूड़े कचरे की तरह इन्हें फेंक दिया जाय। यह प्रसन्नता का विषय है कि अब पारम्परिक दकियानूसी से भारतीय समाज बदल रहा है। अब बेटियों का पालन पोषण प्यार से बेटों के समान किया जा रहा है और उन्हें भी बेटों के समान महत्व दिया जा रहा है। अब वे दिन लद गए जब लोगों को केवल बेटों की आस रहती थी। अब बेटियों को बोझ नहीं माना जाता है। बेटी परिवार की कड़ी होती है, समाज को एक अलग रूप देती है, घर की रौनक होती है। बेटा-बेटी के बिना परिवार अधूरा रहता है। दोनों लिंगों को बराबर का दरजा मिलना चाहिए।

जानकारी मिली है कि बिहार के भागलपुर में **'धरहरा'** नाम का एक गांव है। वहां पर बेटी पैदा होती है तो खुशियाँ मनाई जाती हैं और सागौन के पांच पेड़ लगाए जाते हैं। उनकी सोच है कि ज्यों ज्यों बेटी बड़ी होगी, पेड़ भी बड़े होंगे और बेटी की शादी उस पेड़ को बेचकर उसी पैसे से की जाएगी। यह प्रथा लगभग चालीस वर्षो से चली आ रही है। उस गाँव का लिंगानुपात भी सही है और पर्यावरण भी स्वच्छ है।

'जयापुर' नामक इसी तरह के एक और गांव का पता चला है, जो उत्तर प्रदेश में है। इस गांव में भी बेटी के जन्म लेने पर खुशियाँ मनाई जा रही हैं और पेड़ लगाए जा रहे हैं। यहाँ यह प्रथा तब शुरू हुई जब प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने बतौर सांसद के रूप में इस गांव को गोद लिया था। उन्होंने गांव वालों को बेटियों के पैदा होने पर **'बेटी पढ़ाओं बेटी बचाओ'** का संदेश दिया था। **'जयापुर'** वालों ने इस संदेश को अपने हृदय में बैठा लिया, इसे याद रखा और इस पर अमल किया। इसकी गरिमा को महत्व दिया और बेटी के जन्म लेने पर पांच सागौन

के पेड़ लगाने और जश्न मनाने का सिलसिला जारी कर दिया। वहां का पर्यावरण भी शुद्ध हो रहा है, लिंगानुपात भी सुधर रहा है।

यह संदेश अब दूसरे दूसरे गाँवों तक भी पहुँचने लगा है। गाँवों में काफी बदलाव देखने को मिल रहे हैं। बेटियों में आत्मविश्वास एवं पढ़ने का जज्बा बढ़ा है। बाहर पढ़ने के लिए भी बेटियां भेजी जा रही हैं। अभिभावकों में भी बदलाव आया है। पूर्ण विश्वास है इन दो गाँवों का संदेश पूरे देश में अवश्य पहुँचेगा और हमारी बेटियां सुरक्षित रहेंगी। घर की, समाज की, देश की ताकत इन बेटियों के वजूद से है।

कन्या भ्रूण हत्या को रोकने के लिए समाज में बेटियों के कम होते अनुपात की समस्या का समाधान केवल कानून बनाने से नहीं बल्कि हर इंसान को अपने सोच में परिवर्तन लाने से होगा।

बेटियों को बचाने के लिए महिला सशक्तीकरण से ज्यादा मानसिक सशक्तीकरण की जरूरत है। समय के साथ अब सबका नजरिया बदलने की जरूरत है। सभी माताओं से यही अपील है कि वे अपनी बेटियों को बेटों की तरह ही पालें पोसें और पढ़ा लिखाकर इंसान बनाएं। कन्या भ्रूण हत्या के जिम्मेदार, दहेज लोभी, दहेज दानव से समाज को मुक्त कराने का संकल्प लें और उन नन्हीं कलियों को इस दुनिया में आने दें जो भगवान की असीम कृपा से इस दुनिया में आना चाहती हैं। हम सभी संकल्प लें कि अभी से, इसी क्षण से कन्या भ्रूण हत्या को रोकने के लिए जो भी प्रयास संभव होंगे, हम करेंगे। घर घर यह संदेश पहुँचाकर लोगों को भ्रूण हत्या रोकने के प्रति जागरूक करेंगे, इस जघन्य अपराध से समाज को मुक्त करायेंगे, तभी एक खुशहाल भारत का निर्माण होगा।

इस कोपलान्तक युग को हमें वह दरवाजा दिखलाना ही होगा, जहां से निकलने पर यहां फिर कभी झांकने का नाम न ले। कवि दुष्यंत कुमार का शेर इस स्थिति पर बड़ा सटीक मालूम पड़ता है

"अब तो इस तालाब का पानी बदल दो,
ये कॅवल के फूल कुम्हलाने लगे हैं,
इस नयी तहजीब के पेशे नजर हम
आदमी को भूनकर खाने लगे हैं।"

■

बाल विवाह बनाम विधवापन

भारतीय इतिहास का मध्यकाल सामाजिक कुरीतियों का जनक रहा है। उस समय मूढ़ मान्यताओं, कुरीतियों, अन्धविश्वास, अज्ञान, शोषण से समाज जर्जर हो रहा था। स्त्रियों का कोई अस्तित्व नहीं था। उन्हें पुरुषों के नियंत्रण में रहना पड़ता था। पति की मृत्यु हो जाने पर उनकी चिता के साथ जीवित पत्नी को जल जाना होता था।

इस सामाजिक कुरीति को, दानवी प्रतिबन्ध को तोड़ने का प्रथम साहस महारानी दुर्गावती (गोडवाना रियासत की महारानी) ने किया। विवाह के दो वर्ष के बाद ही इनके पति का निधन हो गया। इनके पति के साथ साथ महारानी को भी उनके साथ जलाने का प्रबन्ध किया गया। रानी को जब पता चला तो उन्होंने चिता के साथ जलने से इन्कार कर दिया और कहा, ''मैं इस कायरतापूर्ण कार्य को करने के लिए बिल्कुल तैयार नहीं हूँ, कर्त्तव्य, मर्यादा और कुल की परम्पराओं के औचित्य का एक मात्र आधार विवेक है। पति के साथ जल जाना कायरता है। उनके सौंपे उत्तरदायित्व से भागने जैसा ही लगता है, मुझे उनके बनाये सुदृढ़ राज्य को और अधिक मजबूत और शक्तिशाली बनाना है।'' उन्होंने फिर सादा वेशभूषा धारण कर अपनी

सम्पूर्ण प्रतिभा, सम्पूर्ण क्षमता को राज्य के विकास में लगाया। इस प्रकार उन्होंने कई प्रतिबन्ध होते हुए भी यह सिद्ध कर दिया कि नारी शक्ति का साक्षात् अवतार है।

समृद्ध हिन्दू परिवार में जन्मी रमाबाई, जो अल्पायु में ही विधवा हो गई थीं। उन्होंने भी विधवा महिलाओं पर किये जाने वाले कठोर अत्याचारों को देखा, छोटी छोटी बच्चियों का कम उम्र में विवाह कर दिया जाना, छोटी उम्र में ही उनपर गृहस्थी का भार आ पड़ना, मासूम बच्चियों का असमय में ही मां बन जाना, जब चाहा तब पति का पत्नी पर अत्याचार, यह सब देखकर वह विह्वल हो गईं। उन्होंने घर घर घूमकर महिला मण्डली बनाई, नारियों की खोई हुई चेतना को जागृत किया। बाल विवाह के दुष्परिणामों को स्त्रियों के सम्मुख रखा और इन्हें धीरे धीरे समाप्त करने हेतु जागृत किया।

समाज में फैली हुई कुरीतियों, रूढ़ियों जैसे बहुपत्नी प्रथा, अनमेल विवाह, बाल विवाह, पर्दा प्रथा आदि के विरूद्ध तीव्र अभियान चलाया। श्रीमती पार्वती देवी, जानकी मैया, डा॰ मुथुलक्ष्मी ने भी अपना सारा जीवन गरीबों और असहायों की सेवा करने में लगा दिया।

रखमा बाई भी इस संघर्ष में पूर्ण रूप से जुड़ी थीं। उन्होंने भी बाल-बिवाह जैसी कुप्रथा को खत्म करने के लिए आवाज उठाई। उन्होंने खुद बाल विवाह जैसी कुप्रथा का सामना किया था। इनका विवाह 13 साल की उम्र में हो गया था, लेकिन इन्होंने इस विवाह को स्वीकार नहीं किया। रूढ़िवादियों ने इन्हें अपने पति को स्वीकार करने के लिए इनपर दबाव डाला, लेकिन रखमा बाई अपने निर्णय से नहीं बदलीं, उन्होंने अपने दम पर जीवन व्यतीत करने का फैसला किया। उनके इस संघर्ष ने देश की महिलाओं को बाल विवाह जैसी कुप्रथा का विरोध कर अपनी पहचान बनाने की प्रेरणा दी। कई महिला समाज सुधारक सामने आईं। स्वर्ण कुमारी देवी, सरला देवी चौधरानी, भगिनी निवेदिता, एनी

बेसेंट, सुशीला देवी, मैडम भीका जी आदि ने स्त्री उद्धार की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किये। इस प्रकार देश की अनेक महिलाओं ने इन कुप्रथाओं को दूर करने के लिए घोर संघर्ष किया।

राजा राम मोहन राय बहुत बड़े समाज सुधारक थे। इन्हें हिन्दू धर्म से अगाध प्रेम था। इन्हें पूर्ण विश्वास था कि प्राचीन आदर्शों पर चलने से ही समाज का कल्याण हो सकता है। मन्दिरों के देवदासी के नाम पर वेश्यावृत्ति, पुजारियों का अहंकार और शोषण, पशुबलि जैसी नृशंसता, हिन्दू धर्म में प्रचलित संकीर्णता को देखकर उन्हें बड़ा दुःख हुआ। इसी बीच उनके बड़े भाई की मृत्यु हो गई। परिवार के लोगों ने उनकी पत्नी को सती होने के लिए राजी कर लिया। बेचारी डरते-डरते पति की लाश पर बैठी, पर जैसे ही आग जलने लगी, वह पीड़ा से व्याकुल होकर चिता से उठ भागी। कुटुम्बी लोगों ने बांस से मार मार कर उन्हें चिता में झोंक दिया। कोई उनकी चीत्कार सुन न सके, इसलिए जोरों से ढ़ोल-बाजे बजने का प्रबन्ध कर दिया गया। उन दिनों बंगाल में सती प्रथा का बहुत जोर था। विधवाओं का भार वहन न करना पड़े, उनके पति की सम्पत्ति हड़पने का अवसर मिल जाए, इसी लालच में लोग बेचारी शोकाकुल विधवा को सती होने का उपदेश देते थे और यह भी समझाते थे कि जलने में कोई कष्ट नहीं होगा। विधवा द्वारा कमजोरी दिखलाने पर कटु वचन बोलते थे और चुप रह जाने पर स्वीकृति की घोषणा कर, उनके सती होने की तैयारी कर देते थे। मरने के पहले विधवा को नशीली चीजें खिला देते थे जिससे वह जलते समय कुछ बोल न सके। इन घटनाओं को जब राजा राम मोहन राय ने देखा तो उनकी आंखों से खून बरसने लगा। सती प्रथा के विरूद्ध उन्होंने घनघोर आन्दोलन किया। रूढ़िवादियों ने इनका विरोध किया, पर वह अपने कार्य में लगे रहे। उन्होंने देखा कि किस प्रकार भोली भाली स्त्रियों को उनके पति के मरने के बाद सती होने के लिए राजी किया

जाता है। धर्म के नाम पर इस नृशंसता के सम्बन्ध में काफी खोज बीन राजा साहब ने की और इस क्रूरता के छिपे रहस्यों का ऐसा दिल दहला देने वाला खोज पूर्ण चित्रण एक पुस्तक के रूप में प्रकाशित कराया कि पढ़नेवाले के पत्थर हृदय को भी पसीजना पड़ा। रूढ़िवादियों ने इनका फिर विरोध किया, किन्तु जनमत इनके पक्ष में था। समाज के गणमान्य लोगों ने सरकार से मांग की, कि इस नृशंसता के विरूद्ध कानून बनाया जाय। अंगरेजी सरकार मान गई और कानून बनाकर सती प्रथा को रोक दिया गया।

इस प्रकार सहस्त्रों विधवाओं को जीवित जला डालने के षड्यन्त्र से इस कानून के जरिए त्राण मिला। राजा साहब ने विधवा विवाह की आवश्यकता महसूस की। विधवा विवाह के पक्के समर्थक बने। उन्होंने **'विधवा विवाह मीमांसा'** नामक एक ग्रन्थ प्रकाशित किया जिससे स्पष्ट है कि विधवा विवाह प्राचीन परम्पराओं और शास्त्र मर्यादा के अनुकूल है। इससे लोगों की आँखें खुलीं और जाना कि यदि किसी विधवा का पुनर्विवाह कर दिया जाता है तो इसमें धर्म और शास्त्र का तनिक भी उल्लंघन नहीं होता है।

इस प्रकार राजा राम मोहन राय द्वारा प्रतिपादित इस तथ्य को धीरे धीरे जनता द्वारा स्वीकार किया गया और विधवाओं के मार्ग से एक बड़ी कठिनाई दूर हुई।

महर्षि कर्वे भी स्त्री शिक्षा, अनाथ विधवाओं के उद्धारक और विधवा विवाह के समर्थक थे। इन्होंने नारी वर्ग की जो दयनीय दशा देखी तो वे देश की बहनों और भाइयों के लिए कुछ करने के लिए व्याकुल हो उठे। महाराष्ट्र में प्रचलित बाल विवाह की कुप्रथा का शिकार वह स्वयं थे। 15 वर्ष की आयु में उनका विवाह हो गया। 26 वर्ष की उम्र में उनकी पत्नी का देहान्त हो गया। दो छोटे छोटे उनके बच्चे थे। उनके शुभ चिन्तकों द्वारा उन्हें पुनर्विवाह के लिए परामर्श दिया गया,

बल्कि बहुत दबाव दिया गया। इसपर उन्होंने घोषणा की कि वे विवाह करेंगे भी तो किसी विधवा स्त्री से। अपने दोनों बच्चों की समस्या हल करने के साथ साथ वे विधवाओं के उद्धार का भी श्रीगणेश करना चाहते थे। इसके लिए उन्हें घर में प्रचण्ड विरोध का सामना करना पड़ा। इन विरोधों के बावजूद आनन्दीबाई नामक एक सुशील विधवा से उन्होंने विवाह कर लिया। उन्हें अपने घर से निकाल दिया गया, लेकिन ये स्त्री उद्धार के काम में लगे रहे और ये इसी निष्कर्ष पर पहुंचे कि विधवाओं की दुर्दशा, उत्पीड़न, बाल विवाह कुप्रथा का मुख्य कारण स्त्री शिक्षा का अभाव है। उन्होंने 57 विधवाओं और 19 क्वारी कन्याओं को लेकर एक आश्रम की स्थापना की। यहां अनाथ विधवाओं, कन्याओं को शिक्षा के साथ साथ घरेलू धन्धों की भी शिक्षा दी जाने लगी।

ईश्वरचंद्र विद्यासागर ने विधवा विवाह पर लगे प्रतिबन्ध को समाप्त करने के लिए 1850 में आन्दोलन आरम्भ किया। उन्होंने भी विधवा विवाह को शास्त्र सम्मत ठहराया। 1856 में विधवा विवाह कानून लागू किया गया।

इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता है कि विधवाओं की स्थिति में काफी सुधार हुआ है, समाज में विधवाओं को बराबरी से जीवन यापन का हक मिले सामाजिक शोषण एवं भेद भाव नहीं हो, इसके लिए सरकार एवं गैरसरकारी संस्थाएं पूर्ण प्रयासरत हैं।

आज भी अनेक समुदायों में इनकी स्थिति चिंतनीय है। विधवाओं के पुनर्विवाह में अनेक अड़चनें आती हैं। इन्हें हेय दृष्टि से देखा जाता है, जबकि उनके विधवा होने में उनका कोई दोष नहीं है। उनपर अनेक प्रकार की पाबन्दियां लगा दी जाती हैं, जैसे सफेद वस्त्र पहनना, सादा भोजन करना आदि। किसी किसी समाज में उन्हें सिर मुड़ाने पर भी विवश किया जाता है। अकेली और लाचार महिला होने के कारण

उनका यौन शोषण भी होता है। घर में तो ऐसा होता ही है, यदि वे काम करने बाहर जाती हैं तो वहां भी उन पर बुरी नजर डालने वाले पुरुष कम नहीं होते हैं। पति की मृत्यु हो जाने पर परिवार में विधवा का कोई महत्व नहीं रह जाता है। मांगलिक अवसरों पर और त्योहारों पर उनकी उपस्थिति अशुभ मानी जाती है।

विधवाओं को कोई साज श्रृंगार की अनुमति नहीं होती है। उन्हें सादा जीवन जीने को बाध्य किया जाता है। घर में उन्हें उपेक्षा का सामना करना पड़ता है और बाहर असुरक्षा का। अनेक विधवाएं तो सड़कों पर अपना जीवन व्यतीत करती हैं। बड़े शहरों के फुटपाथ उन विधवा महिलाओं से भरे पड़े होते हैं जिन्हें घर से निकाल दिया जाता है।

जनगणना के आधार पर जारी की गई रिपोर्ट के अनुसार देश में महिलाओं की कुल आबादी में 34 लाख विधवायें हैं। इनमें कुछ अभावों में जीवन व्यतीत कर रही हैं, तो कुछ ऐसी भी हैं जो काम में लगी हुई हैं। 60 प्रतिशत से ज्यादा विधवाएं अशिक्षित हैं, 64 फीसदी की उम्र 60 वर्ष से ज्यादा है। ग्रामीण क्षेत्रों में इनकी संख्या ज्यादा है। 85 प्रतिशत विधवाओं की मौत का कारण अभावों (खान पान में कमी) का होना है। पुरुषों में विधुर मात्र 3 फीसदी हैं। 25 फीसदी विधवाएं ऐसी हैं जो घर से बाहर काम कर रही हैं। 1 फीसदी प्रोफेशनल कामों में लगी हैं, 5 फीसदी क्लर्क या हाउसकीपिंग जैसे कामों में लगी हुई हैं।

पूरे विश्व में '23 जून को अन्तर्राष्ट्रीय विधवा दिवस' मनाया जाता है। संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा इस संस्था को मान्यता प्राप्त है। ब्रिटेन के हाउस ऑफ लॉर्डस के सदस्य और ब्रिटेन में रहने वाले उद्योगपति श्री राज लूंबा ने अपनी माता और पिता की याद में 'लूंबा फाउंडेशन' की स्थापना की थी। 23 जून 1954 को उनकी माता विधवा हो गई थीं। लूंबा फाउंडेशन की स्थापना का उद्देश्य विधवाओं और

उनके बच्चों को बेहतर भविष्य की ओर अग्रसर करना है। संयुक्त राष्ट्रसंघ की मदद से इस संस्था ने विधवाओं पर एक विश्वव्यापी सर्वेक्षण कराया जिसे नाम दिया 'इनविजिबल फॉर्गोटन सफरर्स'। रिपोर्ट से पता चला कि विश्व भर में 245 मिलियन विधवाएं हैं, जिसमें 115 मिलियन गरीबी में जी रही हैं, भारत में यह संख्या 42.4 मिलियन है, अमेरिका में 13.6 मिलियन, जापान में 7.5, रूस और ब्राजील में क्रमशः 7.1 और 5.6 मिलियन है। 500 बच्चे इन विधवाओं पर आश्रित हैं, जिन्हें सही मार्गदर्शन नहीं मिल पा रहा है।

लूंबा फांउडेशन का उद्देश्य बेसहारा विधवाओं को सामाजिक और आर्थिक रूप से मजबूत बनाना है। इनके बच्चों की शिक्षा दीक्षा एवं देख-रेख सही ढ़ंग से हो, इस पर पूर्ण ध्यान देना है। अभी तक यह संस्था गरीब विधवाओं के 2000 बच्चों के लालन पालन की जिम्मेदारी पूरी कर चुकी है।

आगे इनका उद्देश्य है कि भारत के हर राज्य में कम से कम 100 बच्चों के भविष्य को बेहतर बनाना। इस संस्था ने वर्ष 2013 में भी भारत में रह रहीं 10000 (दस हजार) गरीब विधवाओं के कल्याण के लिए, उन्हें अधिकार सम्पन्न बनाने के लिए नई परियोजना शुरू की थी। इसके तहत इन महिलाओं को एक एक सिलाई मशीन तथा परिधान बनाने के लिए प्रशिक्षण दिया गया था। इससे उन्हें आर्थिक स्वतन्त्रता मिली और 10000 महिलाएं आर्थिक रूप से अधिकार सम्पन्न होने के साथ साथ अपने बच्चों को भी अच्छी तरह से पाल-पोस सकेंगी और शिक्षित कर सकेंगी। वर्ष 2014 में भी राज लूंबा द्वारा स्थापित एक चैरिटी ने भारत में रह रही 10000 गरीब विधवाओं के कल्याण के लिए 150000 डालर से अधिक राशि जुटायी है।

हाल ही में तमिलनाडु में विधवाओं की स्थिति पर विचार करने हेतु स्वयं सेवी संस्था 'यूएन महिला संगठन गिल्ड फॉर सर्विस' ने एक

सेमिनार का आयोजन करवाया था जिसमें विधवाओं के कल्याण से संबंधित सभी विषयों पर विचार किया गया। काफी संख्या में महिलायें एक जुट हुईं। साथ ही सरकार से आग्रह किया गया कि समाज में राजनीति एवं आर्थिक व्यवस्था में उन्हें भी समान अधिकार मिले, जिससे वे तमाम धार्मिक, रूढ़िवादी, रीतिरिवाजों के बंधन से मुक्त होकर पूरी आजादी के साथ अपना जीवन-यापन कर सकें।

आज विधवाओं की स्थिति में काफी बदलाव दिखाई दे रहा है। रूढ़िवादी समाज में विधवाओं को आमतौर पर मंदिरों में पूजा पाठ की इजाजत नहीं दी जाती है, लेकिन दक्षिण भारत में मंगलोर शहर में करीब एक शताब्दी पुराने हिन्दू मंदिर में विधवा महिला लक्ष्मी 67 साल की और इंद्रा 45 साल की, दोनों को पुजारी बनाया गया है। एक रूढ़िवादी समाज में पुजारी के रूप में इन महिलाओं की नियुक्ति किसी क्रान्ति से कम नहीं है। पूजा अर्चना शुरु करने से पहले इन्हें पवित्र चिह्न धारण करने के लिए दिए गए। इस समारोह में सभी धर्मो के सैकड़ों लोग सम्मिलित हुए। कुछ कट्टरपंथी लोगों ने इसका विरोध किया, किन्तु ज्यादातर लोगों ने इस सुधारवादी कदम का स्वागत किया।

वर्ष 2014 में मंगलोर स्थित एक मंदिर में पारंपरिक रीतियों को तोड़ते हुए दीवाली पर पाँच हजार से अधिक विधवाओं ने पूजा की। यह फैसला सभी समुदायों के औरतों को समाज की मुख्यधारा में लाने के लिए किया गया।

अब तो विधवा बहू अनुकम्पा की हकदार हो गई है। राजस्थान हाई कोर्ट का इस संदर्भ में ऐतिहासिक फैसला हुआ है।

भारतीय समाज में बहू को भी बेटी के रूप में ही स्वीकार किया जाता है। डॉटर-इन-लॉ (बहू) शब्द का अर्थ यही है, इन-लॉज (ससुराल वाले) उसे डॉटर (बेटी) के रूप में स्वीकार करते हैं।

राजस्थान हाईकोर्ट ने एक विधवा बहू को अनुकंपात्मक

नियुक्ति 1996 के अन्तर्गत ससुर के आश्रित के तौर पर सरकारी नौकरी पाने का हकदार माना है।

'सुलभ इंटरनेशनल'' नामक एक गैर सरकारी संस्था द्वारा विधवाओं की दयनीय स्थिति को सुधारने और उन्हें समाज की मुख्य धारा से जोड़ने का प्रयास किया जा रहा है। इस संस्था की प्रेरणा एवं प्रयास से वर्ष 2014 में सदियों पुरानी परम्पराओं को तोड़ते हुए भगवान कृष्ण की लीला स्थली वृंदावन की विधवाओं ने रंगों की होली खेली। वर्ष 2013 में इन्होंने फूलों वाली होली खेली थी। होली के आयोजन का लक्ष्य वृन्दावन की विधवाओं को सदियों पुरानी परम्पराओं से मुक्त कराना है। ये विधवाएं केवल होली ही नहीं खेलेंगी बल्कि सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भी भाग लेंगी। 'सुलभ इंटरनेशनल' संस्था इन विधवाओं के जीवन में रंग भरने का प्रयास कर रही है। इस संस्था द्वारा विधवाओं को वित्तीय सहायता के साथ-साथ भोजन और स्वास्थ्य सुविधाओं का भी ख्याल रखा जाता है।

यह बहुत बड़ा बदलाव है। देश को सुसंस्कृत एवं आधुनिक बनाने के लिए ऐसे सामाजिक बदलाव जरूरी हैं। यह हमारे समाज के लिए शुभ संकेत है।

बदलते जमाने को देखकर आज हम सभी को लगता है कि बाल-विवाह जैसी कुप्रथायें खत्म हो रही हैं, लेकिन सच्चाई ठीक इसके विपरीत है। हमारे देश में बाल-विवाह प्रथा आज भी जारी है। यहाँ सबसे अधिक बाल-विवाह होते हैं। साक्षरता की दर बढ़ने, बाल-विवाह पर रोक लगाने एवं सरकार की लाख कोशिशों के बावजूद यहां बाल-विवाह धड़ल्ले से हो रहे हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में 12 से 16 वर्ष की आयु में ही बालिकाओं की शादी कर दी जाती है। माता-पिता बेटी को एक बोझ मानते हुए उसे कम उम्र में ही ससुराल विदा कर देते हैं, चूँकि लड़की की शादी सबसे बड़ा खर्चे का घर होता है। राजस्थान में तो

बेटियों की शादी 8 साल की उम्र में ही कर दी जाती है।

'यूएन कंवेशन फॉर द राइट्स ऑफ चिल्ड्रेन' के अनुसार लड़कियों के विवाह की न्यूनतम उम्र 18 साल होनी चाहिए, लेकिन दुनिया के अधिकतर विकासशील देशों में लड़कियों की शादी 18 साल से पहले ही हो जाती है। एक अध्ययन के अनुसार 18 साल पूरा होने से पहले ब्याह दी जाने वाली लड़कियों की सख्या, कुल उम्र पर शादी करने वाली लड़कियों की आधी होती है।

बाल-विवाह केवल भारत या दक्षिण एशिया के देशों में ही प्रचलित नहीं है बल्कि दुनिया के कई मुल्कों में यह कुप्रथा है। अफ्रीकी देशों में, लैटिन अमेरिकी, नेपाल, बांग्ला देश, माली, गिनी, आदि देशों में यह प्रचलित है। बेटियों के लिए काम कर रही संस्था 'यू की प्लान इंटरनेशनल' के अनुसार प्रति वर्ष एक करोड़ से अधिक बच्चियों की शादी 18 वर्ष से पहले ही हो जाती है।

यह 21वीं सदी के विश्व का चेहरा है। आश्चर्य है महिला सशक्तीकरण का ढ़ोल पीटते लोगों की जुबान नहीं थकती, जहां एक ओर यूनीसेफ बाल-विवाह को यौन-उत्पीड़न और बेटियों के शोषण का माध्यम बताता है और संयुक्त राष्ट्र भी मानवाधिकार उद्घोषणा में इसे मानवाधिकार का हनन बताता है। इसके बावजूद मासूम छोटी लड़कियां इसका शिकार हो रही हैं।

यूनीसेफ द्वारा कराये गये सर्वे के अनुसार बिहार में बाल विवाह का स्तर 68.9 फीसदी, झारखण्ड में 63.5 फीसदी, राजस्थान में 62.8 फीसदी, आन्ध्र प्रदेश में 57.8 फीसदी, उत्तरप्रदेश में 55.04 फीसदी और पश्चिम बंगाल में 53.9 फीसदी है। यह रिपोर्ट इस कुरीति को बेनकाब करती है।

स्पष्ट है कि बाल विवाह के मामले में अब राजस्थान नहीं, बल्कि बिहार पहले नम्बर पर है।

कम उम्र में विवाह करने से कई तरह की समस्यायें उत्पन्न होती हैं। लड़की का शारीरिक और मानसिक विकास नहीं हो पाता है। इसके अलावा कच्ची उम्र की लड़कियों के ऊपर पूरे परिवार की पहाड़ जैसी जिम्मेदारियां आ जाती हैं। खेलने कूदने की उम्र में उन्हें मानसिक और शारीरिक यातना का शिकार होना पड़ता है। कम उम्र में शादी होने के कारण लड़कियां कच्ची उम्र में मां बन जाती हैं। ऐसी स्थिति में जच्चा बच्चा दोनों की जान पर खतरा बढ़ जाता है। शिशु कुपोषण का शिकार हो जाता है और मां एनिमिया से ग्रसित हो जाती है। कई बार इससे उनकी मौत भी हो जाती है। देश में अस्वस्थ लोगों की संख्या बढ़ती है। छोटी उम्र में गर्भ धारण करना खतरनाक होता है।

यूनीसेफ के अनुसार पूरी दुनिया में प्रत्येक साल 70,000 से अधिक महिलाओं की मौत गर्भ धारण के दौरान होती है, जिनकी उम्र 15 से 19 वर्ष के बीच होती है।

बाल विवाह के लिए भले ही राजस्थान का नाम आता हो, लेकिन वास्तविकता यह है कि यह कुप्रथा बिहार सहित देश के कई राज्यों में गहराई तक अपनी जड़ें जमा चुकी है और पूरी कोशिशों के बावजूद इस पर काबू नही पाया जा सका है। अपने देश में बाल विवाह रोकने के लिए कानून होने के बावजूद 18 वर्ष की आयु से पहले 47 प्रतिशत लड़कियों का विवाह हो जाता है। रिपोर्ट बताती है कि, अभी अपने देश में दो करोड़ तीस लाख बालिका वधुएं हैं। आखिर शादी की कानूनी उम्र तोड़ने के लिए कौन जिम्मेवार है? 'प्रतिषेध अधिनियम 2006 की धारा 13' के तहत बाल-विवाह रोकने का प्रावधान है। किसी बाल-विवाह को पुलिस या बाल-विवाह प्रतिषेध पदाधिकारी के जांच के बाद मजिस्ट्रेट विवाह को रोक सकता है। इसके लिए आमजन को जागरूक होना होगा।

इस कुप्रथा से हजारो बालिकाओं का बचपन उनसे छिनता जा

रहा है। आखिर बेटियां क्यों बनायी जाती हैं बालिका वधू?

दुनियाभर में कराये गये अध्ययन में बाल विवाह के कई कारण हो सकते हैं, कहीं गरीबी, कहीं परम्परा, कहीं संस्कृति। कम उम्र में ही बालिकाओं की शादी का मुख्य कारण गरीबी ही बताया गया है। गरीब लोग अपनी बेटी की शादी जल्द से जल्द करके छुटकारा पाना चाहते हैं। कुछ गरीब लोग शादी इसलिए भी करते है, ताकि नये संबंध बनने से उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार आयेगा। इसी तरह संपत्ति हासिल करने या विवादों से निबटारे के लिए भी बाल विवाह की ओर लोग अग्रसर होते हैं। कुछ संस्कृतियों में लड़कियों की शादी इसलिए कम उम्र में की जाती है ताकि अधिक बच्चे पैदा किये जा सकें। इसका मुख्य उद्देश्य घर में अधिक कमाऊ सदस्य बनाना है। कुछ माता पिता अपनी बेटियों की शादी इसलिए जल्दी कर देते हैं जिससे वह गलत रास्ता न पकड़े, उसकी पवित्रता बनी रहे। लोग विपत्ति पड़ने पर भी लड़कियों की शादी कम उम्र में कर देते हैं।

इस प्रकार कभी संस्कृति के नाम पर, तो कहीं दहेज के नाम पर कहीं परम्परा के नाम पर, इन बच्चियों से उनका बचपन छीनकर उन्हें विवाह के बन्धन में बांध दिया जाता है।

संयुक्त राष्ट्र के अनुसार यदि भारत में लड़कियां किशोरावस्था में मां बनने के बजाय कम से कम 25 वर्ष की आयु तक पढ़ सकें तो इससे देश की आय में प्रतिवर्ष सात अरब सत्तर करोड़ डालर का इजाफा हो सकता है। संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष ने 'बचपन में मातृत्व : किशोरावस्था में गर्भधारण की चुनौती का सामना' नाम से एक रिपोर्ट जारी की है कि गरीब देशों में प्रतिवर्ष तिहत्तर लाख से अधिक लड़कियां 18 वर्ष की आयु में ही मां बन जाती हैं। इन तिहत्तर लाख लड़कियों में बीस लाख लड़कियों की आयु 14 वर्ष या इससे कम होती है। जल्दी गर्भ धारण से लड़की के स्वास्थ्य, शिक्षा और अधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव

पड़ता है। अपनी क्षमता का लड़कियां एहसास भी नहीं कर पातीं। कम उम्र की बालिकाएं यदि बच्चे को जन्म देती हैं तो इससे समाज और राष्ट्र की अर्थव्यवस्था पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

नाबालिग बालिकाओं की शादी पर रोक लगाने के लिए राज्य सरकार सभी उच्च विद्यालयों एवं महाविद्यालयों के प्रधान को इस बात से सुनिश्चित करावे कि वे अपने यहां अध्ययनरत छात्राओं का विवाह कम उम्र में नहीं होने दें। ऐसा होने पर इस कुप्रथा पर अप्रत्यक्ष निगरानी के साथ साथ बेटियों को अपने अधिकार एवं अस्तित्व का ज्ञान भी सच्चे संरक्षण में होगा और उनमें निर्भीकता और समस्याओं का सामना करने की शक्ति आयेगी। शिक्षाविद् डा॰ जाकिर हुसैन ने ठीक ही कहा है ''माता-पिता बच्चों की देखभाल और संरक्षण के आधे ही जिम्मेवार हैं, इसका आधा हिस्सा जिसमें उनका स्वतंत्र विकास शामिल है, स्कूल एवं उसे चलाने और वहां पढ़ानेवालों पर निर्भर करता है।''

बाल-विवाह वैसा ही है जैसे किसी की आँखों पर पट्टी बाँधकर उसे अंधे कुएँ में ढ़केल दिया जाय। यह एक ऐसी स्थिति है कि बिना परिणाम जाने किसी वस्तु का उपयोग किया जाय! जो पौधा अभी विकसमान है, पूरी तरह फल-फूल नहीं पाया है, उसे तोड़ने-मरोड़ने और उपभोग करने की साजिश जैसा है बाल विवाह! खिलखिलाते हुए बच्चे को तिलमिलाते देखने की दुरभिसन्धि है बाल-विवाह! इस बाल-विवाह का असमय घटित दुष्परिणाम है विधवापन! सुखद सपनों के टूटने और अनुपम आकांक्षाओं के बिखरने की विषैली और बदहवास स्थिति है विधवापन! कहा जा सकता है कि दोनों ही एक-दूसरे के विषैले परिपूरक हैं।

■

पारंपरिक रूढ़ियाँ और महिलाएँ

हर परिवार और समाज की कुछ पारंपरिक मान्यताएं होती हैं, जिन्हें आनेवाली पीढ़ियां अपने पूर्वजों से ग्रहण करती रहती हैं। समय के बदलाव के अनुसार इन मान्यताओं में कुछ हेर फेर होता रहता है क्योंकि इन मान्यताओं में से कुछ अनुपयोगी होते जाते हैं और कुछ नये तत्व जुड़ते जाते हैं। रूढ़ि इसी परम्परा का अनुपयोगी हिस्सा है जिसे बेकार समझकर समाज को त्याग देना चाहिए।

आज हमारा समाज तरह तरह की रूढ़ियों, कुरीतियों और अन्धविश्वासों से ग्रस्त है। समाज का आधा भाग नारी से बनता है। नारी केवल पुरुष की पत्नी ही नहीं है बल्कि समाज का भी आधा अंग है। जिस प्रकार वह परिवार के सुख दुख में सहभागी और सहयोगिनी रहती है, उसी प्रकार समाज के उत्थान पतन में उसकी बड़ी भूमिका रहती है। किसी भी समाज या देश के पास चाहे जितने भी प्राकृतिक साधन हों, पुरुष वर्ग चाहे जितने शिक्षित, सभ्य और ज्ञानी हों किन्तु वहां की महिलाएं यदि अशिक्षित और मूढ़ हों तो उस समाज को सभ्य, शिक्षित और उन्नत नहीं कहा जा सकता है। उन्नत और विकसित समाज या राष्ट्र तभी कहलाएगा जब वहां की महिलाएं और पुरुष दोनों ही समान रूप से शिक्षित और योग्य हों।

आज भी भारतीय समाज में अन्धविश्वास, बाल विवाह, अनमेल

विवाह, दहेज प्रथा, नर नारी का भेद भाव, छुआ छूत, ऊँच नीच, जाति प्रथा, पर्दा प्रथा, आडम्बर, दिखावा, जनसंख्या वृद्धि, आदि ऐसी रूढ़ियां हैं, जो भारतीय समाज की जड़ों को खोखला कर रही हैं।

हमारे देश की एक बड़ी विचित्रता है। एक ओर यहां बौद्धिक सिद्धांतों की जोर शोर से चर्चा होती है। दूसरी ओर मूढ़ से मूढ़ अन्धविश्वासों के दृश्य दिखलाई पड़ते हैं। पूरा विश्व अपने देश भारत को ज्ञान की भूमि मानता है, पर यहां के पंडित एक छींक हो जाने पर, बिल्ली के रास्ता काटने पर, एक काने व्यक्ति को देखकर ठिठक जाते हैं और वहीं पर काम स्थगित कर देते हैं। यहां स्त्री पुरुष, नवयुवक, वृद्ध सभी अन्धविश्वासों पर पूरा विश्वास रखते हैं, इसे मान्यता देते हैं। छोटा बड़ा कोई भी कार्य करना हो तो, ऐसे लोग सबसे पहले शुभ मुहुर्त पंडित से निकलवाते हैं। जन्म से मरण तक जितनी सामाजिक क्रियाएं या संस्कार हैं, उनके लिए मुहूर्त देखा जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि इसके चलते काम में बिलम्ब के साथ साथ समय की बरबादी तथा मानसिक और शारीरिक थकान तथा तनाव होता है।

छोटी श्रेणी के लोगों को, खासकर महिलाओं को जादू टोना, मंत्र तंत्र, नजर गुजर, झाड़ फूंक में पूरा विश्वास है। यहां की, खासकर ग्रामीण क्षेत्र की महिलाएं छोटे बच्चों के बीमार हो जाने पर उनकी चिकत्सा कराने के बजाय नजर लग जाने का संदेह करती हैं और डाक्टर को दिखाने के बजाय ओझा से झाड़ फूंक कराती हैं। लाल मिर्च की धूनी देकर नजर गुजर का पता लगाती हैं और नजर उतारती हैं। इस प्रकार की मूर्खता का परिणाम यह होता है कि बीमारी बढ़ जाती है और फिर इलाज करने से भी कोई नतीजा नहीं निकलता।

भूत प्रेत, जिन्न आदि के विषय में तरह तरह के किस्से सुनने में आते हैं। भूतों का भय यहां लोगों में अधिक समाया हुआ है। इस काल्पनिक भय से लोगों को काफी क्षति होती है। स्त्रियों के सिर पर भूत आने की घटनाएं गाँवों में प्रायः होती रहती हैं। अन्धविश्वासों ने यहां

की जनता में इतना अधिक जोर पकड़ रखा है कि उसके कारण हमेशा तरह तरह की घटनाएं घटित होती रहती हैं। हिन्दुओं में अंधविश्वास की इतनी अधिक प्रबलता है कि धर्म के संबंध में उन्होंने बुद्धि को गिरवी रख दिया है और जो कोई जैसे बहका देता है, वैसे ही ईंट पत्थरों के सामने नाक रगड़ने को ये तैयार हो जाते हैं।

मनौती मनाना, बलि चढ़ाना, टोना टोटका आदि अन्धविश्वास समाज को सच्ची धर्म भावना से दूर कर रहे हैं। बिल्ली द्वारा रास्ता कट जाना, छींक आ जाना, दिशा शूल होना इसी प्रकार की बहुत सी बातें हैं, जो मनुष्यता की हंसी उड़ा रहे हैं। इन रूढ़ियों से मुक्ति दिलाने का दायित्व समाज के शिक्षित नवयुवकों के साथ साथ शिक्षित नवयुवतियों, महिलाओं के कन्धों पर है। इसके लिए महिलाओं को एक जुट होना होगा और संगठित अभियान छेड़ना होगा। यह अपने आप में एक बड़ी क्रान्ति होगी क्योंकि महिलाओं द्वारा एक व्यापक सामाजिक परिवर्तन की आशा एक क्रान्ति ही है। शिक्षित नारी को अंधपरंपराओं, पूर्वाग्रहों, दुराग्रहों, महंतो, मठाधीशों, रूढ़ियों, कुरीतियों से जकड़ी नारी के उद्धार के लिए आगे आना चाहिए। यह सामाजिक, नैतिक तथा मानवीय जिम्मेदारी है। इस जिम्मेदारी को निभाने की इच्छा तथा संकल्पशक्ति जब शिक्षित नारियों में जागृत हो जायेगी, समाज का उद्धार हो जायगा।

बाल विवाह की रूढ़ि आज भी समाज में बरकरार है। लाखों बालिकाएं जिन्हें क-ख-ग-घ का भी ज्ञान नहीं है, उन्हें विवाह के बन्धन में जकड़ दिया जाता है। जो अभी विवाह और पति का अर्थ भी नहीं समझतीं, उन्हें इस बन्धन में बांध दिया जाता है। इस संबंध में जल्दीबाजी करना, अपने बच्चों का भारी अहित करना है। इससे असमय लड़कियां मां बन जाती हैं और कभी-कभी जच्चा-बच्चा दोनों अस्वस्थ हो जाते हैं। इससे दूसरी समस्या जनसंख्या वृद्धि से भी है। अशिक्षित और निम्न वर्ग में बाल विवाह अधिक है। उनके अभिभावकों को समझा-बुझाकर इस बुराई से उन्हें बचाना चाहिए।

बेमेल विवाह भी समाज के लिए घातक है। इसे रोका जाना और उनके विरुद्ध वातावरण बनाना आवश्यक है। जनसंख्या वृद्धि भी दुःख और कष्टों का आमंत्रण है। अंधाधुंध बच्चे पैदा करने और परिवार बढ़ाने के दुष्परिणाम आज सबके सामने है। इसके कारण तरह-तरह की समस्याओं से जूझना पड़ता है। आज आहार, स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास की कमी से व्यक्ति, समाज तथा राष्ट्र ग्रसित है। परिवार, समाज तथा देश के हित के लिए जनसंख्या को सीमित एवं नियंत्रित रखा जाना अति आवश्यक है। जनसंख्या बढ़ाने के अपराधी हम स्वयं हैं।

आज हमने रोगों पर, प्राकृतिक बाधाओं पर भी विजय प्राप्त कर लिया है। परिणाम यह हुआ कि एक ओर जहां जन्मदर में वृद्धि हो रही है, मृत्युदर घटती जा रही है। यदि एक संतान को ही सर्वगुणसम्पन्न बनाया जाय तो वही देश के प्रति सच्ची श्रद्धांजली होगी। इसी में सबका हित है। यदि हम देश के प्रति सच्चे अर्थों में वफादार बनना चाहते हैं तो हमारा प्राथमिक कर्त्तव्य है कि हम अधिक बच्चे पैदा कर समस्यायें न बढ़ायें और 'हम दो' और 'हमारे दो' पर ही अमल करें।

इस इक्कीसवीं सदी में भी दहेज प्रथा ने एक भयानक रूप ले लिया है। लोग शान से दहेज लेते और देते हैं। समाज के लिए यह एक कलंक है। इसके चलते हमारे समाज में प्रतिदिन विवाहित महिलाओं को प्रताड़ित किया जाता है। सबसे बड़ी त्रासदी तो यह है कि दहेज के पीछे किसी सास या ननद नाम की महिला का हाथ होता है। देश में महिलाओं की यह तस्वीर बदलनी होगी। इसे रोकने के लिए आए दिन कानून बनाए जाते हैं फिर भी समाज में इसका कोई असर नहीं होता है। दहेज दानव पर काबू पाने के लिए सामाजिक चेतना जागृत करने की आवश्यकता है। यह लड़ाई सामाजिक स्तर पर लड़ी जानी चाहिए। इसके लिए प्रबुद्ध नागरिकों को, युवक युवतियों को सामने आना चाहिए। ऐसे आदर्श प्रस्तुत किये जायें, जिन्हें लोग देखें, प्रेरणा प्राप्त करें और अनुकरण करें। दहेज के नाम पर युवक वर्ग एक पैसा नहीं लेने का

संकल्प लें ओर लड़की वाले दहेज देने से इंकार करें, तभी इस दानवी प्रथा पर काबू पाया जा सकता है।

जातिप्रथा भी हमारे समाज की एक अन्य रूढ़ि है जिसे हमारे नेताओं ने आरक्षण पद्धति के द्वारा जातिवाद का रूप दे दिया है। जातिवाद हिन्दू समाज में वैमनस्य का बीज बो रहा है। अब तो उपजातियां भी फैलती जा रही हैं। इस कुप्रथा को तरह तरह के सम्मेलन करके जैसे धोबी सम्मेलन, सूड़ी सम्मेलन, यादव सम्मेलन, केवट सम्मेलन, कुर्मी सम्मेलन बढ़ावा दे रहे हैं। ऐसा करके मनुष्यता को बांट रहे हैं। आज हमें एक ऐसे समाज की जरूरत है जहां न ब्राह्मण हों, न क्षत्रीय हों, न शूद्र हों और न कुर्मी सिर्फ मनुष्य हों जो मनुष्यता के लिये जीएं और मनुष्यता के लिए मरें।

ऊँच नीच और छुआछूत की भावना तो हजारों साल से चली आ रही है और आज भी समाज के जड़ में ये रूढ़ियां जमी हुई हैं। हम सभी एक ही ईश्वर की संतान हैं, सभी के रगों में एक ही खून प्रवाहित हो रहा है लेकिन आज भी न जाने कितने अज्ञानी लोग ऊँच नीच की भावना द्वारा समाज में विष घोलते रहते हैं। यदि समाज को आगे बढ़ाना है, मानवता की लाज रखनी है तो इन कुत्सित विचारों को जड़ से समाप्त करना होगा।

आज इक्कीसवीं सदी के समाज में भी बालक और बालिकाओं में भेद भाव हर जगह देखने को मिलता है। बचपन से ही लड़कियों को परायी मानकर पाला जाता है। कदम कदम पर उन्हें लड़की होने का अहसास कराया जाता है। गाँवों में तो घर का सारा काम लड़कियों के जिम्मे ही रहता है। दुःख तो तब होता है जब मां भी इस भेदभाव को बढ़ावा देती है। इधर कुछ वर्षो से एक दूसरी भी गम्भीर समस्या आ गई है। अब पेट में ही लड़के या लड़की के भ्रूण की पहचान हो जाती है। इससे हर रोज न जाने कितने लड़कियों वाले भ्रूण पेट में ही नष्ट कर दिए जाते हैं। इससे स्त्री पुरुष के अनुपात और सामाजिक संतुलन में

बहुत अंतर आ गया है। आज 1000 लड़कों पर मात्र 940 लड़कियाँ हैं। यह देश के लिए बहुत बड़ी समस्या है। इस अभिशाप से पीछा छुड़ाने के लिए नारी को ही कड़ा रूख अपनाना होगा। अपने पेट में पल रही बच्ची को मारने से बचाना होगा और घरों में लड़के लड़कियों के बीच बरता जानेवाला भेदभाव समाप्त करना होगा।

किसी के दिवंगत होने के बाद, उस घर में विवाह शादियों जैसी दावत का आयोजन करना, मरे हुए व्यक्ति के प्रति अपमान है। दावतें खुशी में दी जाती हैं। मृतक के मित्रों को, शुभचिन्तकों को चाहिए कि वे यदि क्षतिग्रस्त परिवार को कोई सहायता न कर सकते हों तो कम से कम दावतों की सलाह देकर उनका आर्थिक अहित तो न करें। मृतक की आत्मा की शांति के लिए धार्मिक कृत्य अवश्य कराए जाएं।

अपने देश में बड़ी दावतों का और उनमें अनेक प्रकार के व्यंजन परोसने का रिवाज है। आवश्यकता से अधिक खाने का भी रिवाज है। छोटी छोटी खुशियों में बड़े बड़े प्रीतिभोज आयोजित कर दिए जाते हैं। बड़ी दावतों में अन्न की बुरी तरह से बरबादी होती है। ड्योढ़ा दूनी खाने से पेट भी खराब होता है और अनाज भी बरबाद होता है। एक और बुरी प्रथा इसके साथ जुड़ी हुई है कि दावतों की शान पत्तलों पर छोड़ी हुई जूठन से की जाती है। यह अन्न देवता का अपमान है।

आज लोगों में शेखी, ढ़ोंग, फैशन और बड़प्पन ठाठ बाट दिखाने की बहुत होड़ चल रही है। लोग महंगे कपड़े पहनकर बाहर निकलते हैं जिससे लोग उन्हें बहुत अमीर समझें। इसी प्रकार महिलाएं जेवर लादे फिरती हैं और पहनकर बाहर निकलती हैं कि लोग उन्हें धनी समझें। इस प्रकार धनी होने का प्रमाण देने के लिए जेवर लादे फिरने से कोई लाभ नहीं है। इसी धन को यदि किसी कारोबार में लगा दिया जाए तो इससे कमाई भी होगी और बहुतों को रोजी रोटी मिल सकती है।

आज भी पर्दा प्रथा गांवों में देखने को मिलता है, जो हैरान करता है। इसका अंत होना चाहिए। यह कार्य महिलायें स्वयं कर सकती हैं। सास अपनी पुत्र-वधू को बेटी की तरह मानें। घर की महिलाएं ही मिल जुलकर इस कुरीति का अंत कर सकती हैं। परदे के लिए पुरुष दबाव न डालें।

महिलाओं को इतना साहस होना चाहिए कि वे पुरुषों को समझा सकें कि मिलावट, रिश्वत, कम तौल, कम माप, असली बताकर नकली देना, अनुचित मुनाफा लेने, तस्करी, चोर बजारी और अनीति अपनाने से जो धन मिलता है, वह अपव्ययों में चला जाता है। चोरी, दवा दारू, मुकदमा आदि में प्रायः ऐसी ही कमाई की बरबादी होती है। ईमानदारी से कमाया पैसा भले ही थोड़ा हो, कठिनाई से गुजारा होता हो, तो भी उसी थोड़े से पैसे से परिवार फलते फूलते और सुखी रहते हैं।

विचारशील नारी का कर्त्तव्य है कि नशे के दुष्परिणामों को समझें और घर में जिन्हें नशा लेने की लत पड़ गई है, उन्हें छुड़ाने का प्रयास करती रहें और जिन्हें इसकी लत नहीं है उन्हें इस नशे से बचाने का प्रयत्न करें। समर्थन कभी नहीं करना चाहिए। महिलाओं को पुरुषों पर इसके लिए कड़ाई करनी चाहिए, तभी इन गलत आदतों के छूटने की आशा की जा सकती है।

कुरीतियों में भाग्यवाद भी आता है। यह ऐसा विष है जो मनुष्य को प्रगति के लिए, सुधार के लिए कुछ भी रचनात्मकता की ओर बढ़ने से रोकता है। ''जो भाग्य में लिखा है होकर रहेगा, जो होना है उसे विधाता पहले ही लिख देते हैं'' आदि मान्यताएं मनुष्य को आगे बढ़ने से रोकती हैं। किसी पण्डित या भविष्यवक्ता द्वारा अशुभ, अनिष्ट बता दिए जाने पर लोग भयानक चिंता से ग्रस्त हो जाते हैं।

देवी देवताओं के नाम पर पशुबली और नरबलि के जो कुकर्म देखने को मिलते हैं, उन्हें लज्जाजनक मूढ़ मान्यता ही कहा जायगा।

अब अवांछनीयता को निरस्त करके औचित्य का प्रतिष्ठापन

नितान्त आवश्यक है। पढ़ी लिखी और संस्कारी स्त्रियों को चाहिए कि वे अपने को समाज से अलग न मानकर, अलग न रहकर सबकी उन्नति के लिए कोशिश करें। देश की स्त्रियों की हालत सुधारने की आवश्यकता है। नारी को अज्ञान के अंधकार से निकालकर प्रकाश में लाना होगा। उन्हें शिक्षित करना होगा। उनपर से प्रतिबंध हटाने होंगे। भारत के भावी संतान के लिए उन्हें जननी का आदर देना होगा। राष्ट्र की जननी जैसी होगी राष्ट्र भी उसी प्रकार का बनेगा। पुरुष नारी को स्वतन्त्रता दे और समाज सुविधाएं तो यह आज की अशिक्षित नारी कुशल शिल्पी की भांति संतान, घर और समाज को रच देगी। यदि राष्ट्र के उत्थान कार्य में नारी को योग्य बनाकर संलग्न किया जाए तो राष्ट्र की प्रगति दोहरी हो जायगी। डा॰ राधा कृष्णन के शब्दों में ''नारी पुरुष के विलास का माध्यम नहीं है, वह पुरुष की मां है और मानव के विकास का साधन है।'' गाँधी जी ने नारी में छुपी हुई शक्तियों को पहचाना था और सोती हुई भारतीय नारी को जैसे झकझोर कर उठा दिया था। उनके साथ अनेक साहसी नारियों ने देश की क्रान्ति में भारी योगदान दिया था।

भारत में नारियों की सामाजिक स्थिति जो भी रही हो, उन्हें हमेशा शक्ति स्वरूपा ही माना गया है। पिछले 100 वर्षो से भारतीय नारी को ऊँचा उठाने के लिए प्रयास किये जा रहे हैं। राजाराम मोहन राय, स्वामी दयानन्द से लेकर महर्षि कर्वे तक, नारी उत्थान के प्रयासों का महत्वपूर्ण इतिहास है। अतः इतनी जल्दी इनकी स्थिति को नहीं बदला जा सकता है। दो हजार वर्ष की बिडम्बनायें इतनी जल्दी तो नहीं उल्टी जा सकतीं। उन्हें पलटने में कुछ समय लगेगा लेकिन सदियों के परिश्रम से जो रूप नारी का निखरकर आया है तथा विरासत में उसने जो गुण प्राप्त किये हैं, वह अद्वितीय है।

स्पष्ट है कि कुरीतियों, मूढ़ मान्यताओं और अन्धविश्वासों ने व्यक्ति और समाज को विशेषकर नारी जाति को असीम क्षति पहुँचाई

है। उन्हें एक एक करके उखाड़ फेंकने की आवश्यकता है। पारिवारिक और सामाजिक रूढ़ियों का शिकार अक्सर महिलायें ही होती हैं जिसका कारण रहा है उनका एक बँधी चहारदीवारी तक अपनी गतिविधियां सीमित रखना, खुला आकाश और परिपूर्ण प्रकाश के दर्शन न कर सकना। 'Exposure is itself a vigour' अर्थात् खुले मैदान में रहना अपने आप में एक शक्ति है। आज महिलाओं को जो बाह्य शक्ति मिल रही है, उन्हें अपने भीतर भी जो साहस पैदा हो रहा है तथा परिस्थितिवश परिवार और सरकार से भी जो समर्थन मिल रहा है, उससे अनेक प्रकार की सामाजिक रूढ़ियों का खंडन वे कर रही हैं और जैसे इसकी उद्घोषणा उनकी वाणी और कर्म दोनों में प्रकट हो रही है

हमको मिटा सके ये जमाने में दम नहीं,
हमसे जमाना खुद है जमाने से हम नहीं।

■

सर्वशक्तिमयी : नारी

एक समय था जब महिलाएँ घर की चहारदीवारी में बंद थीं। परदे की रानी थीं। आज समय बदल गया है। आज महिलाएँ आकाश की ऊँचाईयों को छूना चाहती हैं। इन्होंने हर जगह अपना मुकाम बनाया है। अपनी इच्छाशक्ति की बदौलत, सभी कठिनाईयों को पार करते हुए अपनी सभी मंजिलें प्राप्त की हैं। उन्हें आज न तो किसी के सहयोग की जरूरत है और न हीं किसी से पैसे की चाहत। उनकी बस यही गुजारिश है कि उनका रास्ता कोई न रोके। वे आगे-ही-आगे बढ़ती जाएँ। कठिन परिश्रम और मजबूत इरादों से राहें आसान हो रही हैं। हर क्षेत्र में नारी आज सशक्त है। उसमें दृढ़ता है, आत्मविश्वास है और एक नया संसार रचने का बुलंद जज्बा है। खुद की महिलाएँ अनुयायी हैं। प्रजनन, पोषण, पारिवारिक दायित्वों को निभाते हुए उनकी बुद्धि, प्रज्ञा और भी व्यापक और विराट् बन रही है। मुश्किलों को पार करते हुए नारी ने संभावनाओं को ढूंढ निकाला है। आने वाले कल की नारी खुश है, जो वह सदियों से नहीं थी। 21वीं सदी में नारी के स्वत्व ने अंगड़ाई ली है। आज सामाजिक, राजनैतिक अराजकता को भी दूर करने के लिए नारी को ही आगे आना होगा।

महिलाएँ रिश्तों को जिन्दा रखती हैं अपने रचनात्मक विचारों

से, समाज को सींचती हैं अपने कार्य-कलापों से। पिता की आँखों में बसती एक मासूम सी बेटी, पति की एक प्यारी सी दुल्हन, भाई की कलाईयों में बंधती बहन की पुकार और जनमों-जनम तक साथ रहता है माँ का प्यार-दुलार। पिता की आँखों में खुशियाँ छा जाती हैं, जब काम से थके-हारे, घर लौटकर उस नन्हीं परी को देखते हैं।

महिलाओं ने जिन-जिन क्षेत्रों में कदम रखा है वहाँ उन्होंने अपनी मेधा, क्षमता और लगन के बल पर नई बुलंदियों को छुआ है। राजनीति, शिक्षा, उद्योग, खेल, चिकित्सा या फिर कोई भी क्षेत्र हो, हर जगह इन्होंने कामयाबी हासिल किया है।

हमारे देश में राजनीति और प्रशासन के क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका अहम् रही है। सरोजिनी नाइडू, सुचेता कृपलानी, राजकुमारी अमृत कौर, विजयलक्ष्मी पंडित, इंदिरा गांधी कई महिलाएँ इसका उदाहरण हैं, जो अनवरत संघर्ष कर सत्ता के सर्वोच्च शिखर पर पहुँचीं और हर क्षेत्र में अपने को पुरुषों के समकक्ष साबित किया है। पंचायती राज कानून के लागू होने से पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी बढ़ी है। महिलाओं के 50 प्रतिशत प्रतिनिधित्व बढ़ने से ग्रामीण महिलाओं का सशक्तीकरण बढ़ा है।

उच्च शिक्षा प्राप्त आज की बेटियाँ भारतीय स्तर की प्रतियोगिता परीक्षा में काफी संख्या में शामिल हो रही हैं। सफलता भी प्राप्त कर रही हैं, साथ ही उच्च प्रशासनिक पदों पर नियुक्त भी हो रही हैं। राज्य-स्तरीय प्रतियोगिता परीक्षा में भी इनकी संख्या काफी उत्साहवर्द्धक है। तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र में भी लड़कियाँ आगे आ रही हैं। चिकित्सा के क्षेत्र में भी इनकी संख्या बहुत है। सेवा-सुश्रूषा और बीमार लोगों की देख-भाल में, उपचार करने में तो महिलाएँ बहुत दक्ष होती हैं।

वर्ष 2013 के लोकसेवा आयोग की सिविल सेवा परीक्षा में कई महिलाओं ने बाजी मारी है। गुजरात की कोमल गनात्रा, हरियाणा

की अनुराधा पाल ने विपरीत हालात के बावजूद हिम्मत और लगन से मंजिल पाई। गरीबी, सामाजिक दबाव के बावजूद अपने सपनों को पूरा किया है। वर्ष 2012 में जोधपुर के एक छोटे-से गाँव की स्तुतिचरण ने राजस्थान से आइएएस परीक्षा में टॉप किया। वर्ष 2013 में भारती दीक्षित ने सिविल सेवा परीक्षा में लड़कियों में पहला स्थान और लड़के-लड़कियों में पाँचवाँ स्थान प्राप्त किया है।

आइआइएम कोझिकोड के 2013-15 बैच में नामांकन लेने वालों में छात्राओं की संख्या छात्रों से अधिक है। अन्य संस्थानों में भी लड़कियों की संख्या बढ़ी है। देश के तीन टॉप आइआइएम अहमदाबाद, बेंगलुर और कोलकाता के उपलब्ध कराये गये आंकड़ों के अनुसार 2015 बैच के लिए काफी संख्या में लड़कियाँ नामांकन करा चुकी हैं।

बीते एक दशक में आइआइटी और आइआइएम में महिलाओं की उपस्थिति ज्यादा रही है। मेडिकल, साइंस और टेक्नोलॉजी में भी लड़कियाँ दम-खम से अपनी उपस्थिति दर्ज करा रही हैं। सीबीएसई 12वीं परीक्षा में घोषित परिणाम में लड़कियाँ लगातार कई वर्षों से आगे हैं लड़कों से। इसी तरह बिहार में मैट्रिक परीक्षा, इन्टर कॉमर्स, इन्टर साइंस, आईए, बिहार मदरसा बोर्ड की वास्तानिया परीक्षा में लगातार कई वर्षों से छात्राओं ने बाजी मारी है। मधुबनी जैसे पिछड़े इलाके की बेटी राज्य भर में अव्वल आई। टॉप टेन में ग्रामीण क्षेत्र की बेटियों ने आधा से अधिक स्थान प्राप्त किया। छोटे शहरों और गाँव की बेटियों का अव्वल आना यह संदेश देता है कि संघर्ष, मेहनत और लगन हो तो सफलता अवश्य हासिल होती है तथा ग्रामीण क्षेत्रों की प्रतिभा पल्लवित और पुष्पित हो रही हैं। दूसरा संदेश यह भी है कि छात्राएँ छात्रों के मुकाबले ज्यादा लगनशील और अपने कैरियर के प्रति ज्यादा सचेत हैं। जहाँ कहीं भी इन्हें मंच मिल रहा है, इन्होंने अपनी मेधा प्रदर्शित की हैं। गाँव की प्रतिभा ने यह साबित कर दिया है कि शहर की चकाचौंध

के आगे उनकी प्रतिभा फीकी नहीं है, भले ही उन्हें सुविधाएँ कम हैं।

आज आसमान छूने को बेताब हैं नारियाँ। नैनीताल की गायत्री, चीन के सीयान चाउथिंग विश्वविद्यालय से भारतीय मानसून पर शोध कर रही हैं। इन्हें यंग साईंटिस्ट का अवार्ड मिला है। जलवायु पर प्रस्तुत इनके शोधपत्र पर इन्हें 2000 डॉलर का पुरस्कार गोवा में आयोजित सेमिनार में इस विश्वविद्यालय द्वारा दिया गया है।

तालिवान के हमले की शिकार किशोरी मलाला यूसुफजई को वर्ष 2013 के लिए प्रतिष्ठित ग्लोबल लीडरशिप सम्मान लड़कियों को शिक्षित करने और अधिकार सम्पन्न बनाने के लिए दिया गया है। साथ ही साथ वर्ष 2014 में भारत के कैलाश सत्यार्थी के साथ मलाला को भी संयुक्त रूप से शांति का नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया। इन दोनों को शांति का मसीहा कहा गया।

बेंगलुर शहर की रहने वाली नेहा रामू 7 साल की उम्र में लंदन चली गई, लेकिन भारत में प्राप्त शिक्षा ने उसे इस मुकाम तक पहुँचाया कि उसने वहाँ के सारे बच्चों को छोड़कर मेंसा आईक्यू टेस्ट में 162 स्कोर प्राप्त किया है। इस टेस्ट में 18 साल से कम उम्र के बच्चों ने भाग लिया था। उसका आईक्यू 12 साल की उम्र में 162 है। ब्रिटेन में रहने वालों का आईक्यू 100 होता है। ऐसे में नेहा ब्रिटेन की सबसे तेज दिमाग वालों में से एक है।

जज्बा हो तो आसमान की ऊँचाई भी कम पड़ जाती है और हौसले की उड़ान के लिए परों की जरूरत नहीं होती है। कुछ इसी तरह का जज्बा और हौसला है इन महिलाओं में। नीलिमा बाजपेयी, कोमल बान्धवा, पलग्रे के सम्बन्ध में घोर आश्चर्य की बात है कि महानगरों में रहनेवाली ये महिलाएँ, जो कभी गाँव नहीं गईं, लेकिन टी.वी. पर रच दी इन्होंने 'देहाती दुनिया की वास्तविकता'। याद आता है इकबाल का शेर

''ऊकाबी रूह जब बेदार होती है जवानों में।
नजर आती है उनको अपनी मंजिल आसमानों में।।''

उम्र भी चौबालिस से कम है सबकी। इन्होंने गाँव सिर्फ फिल्मों में देखे हैं, लेकिन अपनी रचनात्मक सोच और बेहतरीन टीम के दम पर ये हर वर्ष 1200 करोड़ रुपयों से भी ज्यादा ग्रामीण पृष्ठभूमि वाले हिट सीरियल बना रही हैं। नीलिमा बाजपेयी ने 'न आना इस देश ....' जैसे लोकप्रिय सीरियल बनाकर सबसे बड़ी सोप क्वीन एकता कपूर को भी चुनौती दे दी और 'अम्मा जी' का ग्रामीण किरदार की लोकप्रियता 'तुलसी' और 'पार्वती' से कम नहीं। दिल्ली से आयी नीलिमा बाजपेयी ने टीवी इंडस्ट्री में गाँव का वास्तविक रूप छोटे पर्दे पर ला दिया।

राजस्थान के एक गाँव की कहानी को टीवी पर्दे पर लाने वाली कोमल बांधवा की सफलता भी अपूर्व है। कलर्स चैनल की सफलता में धारावाहिक 'बालिका बधू' की भूमिका अहम् रही है। पेशे से फर्निचर डिजाइनर और एक्पोर्टर 'कोमल' ने अपने पति संजय बांधवा के साथ जब एंटरटेनमेंट बिजनेस की शुरुआत की तो पति को क्रिएटिव और बिजनेस पार्टनर का जिम्मा सौंपा। खुद प्रोडक्शन और कास्टयून्स जैसी जिम्मेदारियाँ संभाली। कोमल के राजस्थानी गाँव के सेट्स, इंडस्ट्री में मील का पत्थर साबित हुए और दूसरे चैनल्स को भी मुनाफे का रास्ता गाँवों में ही ढूंढ़ना पड़ा।

ग्रामीण पृष्ठभूमि वाले धारावाहिकों की शुरुआत का श्रेय 'बालिका बधू' को दिया जाता है। 'मांसा' की भूमिका निभानेवाली 'सुरेखा सिकरी' का किरदार दूसरे ग्रामीण किरदार के लिए मिसाल बन गया। इसके बाद तो चैनलों में ऐसे किरदारों की बाढ़ आ गई।

अपनी प्रतिभा के बल पर सुकीर्ति कांडवाल ने छोटे पर्दे पर धाक जमा ली। जीटीवी धारावाहिक **'अगले जनम मोहे बिटिया ही कीजौ'** और **'रब से सौणा इश्क'** में दमदार रोलकर टीवी की दुनिया

में नाम कमाया।

नृत्य आज केवल मनोरंजन के तौर पर नहीं, बल्कि रोजगार प्राप्त करने का जरिया भी है। काफी संख्या में लड़कियाँ अब शास्त्रीय नृत्य एवं संगीत सीख रही हैं। आजकल संगीत शिक्षिका के रूप में बालिका विद्यालयों में इनकी नियुक्ति भी हो रही है। इस प्रकार आज लड़कियाँ अपने शौक को पूरा करने के साथ-साथ अपनी आर्थिक स्थिति भी मजबूत कर रही हैं।

अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के दिन संयुक्त राष्ट्र के 'वन वुमन' गीत दुनिया भर की महिलाओं के सम्मान में प्रदर्शित किया गया। महिलाओं के सम्मान में तैयार इस गीत में विश्व के 20 देशों की 25 महिला कलाकारों ने हिस्सा लिया। वर्ष 2013 में 'सिनेमा में महिलाओं' विषय पर लद्दाख फिल्मोत्सव सम्पन्न हुआ। राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित अभिनेत्री और निदेशक अपर्णा सेन ने लद्दाख फिल्मोत्सव की जुरी की अध्यक्षता की।

वर्ष 2013 में वेनिस में फिल्म फेस्टिवल का प्रारंभ मीरा नायर की 'द रिलक्टेंट फंडामेंटलिस्ट' और चार दूसरी फिल्मों से हुआ। वहाँ दिखलाये गये 52 फिल्मों में 21 का निर्देशन महिलाओं ने किया है। इससे स्पष्ट है कि अब सिनेमा में भी महिलाओं की अहम् भूमिका को अंतर्राष्ट्रीय पहचान मिल रही है।

'रोहिणी हतांगड़ी' अभिनय में उत्कृष्ट योगदान के लिए 'संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार', 'राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार' के साथ-साथ 'वाफ्ता पुरस्कार' पाने वाली एक मात्र भारतीय अभिनेत्री हैं। दुर्गा खोटे ने अभिनय के क्षेत्र में अपना लोहा मनवाया। 'मुगलेआजम' में इन्होंने महारानी 'जोधाबाई' का किरदार निभाया था, जो आज भी हम सबकी याद में ताजा है। फिल्म जगत का सर्वोच्च सम्मान 'दादा साहेब फालके' सहित कई पुरस्कारों से इन्हें नवाजा गया।

'हास्य' के क्षेत्र में आमतौर से पुरुषों का वर्चस्व माना जाता रहा है, किन्तु अब महिलाओं की एक नई जमात 'कॉमेडी' में सफलता के झंडे गाड़ कर अपने हास्य बोध का लोहा मनवा चुकीं हैं। ये महिलाएँ अपनी काबिलियत के जरिए इस क्षेत्र में अपनी खास पहचान बना चुकी हैं। इनमें प्रमुख महिलाएँ अदिति मित्तल, नीति पाल्ता, सुगन्धा मिश्रा, धया लक्ष्मी हैं। ये विदेशों में भी भारतीय महिला कॉमेडियन का जलवा बिखेर रही हैं। हमेशा इन्होंने कुछ रचनात्मक और अलग सा लेखन अभिनय कॉमेडी की तरफ ध्यान दिया। ये हमेशा नयी हास्य सामग्री की तलाश में रहती हैं। इनके अलावा रूबी चक्रवर्ती, बसु प्रिमलानी, भारती सिंह, ममता खुराना भारतीय कॉमेडियन हैं, जो अपनी काबिलियत के जरिए अपनी खास पहचान बना रही हैं।

'जासूसी' में भी महिलाएँ पुरुषों के एकाधिकार को चुनौती दे रही हैं। कुछ ऐसी जासूस महिलाएँ हैं जिन्होंने इस क्षेत्र में धमाकेदार उपस्थिति बनायी है। इनके काम को देखकर लोग हैरान हो जाते हैं। इनके पास हर तरह के केस आने लगे हैं, जिन्हें इनकी टीम समझदारी से सुलझाते हैं। इस क्षेत्र में इन्हें एक-एक कदम फूंक-फूंक कर रखना पड़ता है और कड़ी मेहनत करनी पड़ती है। नौकरानी, रसोइया, ड्राइवर ये सूत्र हैं जिनके जरिए महिला जासूस बड़े-से-बड़े केस सुलझाती हैं। इंटरनेट के जरिए भी कई राज फाश किए हैं। भारत में ऐसी कई महिला जासूस हैं जिन्होंने अपने शौक को अपना कैरियर बनाया।

भारत की पहली महिला जासूस 'रजनी पंडित' बनीं। इन्होंने मुम्बई में 'रजनी इंवेस्टिगेशन ब्यूरो' की शुरुआत की। इन्हें 'मुम्बई दूरदर्शन' और 'हिरकानी' कई अवार्ड से नवाजा गया। एक डिटेक्टिव के लिए यह सबसे मुश्किल काम होता है कि वह खुद की आइडेंटिटी छुपा कर रखे, ऐसे में कई बार वेश बदलने पड़ते हैं। एक डिटेक्टिव के लिए उसका काम थ्रीलिंग होने के साथ-साथ डेंजर ऑफ थॉट भी

हमेशा होता है। रजनी पंडित इस पेशे की महारथी बनी।

एएम मलाथा भी ऐसी ही महिला जासूस हैं। चेन्नई में इन्होंने भी डिटेक्टिव एजेंसी की शुरुआत की। तारलिका लाहिरी दिल्ली के 'नेशनल डिटेक्टिव एण्ड कन्सलटेंट' की निदेशक हैं। आकृति मालती भी इस पेशे की महारथी हैं। वर्तमान में भारत में लगभग 10 डिटेक्टिव एजेंसियाँ हैं जिन्हें महिला जासूस संचालित कर रही हैं। अब ये महिलाएँ आम केस के अतिरिक्त मर्डर और क्रिमनल केसेज भी सुलझा रहीं हैं और सफलता हासिल कर रही हैं।

महिला जासूस के लिए शारीरिक और मानसिक दोनों रूप से फिट होना आवश्यक है। हर किसी पर विश्वास करना पड़ता है, साथ ही हर किसी पर शक की निगाह रखनी पड़ती है। कोई भी व्यक्ति या कोई भी सुराग छोटा नहीं होता है। हमेशा सावधान रहना पड़ता है, यदि महिला है तो अपनी सुरक्षा का ख्याल स्वयं रखना होता है। दिलचस्पी है तभी इस क्षेत्र को चुनना चाहिए।

पश्चिम बंगाल का सबसे बड़ा त्योहार दुर्गापूजा है। दुर्गापूजा में 'मूर्तियाँ बनाने का काम' सदियों से पुरुषों के हाथों में था, लेकिन अब महिलाएँ पुरुषों के इस गढ़ में सेंध लगाने लगी हैं। सबसे पहले चायना पाल नाम की एक महिला ने यह काम शुरू किया था, अब कई और महिलाएँ मूर्तियाँ बनाने के काम में उतर आयी हैं।

काकोली पाल ने पिता की मौत के बाद अपने हाथों से दुर्गा की प्रतिमा बनाने के लिए मिट्टी और रंग की कूची उठाई थी। मीनाक्षी पाल ने भी अपने पिता की मौत के बाद, पिता का नाम जीवित रखने के लिए प्रतिमाएँ बनाने का काम शुरू किया। मीनाक्षी की माँ माया रानी पाल भी अपनी बेटी की सहायता इस काम में करती हैं। चायना कहती है 'राक्षस का बध करती दुर्गा माँ की प्रतिमा लगातार मेरा साहस और बल बढ़ाती रहती हैं।' अब महिला कलाकारों की संख्या में

भी वृद्धि हुई है। इन महिला मूर्तिकारों की नजरों की सजगता और मिट्टी से सने-सधे हाथों की कलाकारी देखकर कोई भी दाँतों तले ऊँगली दबा ले। उनकी बनाई प्रतिमाओं की माँग सिर्फ कोलकाता में ही नहीं है, देश-विदेशों में भी हैं। कहते हैं **हर नारी के अन्दर दुर्गा और काली विराजमान हैं, लेकिन यहाँ उस शक्ति से ही शक्ति ग्रहण कर शक्ति की रचना में जुटी हैं शक्तियाँ। कहीं काली, कहीं सरस्वती तो कहीं साक्षात् दुर्गा को मूर्त रूप देने में लीन हैं शक्तियाँ।**

आज महिलाएँ घर की दहलीज लांघकर कार्यालयों में काम-काज के साथ-साथ खेल के मैदान में भी कामयाबी हासिल कर रही हैं। गेम्स के 63 साल के इतिहास में सर्वाधिक पदक एथलीटों ने जीते हैं। 1951 से लेकर अब तक भारतीय एथलीट 70 स्वर्ण पदक सहित कुल 219 पदक जीत चुके हैं। अधिकतर पदक महिलाओं ने जीते हैं। 2010 ग्वांग्झू खेलों में भी भारतीय महिलाओं ने ही तिरंगे की शान बढ़ाई थी। इनमें एथलीटों ने 5 स्वर्ण सहित कुल 12 पदक जीते, जिनमें से 4 स्वर्ण सहित 10 पदक महिलाओं ने जीते। इस वर्ष भी महिलाओं ने दमदार प्रदर्शन किया है।

400 रिले रेस में भारतीय महिलाओं का 'एक टीम' प्रियंका पवार, टिन्टु लुका, मंदीप कौर और एम.आर. पुवम्मा ने स्वर्ण पदक जीता। एशियन गेम्स में ओ.पी. जेशा ने महिलाओं की 1500 मीटर दौड़ में कांस्य पदक जीता। राष्ट्रीय ओपेन एथलेटिक्स में दो स्वर्ण पदक जीतीं।

वर्ष 2014 में नवरात्र के दौरान जब पूरा भारत शक्ति की अराधना में तल्लीन था, सुदूर दक्षिण कोरिया के इंचियोन में चल रहे एशियन गेम्स में देश की दो महिलाओं ने अपनी ताकत का एहसास कराया। गेम्स के दसवें दिन टेनिस स्टार सानिया मिर्जा 'टेनिस' में और

सीमा पुनिया ने 'डिस्कस थ्रो' में स्वर्ण पदक जीतकर देश को गौरवान्वित किया।

'मुक्केबाजी' में मैरी कोम, 'कबड्डी' में भारतीय महिला टीम ने स्वर्ण पदक जीतकर तिरंगे की शान बढ़ायी। 2014 ग्लासगो कॉमन वेल्थ गेम्स में संजीता सुमुखचन को 'वेटलिफ्टिंग' में, अपूर्वा चंडेला को 'निशानेवाजी' (एयर रायफल सूटिंग) में, राही शरणोवट को 'पिस्टल सूटिंग' में और बबिता कुमारी को 'कुश्ती' मे स्वर्ण पदक मिला। जोशना किनप्पा और दीपिका पल्लीकल ने 2014 ग्लासगो कॉमनवेल्थ 'स्कवैश गेम्स' में डबल्स का स्वर्ण जीता। दीपिका पल्लीकल को 'पद्मश्री' से सम्मानित किया गया। टिंटू लुका 'एथलेटिक्स' में, ममता पुजारी 'कबड्डी' में, हिना सिद्धु 'निशानेबाजी' में, रेनुबाला चानू को 'भारोत्तोलन' के लिए 'अर्जुन अवार्ड' से सम्मानित किया गया।

मुक्केबाज एम.सी. मैरी कोम को 'लिम्का बुक ऑफ रिकार्ड्स' ने सम्मानित किया। उन्हें 'मोस्ट वैल्युएबल प्लेयर' भी घोषित किया गया। एशियाई खेलों की स्वर्ण विजेता मैरी कोम पाँच बार मुक्केबाजी में 'विश्व चैंपियन' बन चुकी हैं। अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा ने इनकी बहुत तारीफ की है। इस तारीफ से मैरी कोम अभिभूत हैं। मैरी कोम ने यह भी कहा कि देश में लड़कियों को मुक्केबाजी में आने के लिए प्रेरित कर वह और 'मैरी कोम' तैयार करना चाहती हैं जिससे देश को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पदक हासिल हो सके। उन्हें यह देखकर अच्छा लग रहा है कि देश में महिला खिलाड़ी आगे आ रही हैं।

16 जून 1963 को वेलेन्तीना तेरेश्कोआ अन्तरिक्ष जाने वाली पहली यात्री बनी थीं। यह केवल सोबियत संघ के लिए नहीं बल्कि पूरे विश्व के लिए महत्वपूर्ण वैज्ञानिक कदम था। इन्होंने 70 घंटे की इस उड़ान में पृथ्वी की 43 बार परिक्रमा की थी। अबतक 60 से अधिक महिलाओं ने अन्तरिक्ष की सैर की है।

राष्ट्रपति बराक ओबामा ने घोषणा की है कि 1983 में अन्तरिक्ष की यात्रा करने वाली डॉ. सैली राइड पहली अमेरिकी महिला

अन्तरिक्ष यात्री को अमेरिकी अन्तरिक्ष कार्यक्रमों एवं शिक्षा प्रणाली में योगदान के लिए मरणोपरांत देश का सर्वोच्च नागरिक सम्मान 'द प्रेसिडेंसियल मेडल ऑफ फ्रीडम' से सम्मानित किया जाएगा।

भारत की पहली अन्तरिक्ष यात्री कल्पना चावला ने हम सबको गौरवान्वित किया है। भारतीय अमेरिकी अन्तरिक्ष यात्री सुनीता विलियम्स ने 2012 के 17 सितम्बर को अन्तर्राष्ट्रीय अन्तरिक्ष स्टेशन की कमान संभाली और वह ऐसा करने वाली इतिहास की दूसरी महिला बन गयीं। इससे पहले यह रिकार्ड पेग्गी व्हिटसन के नाम था। चार माह तक कक्षा में रहने के बाद सुनीता और उनके दो सहयोगी यूरी मालेनचेंको और अकी होशिदे 19 नवम्बर 2012 को धरती पर लौट आए। दो लम्बे अंतरिक्ष मिशन में सुनीता कुल 322 दिन अन्तरिक्ष में बिता चुकी हैं। अन्तरिक्ष में अबतक वह सात बार चहलकदमी कर चुकी हैं जिसमें उन्हें 50 घंटे 40 मिनट का समय लगा।

नासा ने पहली बार भावी अन्तरिक्ष यात्रियों के एक समूह का चुनाव किया है जिसमें आधी महिलाएँ हैं।

लियू यांग के बाद चीन की दूसरी अन्तरिक्ष यात्री यांग यापिंग चीन की दूसरी महिला हैं जिन्होंने अन्तरिक्ष में व्याख्यान दिया।

बछेन्द्री पाल ने दुनिया की सबसे ऊँची चोटी माउंट एवरेस्ट पर अपना तिरंगा झंडा फहराकर पहली भारतीय महिला के गौरव की शान रखी।

2011 में माउंट एवरेस्ट पर भारतीय तिरंगा फहराने वाली वायुसेना की अधिकारी और बिहार की बेटी स्क्वाड्रन लीडर निरूपमा पांडेय ने एवरेस्ट फतह कर महिलाओं के साथ-साथ पूरे देश को गौरवान्वित किया।

अरूणाचल प्रदेश की अंशु जनशेनपा ने एवरेस्ट की चोटी पर दस दिनों के भीतर दो बार चढ़ाई कर पर्वतारोहण का नया रिकार्ड बनाया। वह एक ही सत्र में एवरेस्ट पर दो बार चढ़ने वाली विश्व की पहली महिला है।

माउंट एवरेस्ट पर पहुंचने वाली भारत की 46 वर्षीया महिला पर्वतारोही प्रेमलता अग्रवाल, यूरोप के 'माउंट एल्ब्रस' को जीतने में सफल रहीं। अपनी दस सदस्यीय टीम के साथ 05 अगस्त 2012 को यात्रा शुरू कर 12 अगस्त को प्रातःकाल वह शिखर पर पहुँचीं। 'माउंट एल्ब्रस' यूरोप और एशिया के बीच में स्थित है। पर्वतारोही ममता सोढ़ा को 'पद्मश्री' से सम्मानित किया गया।

काठमांडु की पूर्व राष्ट्रीय बॉलीबॉल खिलाड़ी अरूणिमा सिन्हा जिसे अपराधियों ने चलती ट्रेन से नीचे फेंक दिया था, जिससे वह बाँया पैर गँवा चुकी थी। अंग गँवाकर भी उसने एवरेस्ट फतह कर इतिहास रच दिया। इसके लिए इन्हें 'युवा पुरस्कार' दिया गया।

सऊदी अरब जैसे रूढ़ीवादी मुस्लिम देश की निवासी राहा मोहर्रक एवरेस्ट फतह कर, एवरेस्ट पर चढ़ने वाली सऊदी अरब की पहली महिला बन गयी।

अरुणाचल प्रदेश की दो महिला पर्वतारोहियों ने हाल ही में विश्व के दूसरे सबसे लम्बे ग्लेशियर 'बारा सिगड़ी' को फतह कर एक बार फिर अपने राज्य को गौरवान्वित किया।

विश्व के पाँचवें सबसे बड़े रेगिस्तान को पैदल पार करनेवाली महाराष्ट्र की 33 वर्षिया युवती सुचेता खाड़ेठानकर पहली भारतीय महिला हैं। मंगोलिया का यह वीरान रेगिस्तान 1636 कि.मी. फैला हुआ है, जो अपने-आप में एक दहकते भू-भाग से कम नहीं है। इस सफलता से उनका उत्साह दो गुना बढ़ गया है। अब वह नेपाल, भूटान, भारत, पाकिस्तान में फैली हिमालय की पर्वतश्रृंखलाओं पर ट्रेकिंग करने की योजना बना रही हैं।

आज सारे अवरोधों को तोड़कर देश की महिलाएँ हर जगह अपनी श्रेष्ठता सिद्ध कर रही हैं। ये सफल हैं, प्रभावी हैं। इनकी सफलता हर क्षेत्र में दूसरों के लिए प्रेरक है। कम्पनियों में सीइओ पद पर महिलाओं का बर्चस्व बढ़ा है। आइटी और सौफ्टवेयर कम्पनियों में इनकी संख्या ज्यादा है। देश के लगभग 25 लाख छोटे और मझोले

उद्योगों की बागडोर महिलाएँ ही संभाल रही हैं।

चन्दा कोचर भारतीय महिलाओं की प्रेरणा हैं। 'आइसीआइसीआई' की सीइओ चन्दा कोचर और 'पेप्सिको' की अध्यक्ष इंदिरा नुई ने कामयाबी के नए दौर की शुरुआत की। आयल ट्रेडिंग ऐसा क्षेत्र है जिसमें महिलाएँ अपनी पहचान बना रही हैं। आज महिलाएँ बड़ी-बड़ी कम्पनियों में टॉप पोस्ट संभाल रही हैं और अपनी काबिलियत साबित कर रही हैं। समय आने पर ये भारतीय महिलाएँ अपने परिवार की जिम्मेवारी उठाने में भी पीछे नहीं रहतीं।

आज भारतीय कम्पनियों में शीर्ष पदों के लिए महिलाओं की माँग तेजी से बढ़ रही है। देश के कारोबारी क्षेत्र में शीर्ष पदों पर महिलाओं के बढ़ते कदम को प्रेरणात्मक बदलाव के रूप में देखा जा सकता है।

कई बैंकों में महिलाएँ शीर्ष पदों पर पहुँच चुकी हैं। देश के सबसे बड़े बैंक, 'भारतीय स्टेट बैंक' की प्रबंध निदेशक के पद पर 'अरूंधती भट्टाचार्य' को नियुक्त किया गया है, तथा देश की पहली 'महिला भारतीय बैंक' की मुख्य कार्यकारी अधिकारी 'उषा अनंता सुब्रमण्यम' को बनाया गया है। इन दोनों बैंकों में प्रबंध निदेशक पद पर पहली बार महिलाओं की नियुक्ति से स्पष्ट है कि महिलाओं के हौसलों को एक नयी बुलंदी मिल रही है और आगे चलकर ये अपनी सफलता का परचम जरूर लहरायेंगी। बैंकिंग क्षेत्र में निचले पायदान पर बड़ी संख्या में महिलाएँ काम कर रही हैं। इस वक्त तीन राष्ट्रीयकृत बैंकों में प्रमुख पद महिला प्रबंधकों के हाथो में है। 'बैंक ऑफ इंडिया' की अध्यक्ष और प्रबंध निदेशक, 'विजयालक्ष्मी आर.अय्यर', 'यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया' की प्रमुख, 'अर्चना भार्गव' और 'इलाहाबाद बैंक' की अध्यक्ष और प्रबंध निदेशक, 'शुभलक्ष्मी पानसे', निजी क्षेत्र में अभी 'चंदा कोचर' 'आइसीआइसीआई बैंक' की प्रबंध निदेशक और मुख्य कार्यकारी अधिकारी हैं, जबकि 'शिखा शर्मा' 'एक्सिस बैंक' की मुख्य कार्यकारी अधिकारी हैं। भारतीय रिजर्व बैंक में भी महिलाएँ कई प्रमुख

पदों पर पदस्थापित रही हैं। इनमें हाल के वर्षों में प्रमुख हैं केजे उदेशी, श्यामला गोपीनाथ और उषा थोराट। ये सभी इस बैंक की डिप्टी गवर्नर रह चुकी हैं।

'उषा सांगवान' 'भारतीय जीवन बीमा निगम' की पहली महिला मैनेजिंग डायरेक्टर बनी हैं तथा 'सुषमा सिंह' पूर्व आइएएस अधिकारी 'मुख्य सूचना आयुक्त' नियुक्त की गयी हैं।

आज महिलाएँ न केवल अपने देश की कम्पनियों में शीर्ष स्थानों पर पदस्थापित हैं बल्कि विदेशी कम्पनियों के शीर्ष पद भी प्राप्त कर रही हैं। 'यूबीएस' की प्रमुख 'मनीषा गोइरथ्रा', 'क्रेडिट सुइस' की 'बेदिका भंडारकर', 'जेपी मार्गेन' की 'कल्पना मोरपरिया', 'एचएसबीसी' की निदेशक 'नयना लाल किदवई' और मुम्बई की 'आयशा डी सिक्वेरिया' 'निवेश बैंकिंग कम्पनी मार्गन स्टेनली' की नयी एमडी बनी हैं।

परम्परागत रूप से तेल उद्योग को पुरुषों का गढ़ माना जाता रहा है किन्तु इस गढ़ के दीवारों में भी सेंध लग चुकी है। 'निशी वासुदेव' 'हिन्दुस्तान पेट्रोलियम कारपोरेशन लिमिटेड' की सीएमडी बनी हैं। किसी भी तेल कम्पनी की वह पहली महिला प्रमुख हैं। अभी दुनिया की चुनिंदा तेल कम्पनियों की मुखिया महिलाएँ हैं।

'पूनम खेत्रपाल सिंह' ने 'विश्व स्वास्थ्य संगठन दक्षिण-पूर्व एशिया' की क्षेत्रीय निदेशक का पदभार संभाल लिया है। नागालैंड की पहली महिला शिक्षाविद् 'डॉ. कीलेम सुंगला' को 'संघ लोक सेवा आयोग' (यूपीएससी) के सदस्य के तौर पर नियुक्त किया गया है। यह आयोग सिविल सेवा परीक्षा में आयोजन के जरिए आइएएस, आइपीएस और आइएफएस सहित अन्य अधिकारियों का चुनाव करता है। तमिलनाडु की 'ललिता कुमार मंगलम' को 'महिला आयोग' का नया अध्यक्ष बनाया गया है।

वरिष्ठ पुलिस अधिकारी 'अरूणा बहुगुणा' को हैदराबाद स्थित 'राष्ट्रीय पुलिस अकादमी' का प्रमुख नियुक्त किया गया है। इस पद

पर पहुँचने वाली यह पहली महिला निदेशक बनीं। आइपीएस 'अर्चना रामसुन्दरम' ने 'सीबीआई' के अतिरिक्त निदेशक का पदभार संभाला। आनन्दी बेन पटेल ने गुजरात में पहली महिला मुख्यमंत्री के रूप में शपथ ली।

मायावती चौथी बार बसपा की राष्ट्रीय अध्यक्ष बनीं। सुमित्रा महाजन दूसरी 'महिला' लोकसभा अध्यक्ष बनायी गयी हैं।

तेजाबी हमलों को रोकने की मुहिम छेड़नेवाली लक्ष्मी को अमेरिका के प्रतिष्ठित 'इंटरनेशनल वुमन ऑफ द करेज अवार्ड' को मिशेल ओबामा ने प्रदान किया।

गायिका 'बेगम परबीन सुल्ताना' और 'डॉ. नीलम क्लेर' को भी 'पद्मभूषण' मिला। 'भारत नाट्यम नृत्यांगना मालविका साराभाई' को उनकी अद्वितीय कला और समर्पण के लिए 'राष्ट्रपति' ने सम्मानित किया।

सुनीता नारायण 'पर्यावरण' की तेज-तर्रार योद्धा हैं। साथ ही समाज की हरित विकास की समर्थक पर्यावरण विद हैं। उनका कहना है कि वातावरण में फैलती अशुद्धता, प्रकृति और वातावरण की होती दुर्दशा से सबसे ज्यादा नुकसान, महिलाओं, बच्चों और गरीबों को होता है। वातावरण की सुरक्षा के लिए जागरूकता फैलाने की जिम्मेदारी महिलाएं सफलतापूर्वक उठा सकती हैं। मेधा पाटकर को 'नर्मदा घाटी की आवाज' के रूप में पूरी दुनिया जानती है। इन्होंने 37 हजार गाँवों के लोगों को अधिकार दिलाने के लिए लड़ाई लड़ी है।

सीआरपीएफ दुनिया का ऐसा पहला अर्द्धसैनिक बल है जिसके पास अब अपना महिला बैंड है। महिला बैंड की प्लाटून कमांडर की भूमिका हरियाणा की जींद जिले की सीआरपीएफ सब इंस्पेक्टर दर्शना कुमारी संभाल रही हैं।

जम्मु कश्मीर में आगामी अमरनाथ यात्रा की सुरक्षा के लिए सीआरपीएफ इस बार महिला कमांडो दस्ते की तैनाती करेगी। फोर्स ने हाल ही में खास महिला टीम का गठन किया था। इस टीम के पास

बिना हथियार के भी लड़ाई लड़ने का कौशल होता है। फायरिंग में भी ये माहिर होती हैं। चुनिन्दा जगहों पर महिला कमांडों तैनात की जायेंगी।

भारतीय तटरक्षक बल (आइसीजी) की तीन महिला पायलटों ने अरब सागर के ऊपर टोही विमान से उड़ान भर कर इतिहास रच दिया। तटरक्षक बल के इतिहास में पहली बार आइसीजी डोर्नियर के साथ यह उड़ान पूर्णतः महिलाओं द्वारा पूरी की गयी। उड़ान दल में शामिल नीतू सिंह वार्तवाल, विमान की कप्तान सहायक कमांडेंट नेहा मुरदकर तथा सृष्टि सिंह सह-चालक शामिल थीं। 26 जून 2013 को जारी एक आधिकारिक विज्ञप्ति से यह जानकारी मिली।

अब बदल रहा है सोच और महिलाएँ दे रही हैं सुरक्षा। दुर्गा सप्तशती का श्लोक अब सही रूप में चरितार्थ हो रहा है

या देवी सर्वभूतेषु शक्ति रूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः।।

यह सोच की शारीरिक कष्ट जितना पुरुष सह सकते हैं उतना महिलाएँ नहीं, इस सोच को गलत साबित कर रही हैं महिलाएँ। महिला सशक्तीकरण को प्रोत्साहित करने के लिए कई संस्थाएँ महिलाओं को सिक्यूरिटी ट्रेनिंग दे रही हैं। इन महिलाओं में कुछ महिलाएँ गाँव की रहने वाली हैं, जो घर से कभी निकली नहीं थीं। आज वे सिक्यूरिटी गार्ड की जवाबदेही निभा रही हैं। कड़ाके की सर्दी हो या कड़ी धूप, वे अपने कर्तव्य पर डटी रहती हैं। धैर्य और साहस से सुरक्षा जैसी जवाबदेही निभा रही हैं। मैट्रिक योग्यताधारी महिलाओं को 45 दिनों की ट्रेनिंग दी जाती है। ट्रेनिंग के बाद प्रमाण-पत्र भी मिलता है।

ट्रैफिक को सुचारू रूप से चलाने के लिए महिला यातायात पुलिसकर्मियों का भी विशेष योगदान रहा है। तीखी धूप हो या बरसात या फिर कड़ाके की सर्दी, ये अपने चेहरे पर बिना कोई शिकन लाए ड्यूटी पर डटी रहती हैं। ये ट्रैफिक को उतनी ही निपुणता से संभालती हैं जितना पुलिसकर्मी।

इससे महिलाएँ अपने में बदलाव महसूस करती हैं और साहसी बनती हैं। आत्मविश्वासी बनती हैं। यह एक जिम्मेदार पद है।

रक्षा मामलों पर बनी संसदीय स्थायी समिति ने भारत की तीनों सेनाओं समेत सशस्त्र बलों में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने पर जोर दिया है। समिति का कहना है कि रक्षा मंत्रालय, राष्ट्रीय रक्षा अकादमी (एनडीए) के जरिए सशस्त्र बलों में, बिना किसी भेद-भाव के बड़ी संख्या में महिलाओं की नियुक्ति हो। मंत्रालय का ऐसा बुनियादी ढांचा तैयार किया जाए जिससे नए विषयों के लिए महिला अधिकारियों को शामिल किया जा सके और एनडीए में प्रवेश का मार्ग प्रशस्त किया जा सके। लड़कियों के लिए सैनिक स्कूल खोला जाए जिससे सेनाओं और सशस्त्र बलों में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने में सुविधा हो।

बीते कुछ वर्षों में सशस्त्र बलों में महिलाओं का प्रतिनिधित्व तेजी से बढ़ा है। महिलाओं का प्रतिशत थल सेना में 3.3 फीसदी, नौसेना में 3.9 फीसदी और भारतीय वायु सेना में 10.04 प्रतिशत है। उनके अनुसार जबसे सशस्त्र बलों में महिलाओं को शामिल किया गया है तब से आर्मी, नेवी, और एयरफोर्स में काफी संख्या में महिलाएँ कार्यरत हैं। ये महिलाएँ सिग्नल्स, उड्डयन, खुफिया तंत्र, तोपखाना, ट्रैफिक कंट्रोलर और वायुरक्षण स्ट्रीम में अधिकतम 14 साल तक सेवाएँ दे सकती हैं।

इंदिरा गांधी अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे पर जल्द ही महिला कमांडों का दस्ता सुरक्षा का जिम्मा संभालेगा। इसके लिए सीआइएसएफ की 10 महिला सुरक्षा कर्मियों को विशेष प्रशिक्षण दिया जा रहा है।

आमतौर से महिलाओं को शारीरिक रूप से पुरुषों से कमजोर समझे जाने के कारण खतरे और परिश्रम वाले काम से इन्हें दूर रखा जाता है, लेकिन पुरुषों के वर्चस्व वाले फायर फाइटिंग क्षेत्र से भी महिलाएँ जुड़ी हैं। महिला पुलिसकर्मियों को महिला नक्सलियों से भिड़ने के लिए कमांडो फाइटिंग ट्रेनिंग दी जाएगी। पुलिस भर्ती में 35 प्रतिशत महिलाओं को आरक्षण दिया जाएगा। अब 15 हजार से

अधिक तक, महिला पुलिसकर्मियों की संख्या बढ़ाने की तैयारी हो रही है। इससे महिला सशक्तीकरण को बढ़ावा मिलेगा।

एयर इंडिया के विमानों में अब महिलाएँ भी बॉस बन सकेंगी। अभी तक यह सम्मान केवल पुरुषों के लिए ही आरक्षित था। अब महिलाएँ भी फ्लाइट में कर्मचारियों की योग्यता और वरिष्ठता तय करेंगी।

भारतीय गणतंत्र के इतिहास में पहली बार किसी महिला ने वायुसेना की परेड की कमान संभाली। राजस्थान की सीकर की फ्लाइट लेफ्टिनेंट स्नेहा शेखावत ने 63वें गणतंत्र दिवस परेड में वायु सेना का नेतृत्व किया। परेड में 144 सदस्यीय दस्ते में शेखावत के साथ तीन अन्य फ्लाईंग अफसर हीनापुरी, अनुपम चौधरी और पूजा नेगी शामिल थीं।

भारत के इतिहास में ऐसा पहली बार हुआ जब दुनिया के सबसे शक्तिशाली देश अमेरिका के **राष्ट्रपति बराक ओबामा बतौर मुख्य अतिथि** भारत के 66वें गणतंत्र दिवस समारोह में शामिल हुए। इस राष्ट्रीय दिवस पर उनके आगमन पर राष्ट्रपति भवन में उन्हें विंग कमांडर पूजा ठाकुर की अगुआई में **'गार्ड् ऑफ ऑनर'** दिया गया। इसके बाद उन्हें 21 तोपों की सलामी दी गयी। यह पहला मौका था जब राष्ट्रपति भवन में किसी मेहमान राष्ट्राध्यक्ष को महिला सैन्य अधिकारी के नेतृत्व में तीनों सेनाओं के जवानों ने यह सम्मान दिया।

नारी शक्ति का दबदबा और एक नया रूप गणतंत्र दिवस के दिन देश में देखने को मिला। इस बार दिल्ली के राजपथ पर मुख्य आकर्षण तीनों सेनाओं की महिला अधिकारियों का दस्ता था। भारत के 66वें गणतंत्र दिवस परेड की विषयवस्तु भी **नारी शक्ति** ही था। इस राष्ट्रीय दिवस पर पहली बार सेना के तीनों अंगों थल सेना, वायु सेना और नौ सेना की महिला सैनिक गणतंत्र दिवस परेड में शामिल हुई।

अमेरिकी **राष्ट्रपति बराक ओबामा** ने महिलाओं की तारीफ

करते हुए कहा ''हम अपने अनुभवों के आधार पर कह सकते हैं कि एक राष्ट्र तभी सफल होता है जब वहाँ की महिलाएँ सफल होती हैं।'' **सेना में भारतीय महिलाओं के शानदार प्रदर्शन को उन्होंने अपनी यात्रा की सबसे पसंदीदा बात बताया।** सच में देश की ताकत नारी शक्ति है। आज हमारी नारी हर जगह खड़ी है। क्या धरती, क्या आसमान और क्या पाताल। सभी जगह वह सफल रही है। इस दुनिया में उसके लिए कुछ भी असंभव नहीं है।

वर्ष 2015 में महिलाओं ने हर क्षेत्र में सफलता हासिल की। फार्च्युन ने अरुंधती भट्टाचार्य को कारोबार जगत की 'सबसे शक्तिशाली महिला' करार दिया। दूसरा स्थान चन्दा कोचर और तीसरा शिखा शर्मा को मिला।

दीपिका पादुकोण ने 'आइफा, फिल्म फेयर, स्टार गिल्ड, स्क्रीन अवार्ड' आदि में 'सर्वश्रेष्ठ अभिनेत्री' का पुरस्कार प्राप्त किया। विद्या बालन को 'पद्मश्री' से भी सम्मानित किया गया। तनूजा को 'फिल्म फेयर लाइफटाइम अचीवमेंट' अवार्ड दिया गया। गुलाबी गैंग के लिए जूही चावला को 'दादा साहब फाल्के' अकादमी सम्मान दिया गया।

मंगलौर स्थित एक मंदिर में पारम्परिक रीतियों को तोड़ते हुए वर्ष 2014 के दीवाली पर 5000 से अधिक विधवाओं ने पूजा की। यह फैसला सभी समुदायों की औरतों को समाज की मुख्यधारा में लाने के लिए किया गया।

मेजर मित्ताली मधुमिता भारत की पहली ऐसी महिला अधिकारी हैं, जिन्हें 'वीरता पुरस्कार' मिला। शांति दूत मदर टेरेसा भारतवासी ही थीं जिन्हें शांति और सेवा के लिए 'नोवेल पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। कंचन चौधरी भट्टाचार्य भारत की प्रथम पुलिस निदेशक बनीं। स्वर साम्राज्ञी भारतरत्न लता मंगेशकर की सुमधुर आवाज आज भी लोगों के कानों में मिश्री घोल रही है। गायन के क्षेत्र में ये अनेक 'राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय' पुरस्कार प्राप्त कर चुकी हैं।

एक अध्ययन के मुताबिक पिछले 100 साल में महिलाओं का

'आइक्यू लेवल' पुरुषों से ज्यादा पाया गया है।

अपने देश में 2001 में महिलाओं की साक्षरता दर 53 प्रतिशत था और 2011-12 में 65 प्रतिशत हो गया है। प्रारंभिक, मध्य और उच्च कक्षाओं वाले विद्यालयों में पुरुष शिक्षकों के बजाए महिला शिक्षिकाओं की संख्या ज्यादा है। शिक्षण क्षेत्र में महिलाओं की दावेदारी साल-दर-साल बढ़ती ही जा रही है।

बीते एक दशक में शहरी कामकाजी महिलाओं की आय दोगुनी हो गयी है। 41 प्रतिशत महिलाओं को पिछले दशक में रिसर्च के लिए ग्रांट मिला। 14 प्रतिशत महिलाएँ भारतीय कम्पनियों में शीर्ष पद पर हैं। देश के कुल पायलटों में 12 प्रतिशत महिला पायलट हैं। डिफेंस में 8 प्रतिशत महिला अफसर हैं। पॉलिटिक्स में भी महिलाएँ अपनी जीत की परचम फहरा रही हैं। नवगठित सरकार में शामिल कुल 45 मंत्रियों में 07 महिलाएँ हैं। इन महिला मंत्रियों को महत्वपूर्ण मंत्रालय भी दिए गए हैं। मौजूदा लोकसभा में 61 महिलाएँ चुनकर पहुँची हैं और पहली बार छह महिलाएँ कैबिनेट मंत्री बनी हैं। सुषमा स्वराज, विदेश मंत्री बनायी गयी हैं। वह सबसे लोकप्रिय विदेश मंत्री के रूप में सामने आयी हैं।

पिछले एक दशक में महिलाएँ हायर एजुकेशन में 70 फीसदी बढ़ी हैं। व्यावसायिक शिक्षा हासिल करने वाली महिलाएँ यहाँ सबसे ज्यादा हैं। 60 प्रतिशत ग्रामीण महिलाएँ कृषि क्षेत्र में कार्यरत हैं। आज महिलाओं की सफलता दूसरों के लिए प्रेरक बन गयी है।

महिलाओं के इस योगदान को देखकर यह तो साफ है कि आनेवाले समय में देश की बागडोर महिलाएँ संभालेंगी।

आज के दौर में 65 प्रतिशत से ज्यादा महिलाएँ खूबसूरत, आकर्षक और नाजुक दिखने के बजाए आत्मविश्वास से भरपूर दिखना चाहती हैं। आत्मविश्वास ही लोगों को अंदर से खूबसूरत और आकर्षक बनाता है ''Hansome is that, handsome does.''

भोपाल की 65 वर्षीय पार्वती आर्य ने एशिया की पहली ट्रक

ड्राइवर बनकर अपने साथ-साथ प्रदेश का नाम रौशन किया। कुछ महिलाएँ इतनी बहादुर हैं जो बारूदी सुरंग साफ कर अपना पेट पालती हैं। यह काम महिलाओं के लिए कठिन और खतरनाक है, फिर भी अपने मनोबल को ऊँचा रखने वाली ऐसी महिलाएँ कठिन-से-कठिन काम को आसान बना देती हैं। आज महिलाएँ कार ड्राइविंग का प्रशिक्षण दे रही हैं।

जानी-मानी लेखिका अनीता देसाई को 'पद्मभूषण' सम्मान से सम्मानित किया गया। साहित्यकार मृदुला गर्ग को 'साहित्य अकादमी पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। कवियत्री और लेखिका पदमा सचदेव को 'गंगा शंकर सिंह पुरस्कार' दिया गया। दुनिया भर के लेखकों की सूची में महिलाएँ तेजी से अपनी पहचान बनाने लगी हैं।

महिलाएँ शक्तिस्वरूपा हैं। इनके सहयोग के बिना हम किसी भी क्षेत्र में सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक विकास की कल्पना भी नहीं कर सकते। हरियाणा सरकार ने महिलाओं के लिए तीन राज्य स्तरीय महिला पुरस्कार शुरू की है 'इंदिरा गांधी महिला शक्ति पुरस्कार', 'कल्पना चावला शौर्य पुरस्कार' और 'बहन शन्नो देवी पंचायती राज पुरस्कार।'

'इंदिरा गांधी महिला शक्ति पुरस्कार' में एक लाख नकद पुरस्कार है। उन महिलाओं को यह पुरस्कार दिया जाएगा जिन्होंने निराश्रित महिलाओं, विकलांगों और बच्चों की मदद की है।

'कल्पना चावला शौर्य पुरस्कार' उन महिलाओं को दिया जाएगा जिन्होंने अपना जीवन जोखिम में डालकर साहस दिखलाया है। इसी तरह 'बहन शन्नो देवी पुरस्कार' उन महिलाओं को दिया जाएगा जिन्होंने महिला साक्षरता, स्वास्थ्य एवं पोषाहार, जल स्वच्छता, महिला सशक्तीकरण बढ़ाने एवं महिला उत्पीड़न रोकने का शानदार कार्य किया है।

केन्द्र सरकार ने हर जिले में वर्किंग वुमन हॉस्टल बनाने का निर्णय लिया है। इस हॉस्टल में तलाकशुदा, विधवा या अकेली रहने

को मजबूर लड़कियाँ भी सुरक्षित रह सकेंगी। कामकाजी महिलाओं के बच्चों की देखरेख के लिए क्रिच सेवा के विस्तार का निर्णय भी लिया गया है।

आज की महिलाएँ कुरीतियों को रंगमंच के माध्यम से समाप्त करने की कोशिश कर रही हैं। उन्हें विश्वास है कि समाज में हो रहे नारी उत्पीड़न, महिला सुरक्षा से संबंधित ढेर सारी चुनौतियाँ, बलात्कार संबंधित मुद्दों के बारे में जागरूकता रंगमंच के माध्यम से फैलायी जा सकती है और इसके जरिए बदलाव लाया जा सकता है। काव्य के सभी भेदों में नाटक एवं रंगमंच को इसीलिए 'काव्येषु नाटकं रम्यम्' कहा गया है कि उससे शिष्ट आदेश, उत्कृष्ट प्रेरणा और परिष्कृत परिवर्तन घटित होते हैं। नाटक एवं रंगमंच की महत्ता इसी से सिद्ध है कि उसे पंचम वेद भी कहा गया है।

महिला उद्यमियों के लिए अपने देश में बेहतर माहौल बन रहा है। एक अध्ययन में पाया गया कि पिछले पाँच साल में भारतीय महिलाएँ अपने कारोबार को 90 फीसदी बढ़ाने में सफल हुई हैं। वहीं अमेरिकी महिलाएँ 50 फीसदी और ब्रिटिश महिला उद्यमी कारोबार को 24 फीसदी ही बढ़ा पायी हैं।

रेल इंजन चलाने में पुरुषों का एकाधिकार था, किन्तु कुछ अलग करने की चाह और साहसिक कार्य करने का जज्बा रखने वाली महिलाएँ रेल चलाने की चुनौती का भी सामना कर रही हैं। शिवानी भारतीय रेलवे की एकलौती महिला मशीनिस्ट हैं। इनका काम ट्रेन की पहियों को सुधारना है। काम टेक्निकल और मुश्किल होने पर भी मेहनत से काम कर इन्होंने सफलता पायी है।

भारत में लगभग छह करोड़ महिलाएँ ऑनलाइन हैं और वे अपने दैनिक जीवन में इंटरनेट का इस्तेमाल धड़ल्ले से कर रही हैं, चूँकि अब घरों में, ऑफिसों में इंटरनेट की सुविधा आसानी से उपलब्ध है, इसलिए महिलाएँ बड़े मजे से इस सुविधा का लाभ उठा रही हैं। एक अध्ययन में पाया गया कि भारत में 15 करोड़ युजर्स में 40 प्रतिशत

महिलाएँ हैं और इसमें से 2 करोड़ 40 लाख महिलाएँ ई-मेल चेक करने, सोशल नेटवर्किंग साइट्स पर जाने और ऑनलाइन शॉपिंग करने के लिए प्रतिदिन लॉगइन करती हैं।

आज महिलाओं में समाजसेवा और समाज सुधार की लगन और जज्बा देखकर गर्व होता है। इस लगन और ललक ने कुछ महिलाओं को गाँव की ओर खींच लाया है। गाँव में ये बालक-बालिकाओं के लिए शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में काम कर रही हैं। बहुत सी महिलाएँ दलित परिवार की किशोरियों और निःसक्त महिलाओं को साक्षर, स्वावलम्बी और जागरूक बनाने में लगी हुई हैं। आज समाज-सेवा की मुहिम व्यापक रूप ले चुकी है। बहुत सी महिलाएँ झुग्गी-झोपड़ियों में रहने वाली महिलाओं और बालक-बालिकाओं को साक्षर बनाने के साथ-साथ उन्हें रोजगार प्रशिक्षण देकर आत्म-निर्भर भी बना रही हैं। महिलाओं द्वारा बहुत सी संस्थाएँ बनायी जा रही हैं जिनका उद्देश्य बेटियों को शिक्षा से जोड़ना और आत्मनिर्भर बनाना है।

धनबाद की बीसीसीएल की 'नारी शक्ति समिति' महिला सशक्तीकरण के लिए बहुत बड़ी उपलब्धि है। यहाँ हजारों गरीब, असहाय महिलाओं को साक्षर, जागरूक और आत्मनिर्भर बनाया जाता है। इस संस्था को शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वरोजगार, पर्यावरण और नशा उन्मूलन के क्षेत्र में प्रशंसनीय कार्य के लिए सर्वोत्तम संस्था के रूप में 'आइकॉन अवार्ड' से भी सम्मानित किया गया है।

एल एस कॉलेज मुजफ्फरपुर की संस्कृत विभाग की रीडर संगीता अग्रवाल, जो नेत्रहीन हैं 'शुभम् संस्था' की स्थापना कर नेत्रहीन और मूकवधिर बच्चों को शिक्षित कर रही हैं। ये अध्यापन, समाजसेवा के साथ-साथ अपंगों को जीने की राह सिखा रही हैं। इनकी प्रशंसनीय सेवा के लिए कई सरकारी और गैर सरकारी संस्थाएँ इन्हें सम्मानित कर चुकी हैं।

कुछ महिलाएँ शिक्षा और रेमेडियल थेरेपी से मंद बुद्धि के बच्चों का जीवन संवारने में लगी हुई हैं। उनके जीवन में रोशनी ला

रही हैं।

मधुबनी की माधवी, पूनम और शोभा ईंट-भट्ठे, गैरेज, होटल में काम करने तथा बकरी चराने वाले बच्चों को शिक्षित कर रही हैं।

नालंदा जिले के पावापुरी की रहने वाली इंदु देवी कश्यप जो राष्ट्रपति पुरस्कार से पुरस्कृत हैं, अनाथ और गरीब बच्चों की मसीहा बनी हैं। इसी तरह से अनेक महिलाएँ समाज सेवा को अपने जीवन का लक्ष्य मानकर गरीब, असहाय महिलाओं, बालिकाओं और बालकों के जीवन संवारने में लगी हुई हैं।

समाज सेवा का जज्बा, अनोखा जुनून से पूर्ण जयंती झा ने 13 वर्षों में हजार से अधिक जोड़ियाँ मिलायी। 'एफएलओ (फिक्की लेडी ऑर्गेनाइजेशन)' द्वारा महिलाओं को उद्यमी बनाने के लिए काफी प्रयास किए जा रहे हैं जिससे सम्पूर्ण रूप से महिला सशक्तीकरण हो सके। इसके लिए इन्हें प्रशिक्षण भी दिया जा रहा है। ग्रामीण महिलाओं में उद्यमशीलता विकसित करने के लिए कार्यशाला और प्रशक्षिण कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। उन्हें लेटेस्ट तकनीक, डिजाइन और फिनिशींग का प्रशिक्षण दिया जाता है।

'नवार्ड परियोजना' के तहत महिलाओं को मसाला बनाने, पैकेजिंग, स्क्रीन प्रिंटिंग आदि का प्रशिक्षण दिया जाता है। प्रशिक्षण प्राप्त कर महिलाएँ मसाले बनाने से लेकर प्रिंटिग तक का कार्य करती हैं।

जब किसी काम को करने की दृढ़ इच्छा हो तो उम्र बाधक नहीं बन सकती है। बेंगलूर की दो वृद्ध महिलाओं ने बुजुर्गों और अनाथ बच्चों की मदद करने का लक्ष्य बनाया। विजयनगर गाँव की 77 वर्षीया पद्मा और 79 वर्षीया जयलक्ष्मी ने पिज्जा बेचकर उससे पैसे कमाकर एक ओल्डएज होम और एक बच्चों के लिए अनाथालय दोनों को अगल-बगल में बनवाया। यह सोचकर कि बच्चों का साथ मिलने से बुजुर्गों को राहत मिलेगी और बच्चों को बुजुर्गों का मार्गदर्शन मिलेगा।

राँची की विलोचन शर्मा, राँची ही नहीं आसपास एवं सुदूर गाँवों की महिलाओं के लिए एक शक्ति बनकर उभरी हैं। ये महिलाओं को स्वावलंबी बना रही हैं और टूटते परिवारों को जोड़ती हैं, चंद मिनटों में घरेलू मामलों को सुलझा देती हैं। सबको मार्गदर्शन देती हैं। यहाँ पर कविवर मैथिलीशरण गुप्त की पंक्ति सटीक है

''यही पशु प्रवृत्ति है कि आप ही सदा चरे,
वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिए मरे।''

स्वावलंबन की राह पर चलकर हर महिला अपने पैरों पर खड़ी हो रही हैं। घर-गृहस्थी की जिम्मेदारियों को बखूबी निभाने के साथ-साथ अर्थोपार्जन में भी परिवार का हाथ बंटाकर घर की अर्थव्यवस्था को मजबूत कर रही हैं। बहुत सी महिलाएँ बुटिक सेंटर खोलकर कमजोर और गरीब महिलाओं की सेवा कर रही हैं। आज महिलाएँ, महिलाओं का कौशल बढ़ाने का प्रयास कर रही हैं। अगरबत्ती व्यवसाय, वर्मी कम्पोस्ट का निर्माण और अन्य व्यवसाय कर खुद आत्मनिर्भर बन रही हैं और दूसरों को भी बना रही हैं। किशोरियों को साक्षर करने के साथ-साथ उन्हें सिलाई, कढ़ाई, बाँस द्वारा विभिन्न प्रकार के खिलौने तैयार करना सिखा रही हैं तथा पेंटिंग, जुडो-कराटे आदि का निःशुल्क प्रशिक्षण दे रही हैं।

कुछ महिलाएँ किसान बनकर जीने का राह ढूंढ़ती हैं। ऑफ सीजन में बेबीकॉर्न, शिमला मिर्च, फूलगोभी, बंदगोभी, नेनुआ, लौकी, खीरा, धनिया पत्ती, टमाटर और प्याज की खेती करती हैं। मशरूम का उत्पादन कर हजारों महिलाएँ आत्म निर्भर बन गयी हैं। कम परिश्रम में अधिक दाम मिल जाता है। मशरूम फायदेमंद भी है।

आज महिलाएँ डेयरी प्रोजेक्ट और सब्जी उत्पादन से भी आत्मनिर्भर बन रही हैं। वैसे तो पूरे देश की महिलाओं में आत्मनिर्भर बनने का भाव जगा है, लेकिन गुजरात, बिहार, राजस्थान, पंजाब, बंगाल और तमिलनाडु की महिलाओं में आत्मनिर्भर बनने की जैसे होड़ लगी है।

आज महिलाएँ नशाबंदी के खिलाफ अभियान छेड़कर शराबियों को नशा से मुक्ति दिलाने में अहम भूमिका निभा रही हैं। इस प्रकार आज की महिलाएँ घरेलू जिम्मेदारियों के साथ-साथ सामाजिक कार्यों में भी अपनी पहचान बना रही हैं। बच्चों और महिलाओं के बीच जगा रही हैं शिक्षा की लौ और कर्मठता का मिसाल कायम कर रही हैं।

हारवर्ड विश्वविद्यालय के मनोवैज्ञानिक और मशहूर चिंतक, विचारक स्टीवन पिंकर से एक साक्षात्कार के क्रम में यह प्रश्न पूछा गया कि अगर महिलाओं का विश्व में शासन हो तो क्या विश्व में अधिक शांति होगी ? स्टीवन पिंकर इसका उत्तर 'हाँ' में देते हैं। वे कहते हैं कि महिलाएँ शांति का प्रतीक होती हैं। इतिहास को उलटकर देखें, तो महिलाएँ हर दौर में शांति का अग्रदूत रही हैं और आने वाले समय में भी उनकी यही भूमिका रहेगी।

परम्परागत रूप से लड़ाई को जारी रखना तो पुरुषों का खेल है। महिलाओं का कभी कोई ऐसा फौज नहीं बना जो पड़ोसी गाँव में हमला कर दे। महिलाएँ तो हमेशा वही करती हैं जिससे हर हाल में शांतिपूर्ण माहौल बने जिससे वे अपने बच्चों का पालन-पोषण सही ढंग से कर सकें।

महिलाएँ पुरुषों की बनायी दुनिया में रहती हैं। अगर कुछ महिलाएँ राजनीति में अपनी पताका फहराई हैं तो वह भी पुरुषों के बनाए राजनीतिक लाईन पर ही। मार्गेरिट थैचर, गोल्डमीर और इंदिरा गांधी शक्तिशाली महिला थीं और समय पड़ने पर इन सबने अपने देश को युद्ध में उतार दिया। पिंकर का कहना है कि जब महिलाओं ने नेतृत्व संभाला तो सारी की सारी व्यवस्था पुरुषों की थी। महिलाएँ अपने स्टाइल में अधिक प्रभावशाली नेतृत्व प्रदान कर सकती हैं।

सूचना युग महिलाओं का युग है। पिंकर मानते हैं कि जहाँ महिला सशक्तीकरण हुआ है वहाँ हिंसा भी घटी है।

बौद्धधर्म के सर्वोच्च गुरू दलाई लामा ने भी इस बात का संकेत दिया कि उनका उत्तराधिकारी यानी अगला लामा कोई महिला

भी हो सकती है क्योंकि उनमें दूसरों के कल्याण के लिए ज्यादा संवेदनशीलता है।

इस प्रकार महिलाएँ बढ़ती जा रही हैं निरंतर.....अबाध.... निर्बाध। वक्त आगे बढ़ता जा रहा है। सदियाँ विकास की ओर अग्रसर हो रही हैं। आज हम इक्कीसवीं सदी के डेढ़ दशक में आ पहुँचे। वक्त ने नारी को, खुद को साबित कर, कुछ कर दिखाने का अवसर दिया है। नारी ने भी तमाम चुनौतियों पर खरा उतरकर अपनी काबिलियत की मिसाल कायम की है। नारी खुद में कई रूप समेटे है। वह कहीं स्वर साम्राज्ञी भारतरत्न लता मंगेशकर बनी, तो कहीं सर्वाधिक लोकप्रिय महिला विदेश मंत्री सुषमा स्वराज, वह कहीं कारोबार जगत की सबसे शक्तिशाली महिला अरूंधती भट्टाचार्य बनी, तो कहीं एशियाई खेलों की स्वर्णविजेता मुक्केबाज एम सी मैरी कोम, कहीं वह जानी-मानी लेखिका अनिता देसाई बनी तो कहीं भरतनाट्यम नृत्यांगना मालविका साराभाई, कहीं वह अंतरिक्ष पहुंचने वाली सुनीता विलियम्स बनी तो कहीं नारी को प्रेरित और जागृत करने वाली निर्भया।

कामयाबी ने एक बार जो उसका दामन पकड़ा तो हर कदम पर एक नयी उपलब्धि उसके कदम चूमने लगी। सच ही राष्ट्रकवि दिनकर ने कहा है

''चाहता प्रेमरस पाना तो
हिम्मत कर, बढ़कर बली हो जा।
मत सोच, मिलेगा क्या पीछे
पहले तो आप, स्वयं खो जा।।

■

संयुक्त परिवार की धुरी : नारी

परिवार एक तरह से मिनी प्रजातन्त्र है बल्कि यह एक छोटा राष्ट्र, एक छोटी इकाई के रूप में है। परिवार वह है जहां घर के सभी सदस्यों स्त्री पुरुष, बच्चे बूढ़े सबका समुचित सम्मान हो, सबके व्यक्तित्व के विकास की बात सोची जाए। परिवार का अर्थ है एक दूसरे के सुख दुःख में सहायता के साथ साथ सबकी उन्नति में यथासाध्य सहयोग करना। घर में जब प्रत्येक सदस्य एक-दूसरे के लिए त्याग करने को तत्पर रहें, एक की उन्नति सबकी उन्नति, एक की पीड़ा सबकी पीड़ा, अपना स्वार्थ दूसरों के स्वार्थ के साथ जुड़ा हो, तब समझना चाहिए हम पारिवारिक जीवन व्यतीत कर रहे हैं। दूसरे हमसे अच्छा खायें पीयें, पहने, घर की सुख सुविधा का उपभोग पहले दूसरे लोग करें। परिवार में प्रत्येक सदस्य का दायित्व होता है कि वे दूसरे की सुख शान्ति और विकास में सहायक बनें। परिवार का अर्थ ही है चारों तरफ से आई हुई सभी प्रकार की विपत्तियों का जो वारण करे, उन्हें हटाये और सुरक्षा दे परि+वार। घर में अच्छे विचार एवं श्रेष्ठ संस्कार का वातावरण हो जो बिखरते परिवार को जोड़ सके। इसके लिए जरूरत है नयी सोच, नया चिन्तन और नई दिशा की। पारिवारिक जीवन को स्वर्ग तुल्य बनाने का प्रयास करना चाहिए। जहां लोग एक दूसरे का अधिकार छीनना चाहते हों, एक दूसरे से ईर्ष्या करते हों अपने स्वार्थ

पर ही दृष्टि रखते हों, वहां परिवार कहां?

परिवार दो तरह का होता है संयुक्त परिवार और एकल परिवार। पहले संयुक्त परिवार भारतीय सामाजिक व्यवस्था की नींव हुआ करते थे। परिवार के स्वरूप स्वर्गीय, अतुलनीय और अद्‌भुत होते थे। संयुक्त परिवार संस्था में दादा दादी से पौत्र पौत्री तक तीन और उससे ज्यादा पीढ़ियां भी एक ही घर में रहती थीं, एक ही चौके में बना भोजन करतीं और सभी प्रकार के सुख दुख को बहुत ही खुशी खुशी निभाती थीं। परिवार में सभी सदस्यों का जीवन खुशियों से परिपूर्ण होता था। लोग स्वस्थ रहते थे, सात्विक आहार यानी भोजन पवित्र और स्वादपूर्ण होते थे जो जीवनशैली दीर्घायु बनाते थे। पारिवारिक जीवन आनन्दमय, खुशियों से भरा हुआ, नैतिकता से ओत प्रोत होता था। त्योहारों का स्वागत नृत्य, गायन और तरह तरह के भारतीय व्यंजन एवं पकवानों से होता था। भाई बहन का प्यार, माता पिता, दादा दादी का प्यार दुलार, पति पत्नी का प्रेम अद्वितीय होता था। खुशहाल पारिवारिक जीवन, हंसते खेलते मुस्कुराते बच्चे, मजबूत पारिवारिक मूल्य, सभी सदस्यों के एक साथ रहने से दायरा का बढ़ना, एक प्रबल सहारा, सामाजिक संबंधों का एक जाल सा बिछ जाता था। आज भी कहीं कहीं, इक्का दुक्का अपने देश में कई पीढ़ियों वाले लोग संयुक्त परिवार में साथ रहते हैं। कहीं भी जाएं, संयुक्त परिवार वाले लगभग हर जगह अपना एक रिश्तेदार खोज ही लेते हैं जिससे नैतिक और व्यावहारिक सहयोग मिलता है। ऐसे परिवार में प्रतिदिन जीवन में प्यार, सम्मान और सुरक्षा का एहसास होता है। हां, ऐसा परिवार हमारे लिए आम है लेकिन दुनिया के लिए यह बेहद खास और अद्‌भुत है। हमारी संस्कृति से सारी दुनिया खासकर पश्चिमी जगत् सम्मोहित है।

भारत में परम्परागत मूल्य आज भी मजबूत हैं। एक सर्वे का कहना है कि यहां 84 प्रतिशत लोग परिवार के साथ वक्त बिताना चाहते हैं। भारत एक परंपराप्रिय देश है। परिवार स्नेह सहयोग के आदान प्रदान का तन्त्र है। अधिक सुख सुविधा, अच्छा भोजन, वस्त्र, मनोरंजन,

शिक्षा, स्वास्थ्य मिले इससे ही मात्र परिवार की आवश्यकता पूरी नहीं हो जाती है, बल्कि इस छोटी इकाई में, छोटे क्षेत्र में ऐसा वातावरण बने जिससे इसमें पलनेवाले हर सदस्य, हर दृष्टि से समुन्नत, सुसंस्कृत बन सकें। इस मिनी 'प्रजातन्त्र' में सुसंस्कार का, नैतिक मूल्यों का प्रशिक्षण मिलता रहता है। सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास होता है। सद्‌भावनाएं यहां पल्लवित और पुष्पित होती हैं। यहां पारिवारिक क्लेश की गुंजाइश नहीं होती। एक व्यक्ति के हित से बड़ा होता है पूरे परिवार का हित और परिवार से बड़ा होता है समाज का हित।

19वीं शताब्दी के छठे सातवें दशक से संयुक्त परिवार बिखरने लगे। पहले भी पति पत्नी और उनके बच्चे मां बाप से अलग बस जाते थे लेकिन बहुत कम संख्या में। समाज में उन्हें निन्दित भाव से देखा जाता था। सातवें दशक में संयुक्त परिवार काफी संख्या में बिखरने लगे। कुछ लोगों की सोच है कि अलग रहते हुए अधिक समृद्ध और सम्पन्न जीवन जिया जा सकता है। इसी सोच से एकल परिवार का निर्माण होता है जिसमें पति पत्नी और उनके बच्चे ही मात्र शामिल हैं। परिवार का मुखिया यानी पति केवल अपनी पत्नी और अपने बच्चों के प्रति उत्तरदायी होता है। एकल परिवारों के प्रति बढ़ती दिलचस्पी के पीछे सबसे बड़ा कारण है कि अब पति पत्नी दोनों ही आर्थिक रूप से स्वतन्त्र रहना चाहते हैं। किसी का हस्तक्षेप ये बर्दाश्त नहीं करते। आर्थिक स्वावलम्बन और आत्मनिर्भरता कुछ ऐसे कारण हैं जिनकी वजह से संयुक्त परिवार टूटने लगे। पहले जहां पारिवारिक सदस्य हर छोटी मोटी जरूरतों के लिए एक दूसरे पर निर्भर करते थे वहीं अब लोग पूरी तरह से अपने पर ही आश्रित होने लगे हैं। साथ ही धैर्य एवं सहनशीलता की भी कमी और बढ़ती महंगाई इसका कारण है। इसी वजह से संयुक्त परिवार का स्थान पूर्ण रूप से एकल परिवार ने हथिया लिया है। 20 25 वर्षों में संयुक्त परिवार की संख्या में बहुत कमी आ गई है। आज भारत जो विश्वगुरु माना गया है, जिसने पूरे विश्व को मार्ग दर्शन दिया है साथ ही भारत पूरे विश्व को अपना एक परिवार

मानता आया है, उसी भारत की आज अपनी संयुक्त परिवार व्यवस्था टूट रही है। ऐसा लगता है कि संयुक्त परिवार व्यवस्था कुछ दिनों में भूतकाल की वस्तु बन जायगी। संयुक्त परिवार व्यवस्था में कुछ ऐसे मूल्य हैं जिनकी रक्षा अवश्य की जानी चाहिए। इसपर समाज शास्त्रियों, विद्वानों को विचार विमर्श एवं चिन्तन करना चाहिए।

संयुक्त परिवार टूटने के बाद नई संस्थाएं बन रही हैं जैसे वृद्धाश्रम, विधवाश्रम, विकलांगगृह आदि, लेकिन ये कारगर नहीं हैं। इससे इसमें रहनेवाले व्यक्तियों का व्यक्तित्व दब जाता है। उनमें आत्मसम्मान की भावना नहीं रह जाती है, चाहे ये संस्थाएं कितना ही सुचारूरूप से संचालित क्यों न हों। आश्रम में उनकी भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति भले ही हो जाए किन्तु भावात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति कभी नहीं हो सकती।

संयुक्त परिवार में प्रत्येक सदस्य सम्मानित सदस्य है। वह परिवार के सुख दुःख का भागी है। किसी प्रकार की विपत्ति या मुश्किल आने पर उसे परिवार में सुरक्षा मिलती है। बेरोजगारी या आर्थिक कठिनाई आने पर सुरक्षा मिलती है। बीमारी, शादी विवाह, मृत्यु आदि होने पर परिवार में स्नेह, प्यार तथा सान्त्वना के शब्द मिलते हैं जिससे कष्ट सहने की शक्ति मिलती है। बड़े भाई बहनों द्वारा छोटे भाई बहनों को भी वही प्यार मिलता है जो मां बाप का बच्चों के प्रति होता है। रामायण काल में परिवार में जिस मर्यादा का पालन किया गया है उसे राष्ट्रीय जीवन का धरोहर ही कहा जायगा। पारिवारिक जीवन में भाई भाई का प्रेम, पुरुषोत्तम राम के भाइयों की तरह ही हो तो क्यों आज हमारा परिवार बिखरता हुआ दिखाई देगा? राज्य संचालन और सुखभोग की कामना अपने छोटे भाई के लिए पुरुषोत्तम राम ने ठुकरा दिया। भरत को बड़े भाई द्वारा राज्य संचालन का अधिकार दिया गया। उन्होंने भी अपने सुख भोग को लात मारकर मात्र अग्रज की आज्ञा का पालन भर किया, तपस्वी की तरह उनके आने तक राज्य रक्षण किया।

परिवार में सच्ची पारिवारिक भावना के अभाव में परिवार

टूटते बिखरते जा रहे हैं। सच्ची पारिवारिक भावना का विकास तो तभी होता है जब परिवार का प्रत्येक सदस्य अपना अस्तित्व पूरे परिवार में एकाकार कर अभिन्न हो जाता है। परिवारों से मिलकर समाज और समाज से राष्ट्र बनता है।

आज दादा दादी परिवार रूपी रथ के पांचवें पहिए के रूप में निरर्थक माने जाने लगे हैं, जबकि उनका उपयोग उस चक्के की तरह होना चाहिए जो संकट काल के लिए सुरक्षित रखा जाता है। अब लोगों में आपस में पारिवारिक संबंध धीरे धीरे इतना कम हो रहा है कि एक धुंधली स्मृति के अतिरिक्त और कुछ नहीं रह गया है। मां बाप के प्रति दृष्टिकोण में भी धीरे धीरे बहुत परिवर्तन आ रहा है। अब वह दिन दूर नहीं जब बूढ़े लोग अपने पौत्रों और पौत्रियों के लिए बिल्कुल ही अपरिचित हो जायेंगे।

भारतीय परिवार की प्राचीन व्यवस्था को यानी संयुक्त परिवार व्यवस्था को पुनः स्थापित किया जाना चाहिए। यह असम्भव नहीं है। अभी भी इसे शुरू किया जा सकता है। शुरू में यदि अच्छे सम्बन्ध बन जायेंगे तो बाद के वर्षो में परिस्थितिवश अलग होने पर भी, संबंध अच्छे बने रहेंगे। इस प्रकार संयुक्त परिवार के मूल्यों की रक्षा हो सकेगी। यह एक ऐसी संस्था है जहां बच्चों का आर्थिक दृष्टि से स्थायी और सहानुभूतिपूर्ण वातावरण में पालन पोषण होता है। भावात्मक दृष्टि से भी संयुक्त परिवार बच्चों के विकास के लिए अनिवार्य है। उन्हें त्याग, सहिष्णुता, उदारता और अनुशासन की भी ऐसे परिवार में शिक्षा मिलती है।

आज पिता अपनी रोजी रोटी के लिए पूरे दिन व्यस्त रहते हैं। मां भी सामाजिक समारोहों या नौकरी में व्यस्त रहती है। उन्हें अपने कार्य से ही अवकाश नहीं मिलता है। किसी के पास बच्चों की देखभाल के लिए समय नहीं है। बच्चों की सभी भौतिक आवश्यकताएं पूरी की जाती हैं, उनकी देखभाल के लिए आया रखी जाती है, पढ़ाने के लिए अच्छे शिक्षक रखे जाते हैं, अच्छे विद्यालय में पढ़ाने के लिए उनका

नामांकन कराया जाता है किन्तु बच्चों को माता पिता का प्यार नहीं मिलता है। बच्चों को प्यार से वंचित होना पड़ता है। यह अभाव मां बाप की देखभाल से ही पूरा हो सकता है। दादा दादी के प्यार से ही पूरा हो सकता है। यदि भारतीय संयुक्त परिवार को बचाना है तो इस प्राचीन व्यवस्था को पुनः शीघ्रातिशीघ्र स्थापित करने पर पहल करना होगा। नारी ही इस बिखरते हुए संयुक्त परिवार को फिर से एक सूत्र में जोड़ सकती है। संयुक्त परिवार के स्थायी एवं सुदृढ़ निर्माण में नारी की भूमिका अहम् है। नारी परिवार की नींव है। रिश्तों की, नातों की जड़ है। वह परिवार की धुरी है। उसके संवेदन सूत्र ही परिवार को आपस में जोड़े रखते हैं। इस सूत्र के टूटते ही परिवार बिखर जाते हैं, अलग हो जाते हैं।

नारी के बिना परिवार की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। नारी ही परिवार को संवारती है, स्वर्ग बनाती है। परिवार की आन्तरिक व्यवस्था में नारी की भूमिका महत्वपूर्ण है। वही व्यवस्था का नियंत्रक है। परिवार में सुख शान्ति, सद्भाव, सुव्यवस्थित वातावरण बनाने का पूर्ण दायित्व नारी का ही है। इसीलिए नारी को परिवार का प्राण कहा गया है। नारी जिस परिवार में होती है, वह उस घर के सदस्यों को, वहां के वातावरण को, अपने स्नेह, सहयोग, प्यार, ममता से निषेधात्मक प्रवृत्तियों को दूर कर आपसी सौहार्द, मेल मिलाप, सम्मान को प्रोत्साहन देती है और यही परिवार का प्रारम्भिक प्रशिक्षण है। परिवार में सभी मिल जुलकर श्रम करते हैं। उपार्जित धन को मिल बांटकर आवश्यकतानुसार और संतुलित ढ़ंग से खर्च करना सिखाया जाता है। परिवार प्रारम्भिक पाठशाला है जिसमें शील, शिष्टाचार, उदार भावनाएं पल्लवित, पुष्पित होती हैं। कहा जाता है कि छोटा बच्चा मिट्टी के लोंदे जैसा होता है जिनके गढ़ने की जिम्मेदारी मुख्य रूप से मां की ही होती है, जिन्हें वह अपनी भावनाओं और विचारों से आकार देती है।

इस प्रकार मानव के सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विकास में परिवार से प्राप्त प्रशिक्षण का अत्यधिक महत्व है। पारिवारिक जीवन में नारी के

विविध रूपों में पनपे विभिन्न संवेदन-सूत्रों का सीधा संबंध, जीवन मूल्यों के विकास और प्रशिक्षण से है। यह वस्तुतः मनुष्य के जीवन दर्शन का एक अंग है। इस व्यवस्था को टिकाऊ बनाने के लिए आत्मीयता, त्याग और ममता का होना आवश्यक है। स्त्रियों में संवेदना, करुणा, स्नेह कोमलता और ममता की जो विशेषताएं होती हैं, वह प्रायः पुरुषों में नहीं होती और इन्हीं सद्गुणों के कारण नारी घर के सदस्यों के निकट अधिक रहती है।

नारी की भूमिका परिवार के निर्माण में अन्यतम है। हमें मनुस्मृति का श्लोक याद रखना चाहिए

'संतुष्टो भार्यया भर्त्ता भर्त्ता भार्या तथैव च।
यस्मिन्नेव कुले नित्यं कल्याणं तत्र वै ध्रुवम्।।'

अर्थात् जिस परिवार में पत्नी से पति और पति से पत्नी संतुष्ट होकर जीवन यापन करते हैं, वहां सुख शान्ति (कल्याण) सुनिश्चित है।

परिवार की सुख शान्ति का आधार महिलाओं का स्नेह, सहयोग और सद्भाव ही है। इसी से घर में स्वर्गीय वातावरण का सृजन होता है। परिवार में सुसंस्कार भरा वातावरण को बनाए रखने की जिम्मेदारी उसी की है। परिवार में सभी मेल मिलाप और प्यार से रहें, परस्पर आदर सम्मान करें, एक दूसरे का सहयोग करें, स्नेह, सद्भाव और उदारता भरा व्यवहार करें। इन मूल्यों को जागृत करने एवं प्रेरित करने का काम महिलाएं ही अधिक कुशलता से करती हैं।

हिन्दुस्तान के बादशाह शाहजहां की विलासी प्रवृत्तियों को ईश्वरोन्मुख करने का श्रेय उनकी पुत्री जहांआरा को है। मेवाड़ के राजा उदय सिंह के व्यक्तित्व का निर्माण पन्नाधाय के हाथों हुआ था।

परिवार संस्था के साथ नारी का महत्व अविछिन्न रूप से जुड़ा हुआ है और इसीलिए गृहिणी और गृह लक्ष्मी के सम्मानजनक विशेषण से नारी को संबोधित किया जाता है क्योंकि प्रकृति ने उसे नैतिक दृष्टि से सुदृढ़ और स्वभाव की दृष्टि से दैवी गुणों से सम्पन्न बनाया है। उसमें

मधुरता और सद्भावना का अमृत बहता रहता है, तभी मेवाड़ की महारानी कर्मवती ने अलग मजहब से संबंध रखनेवाले हुमायूँ को राखी बांधकर अपने परिवार का अभिन्न सदस्य बना लिया। उसके प्रेम से विवश होकर बादशाह हुमायूँ ने सगे भाई की भूमिका निभाई। अपने इसी प्रेम के सहारे महिलाएं अपने घर के अशान्त सदस्यों को धैर्य बंधाती तथा परिवार संस्था की नींव मजबूत करती हैं।

परिवार का वातावरण अधिक से अधिक पवित्र और शालीन रहना चाहिए। माता पिता को व्यक्तिगत आचरण के साथ साथ परिवार का आचरण भी बच्चों के हित को ध्यान में रखते हुए शालीन और अनुशासित रखना चाहिए। रूढ़िवादिता, कुरीतियां और कुप्रथाओं के बहिष्कार से भी बच्चों के चरित्र-निर्माण में बहुत कुछ सहायता मिलेगी। पारिवारिक रूढ़ियां और अन्धविश्वास बच्चों पर इतना बुरा असर डालते हैं कि वे जीवन भर के लिए, पढ़-लिख जाने पर भी विचारों की स्वतन्त्रता और नवीनता से वंचित रह जाते हैं। इसके लिए आवश्यक है कि महिलाएं अपना स्वयं का व्यवहार भी उसी स्तर का रखें। छोटों के प्रति असीम प्यार दुलार, स्नेह और ममता, बराबर वालों के प्रति प्रेमपूर्ण स्निग्ध व्यवहार तथा बड़ों के प्रति श्रद्धा एवं सम्मान बरतना चाहिए। इस प्रकार महिलाएं परिवार की विचारात्मक तथा भावात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकती हैं तथा परिवार के सदस्यों के चरित्र निर्माण सम्बन्धी जिम्मेदारी को भी सरलतापूर्वक निभा सकती हैं।

उनके इस दायित्व वहन से टूटती बिखरती परिवार संस्था पुनः अपना खोया सौन्दर्य पा सकती है। इस प्रकार नारी परिवार की धुरी बनकर अपने घर परिवार और समाज को स्वर्गीय बना सकती है।

■

राजनीति और महिलाएं

हमारे देश में राजनीति और प्रशासन के क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका अहम् रही है। राजनीति के क्षेत्र में महिलाओं का वास्तविक पदार्पण 20वीं सदी के प्रारम्भ से हुआ। प्रथम दशक में महिलाओं ने स्वदेशी आन्दोलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। दूसरे दशक में महिलायें सीधे राजनीति में उतर पड़ीं। 1917 में श्रीमती एनीवेसेण्ट की अध्यक्षता में कॉग्रेस ने एक प्रस्ताव पारित कर स्त्रियों के लिए भी पुरुषों के समान ही मताधिकार की मांग की। श्रीमती माग्रेट कजिंस, श्रीमती बेसेण्ट और श्रीमती सरोजिनी नायडू के अथक प्रयास एवं परिश्रम के बाद 1920 में स्त्रियों ने चुनाव में भाग लिया। 8 मई 1917 में माग्रेट कजिंस ने मद्रास में 'वूमेन्स इंडियन एसोशिएशन' नामक अखिल भारतीय स्तर पर प्रथम महिला संगठन स्थापित किया। इन प्रयासों के कारण 1919 में महिलाओं को सीमित मताधिकार प्रदान किये गये। अप्रैल 1926 में महिलाओं ने प्रांतीय विधान सभाओं में चुनाव लड़ने का अधिकार भी प्राप्त कर लिया। डा॰ मुथुलक्ष्मी रेड्डी प्रथम महिला विधायक बनकर विधान सभा में पहुंची और शीघ्र ही विधान सभा की उपाध्यक्ष बनीं। 1925 में श्रीमती सरोजिनी नायडू कॉग्रेस के अध्यक्ष पद पर सुशोभित हुईं। 1927 में 'ऑल इण्डिया वेमेन्स कान्फ्रेंस' की स्थापना हुई, जिसका नारा रहा 'समान अधिकार, समान दायित्व'। आज भी यह महिलाओं की उन्नति

के लिए सबसे बड़ा सशक्त संगठन है।

1930 में गांधी जी के आवाहन पर हजारों महिलाएं 'नमक आन्दोलन' में कूद पड़ी थीं। इसमें लगभग 17000 महिलाएँ गिरफ्तार हुईं। 1932 में 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन' और 1942 में 'भारत छोड़ो आन्दोलन' में हजारों महिलाएं जेल गईं। आन्दोलन के साथ साथ महिलाओं ने वैधानिक क्षेत्र में भी प्रतिनिधित्व किया। 'राउण्ड टेविल कान्फ्रेंस' और कमिटियों में श्रीमती राधा बाई सुब्रायन, श्रीमती सरोजिनी नायडू, राजकुमारी अमृत कौर, श्रीमती लक्ष्मी मेनन, बेगम शाहनवाज, श्रीमती राममूर्त्ति, श्रीमती माणिक लाल जैसी विदुषी महिलाओं ने सक्रियता से भाग लिया।

1937 में प्रान्तों में कॉग्रेस मन्त्रीमंडल बने तो 80 महिलाएं विधानसभा में चुनी गईं। उत्तर प्रदेश में श्रीमती विजय लक्ष्मी पंडित पहली महिला मंत्री बनीं। 1940 में विभाजन के समय देश में शान्ति स्थापना के लिए महिलाओं ने अपने शौर्य साहस का परिचय दिया। इनमें प्रमुख थीं श्रीमती रामेश्वरी नेहरू, श्रीमती सुचेता कृपलानी और कमला देवी चट्टोपाध्याय।

1947 में भारत की आजादी के बाद श्रीमती विजय लक्ष्मी पंडित सोवियत संघ के लिए भारत की पहली 'राजदूत' बनाई गईं और 1949 से 1951 तक इस पद पर बनी रहीं। 1952 में भारत लौट आईं।

भारत के संविधान निर्माण में महिलाओं का योगदान पुरुषों से जरा भी कम नहीं रहा। इस ऐतिहासिक कार्य में योगदान देनेवाली महिलाएं लीलारे, सरोजिनी नायडू, रेणुका रे, राजकुमारी अमृत कौर, हंसा मेहता, दुर्गा बाई, कमला चौधरी, मालती चौधरी, पूर्णिमा बनर्जी आदि थीं। शायद् इसी भागीदारी का परिणामस्वरूप हमारे संविधान में स्त्री-पुरुषों को समान अधिकार दिया गया, जो भारतीय नारी के प्रगति के इतिहास में एक महत्वपूर्ण मोड़ सिद्ध हुआ। इसी के परिणामस्वरूप 1952 से लेकर अबतक महिलाओं का भारतीय राजनीति में महत्वपूर्ण स्थान बना हुआ है। देश की पहली महिला प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी बनी

और श्रीमती प्रतिभा पाटिल देश की पहली महिला राष्ट्रपति बनीं। आज नारी अनवरत संघर्ष कर सत्ता के सर्वोच्च शिखर पर पहुंची है। अब नारी की प्रतिभा, क्षमताएं घर की चहारदीवारी में कैद न रहकर, जीवन के हर क्षेत्र में, संसार के हर देश में, हर कोने में अपनी कामयाबी का झण्डा फहरा रही हैं और हर क्षेत्र में अपने को पुरुषों के समकक्ष साबित कर रही हैं।

अपने देश में गणतन्त्र बनने के 66 साल के बाद भी राजनीति में महिलाओं की संख्या बहुत कम है। यह स्थिति सन्तोषजनक नहीं है। अब राजनीति में महिलाओं को अधिक से अधिक भागीदारी निभाने का समय आ गया है। इसी से महिला सशक्तीकरण की अवधारणा मूर्त्त रूप में आ सकेगी। आज संसद में महिलाओं का प्रतिनिधित्व बहुत कम है। राज्यों की विधायिका में भी इनका प्रतिनिधित्व बहुत कम है। फिर भी राजनीति में जो महिलाएं हैं, वे हर क्षेत्र में कामयाब हो रही हैं। आज प्रदेशों में मुख्यमंत्री से लेकर विभिन्न पदों पर महिलाएं पदस्थापित हैं। मायावती, सोनियागांधी, सुषमा स्वराज, विजया राजे सिंधिया, बसुन्धरा राजे, जयप्रदा, ममता बनर्जी, जया बच्चन, रेखा, मीरा कुमार कई ऐसे नाम हैं जिनके बारे में यह कहा जा सकता है कि उन्होंने राजनीति में पुरुषों को चुनौती दी है।

पंचायती राज कानून के लागू होने से पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी बढ़ी है। महिलाओं के 50 प्रतिशत प्रतिनिधित्व बढ़ने से ग्रामीण महिलाओं का सशक्तीकरण हुआ है। बिहार सहित पांच राज्यों में राजस्थान, उत्तराखण्ड, हिमाचल प्रदेश और मध्य प्रदेश को पंचायत में 50 प्रतिशत का आरक्षण दिया गया है। पंचायत स्तर पर आरक्षण से महिलाओं की स्थिति गरिमापूर्ण हुई है। कुछ इलाकों में अभी ज्यादातर महिलाओं को विशेष लाभ नहीं हुआ है। वे रबर स्टाम्प की तरह काम कर रही हैं लेकिन विश्वास है कि इसका अंजाम भी अच्छा ही होगा। आनेवाले दिनों में भारत के राजनीति में महिलाओं की दमदार उपस्थिति साफ दिखाई दे रही है।

यह शुभ संकेत है कि मौजूदा लोक सभा में 61 महिलाएं चुनाव जीतकर पहुंची हैं। भारतीय लोकसभा के इतिहास में यह पहला अवसर है जब इतनी संख्या में महिलाएं इस सदन में पहुंची है और पहली बार छह महिलाएं कैबिनेट मंत्री बनी हैं। इन्हें महत्वपूर्ण मंत्रालयों की जिम्मेवारी भी दी गई है। कैबिनेट महिला मंत्रियों के ये चेहरे हैं निर्मला सीतारमण, वाणिज्य एवं उद्योग और कॉरपोरेट मामलों की राज्यमंत्री 2. उमा भारती जल संसाधन, नदी विकास एवं गंगा पुनरोद्धार मंत्री 3. मेनका संजय गांधी महिला एवं बाल कल्याण मंत्री 4. स्मृति इरानी मानव संसाधन मंत्री 5. हर सिमरत कौर बादल खाद्य प्रसंस्करण, उद्योग मंत्री 6. डॉ॰ नजमा हेपतुल्ला अल्पसंख्यक मामलों की मंत्री हैं श्रीमती सुषमा स्वराज को विदेश मंत्री बनाया गया है।

श्रीमती आनन्दी बेन पटेल गुजरात की मुख्यमंत्री बनाई गई हैं तथा श्रीमती सुमित्रा महाजन मीरा कुमार की जगह पर लोक सभा की अध्यक्ष बनाई गई हैं।

लोकतान्त्रिक इतिहास में पहली बार ऐसा हुआ है। यह एक नयी प्रशंसनीय और महिलाओं के लिए उत्साहवर्द्धक पहल है। इन महिलाओं के लिए एक बड़ी जिम्मेवारी है, वे इसे ईमानदारी से, लगन से निभाएं, सशक्त भागीदारी दें। शिक्षा, स्वास्थ्य, महिला सुरक्षा को ध्यान में रखकर महिला सशक्तीकरण की नीतियां सरकार बनाये जिससे देश की सभी महिलाओं की आवश्यकताओं, आकांक्षाओं और अधिकारों के लिए काम हो सके।

देश में आजादी के 68 साल बाद भी निर्वाचित प्रतिनिधियों में महिलाओं की संख्या बहुत कम है। इसलिए विभिन्न स्तरों पर आरक्षण लागू कर महिलाओं के लिए स्थान बनाने की कवायद हुई ताकि उन्हें राजनीति में भागीदारी के अधिक अवसर प्राप्त हो सकें। इसी कड़ी में महिला आरक्षण विधेयक राज्य सभा में पास हो गया है लेकिन लोकसभा में अभी भी मंजूरी नहीं मिली है। लगता है शायद ही यह बिल लोकसभा में पास हो सकेगा। महिलाओं को 33 प्रतिशत भागीदारी देने का मुद्दा

पुरुषवादी स्वार्थगत राजनीति के चक्रव्यूह में फंसा हुआ है। भले ही महिलाओं ने हर क्षेत्र में सफलता का परचम लहराया है, योग्यता साबित की है लेकिन सत्ता के दरवाजे चाहे वह राजनैतिक हो या सामाजिक उनके लिए पूरी तरह नहीं खुले हैं।

राजनीति में महिलाओं का प्रतिनिधित्व बढ़ाने के लिए आरक्षण को हथियार बनाकर पेश करने की आवश्यकता नहीं है। बिना आरक्षण के भी उनकी भागीदारी को बढ़ाया जा सकता है। आरक्षण से तो महिलाओं की योग्यता पर सवाल उठते ही रहेंगे।

सच तो यह है कि नारी आज भी अपनी भागीदारी के लिए नहीं, बल्कि समाज में अपनी सुरक्षा और सम्मान के लिए, गरिमा के साथ जीने के लिए संघर्ष कर रही है। दिल्ली सामूहिक गैंग रेप की घटना ने स्त्री असुरक्षा के हद को पार कर दिया है। लेकिन इस निराशा के बीच उम्मीद की किरण भी है। आज भारत की नारी पहले से कहीं ज्यादा सजग और प्रतिबद्ध है। वह राजनीति ही नहीं बल्कि समाज को भी अपने हक के लिए बदलने के लिए खड़ी हो गई है। आज स्त्रियों पर सदियों के जुल्म के शिकंजे भले ही कमजोर नहीं पड़े हों पर उसे तोड़ डालने की बेचैनी उनके तहे दिल में ही नहीं उनके रग-रग में उमड़ रही है।

राजनीति में महिलाओं की भागीदारी को देखते हुए संयुक्त राष्ट्र संघ ने सिफारिश की थी कि दुनिया भर में कुल सांसदों का न्यूनतम 30 प्रतिशत स्थान महिलाओं के लिए आरक्षित होना चाहिए। इसका अनुसरण भारत में संविधान के 73वें और 74वें संशोधन के द्वारा पंचायत स्तर पर किया जा चुका है। देश की पंचायतों में 33 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान किया गया है। राष्ट्र के विकास के क्रम में जमीन से जुड़े कई ऐसे मुद्दे हैं जिन्हें महिलायें ही बेहतर तरीके से समझती हैं और उनके समाधान के उपाय भी उनके पास है।

वैदिक काल में महिलाओं की स्थिति प्रतिष्ठापूर्ण थी लेकिन बाद में धीरे धीरे बदलाव आने लगा और महिलाओं की स्थिति

कमजोर होने लगी। मध्यकाल आते आते इनकी स्थिति काफी दयनीय हो गई। आधुनिक काल में संविधान द्वारा पूर्ण अधिकार प्राप्त होने पर भी महिलाएं राजनीति के क्षेत्रों में अपना अस्तित्व बनाए रखने के लिए संघर्ष कर रही हैं।

इन स्थितियों की कई वजहें हैं। अपने देश का समाज पुरुष प्रधान है। राजनीति में प्रवेश करने वाली महिलाओं को सबसे पहले पुरुष मानसिकता से मुकाबला करना पड़ता है। इसके बाद भारतीय महिलाओं को हर कदम पर अपनी योग्यता सिद्ध करनी पड़ती है। यह भी जरूरी है कि महिलाओं को राजनीति में आने के लिए घर से छूट मिले और फिर हर दल चुनाव लड़ने के लिए इन्हें ज्यादा से ज्यादा अवसर प्रदान करे।

राजनीति में ज्यादातर वे ही महिलायें आती है जिन्हें राजनीति विरासत में मिलती है। राजनीति की प्रवृत्ति और कामकाज का तरीका अन्य क्षेत्रों से अलग है। इसमें काम करनेवाली महिलाओं का व्यक्तिगत जीवन उतना महत्त्वपूर्ण नहीं रह जाता है। इस क्षेत्र में प्रवेश करनेवाली महिलाओं का जीवन सार्वजनिक हो जाता है।

आज भी हमारे समाज में महिलाओं के प्रति पुरानी धारणा ही कायम है। आज भी महिलायें उन्हीं गतिविधियों में भाग लेने में ज्यादा रुचि दिखाती हैं जिनमें भाग लेने के लिए परिवार के पुरुष कहते हैं। मुसीबत यह है कि सभी दलों के नेता अपने परिवार की महिलाओं को ही राजनीति में आगे बढ़ाना चाहते हैं और चुनाव लड़ने का अवसर भी उन्हीं को देते हैं। नीचे स्तर पर काम कर रही महिलाओं को कोई आगे आने देना नहीं चाहता है। यह स्थिति बदलनी होगी। निचले स्तर के कार्य कर्त्ताओं को अवसर देकर आगे लाना होगा। ज्यादा से ज्यादा महिलायें राजनीति में आयें इसके लिए पूरी कोशिश होनी चाहिए।

भारत में राजनीति में कुछ महिलाओं ने स्वयं के बलबूते महत्वपूर्ण जगह बनाई है। यह राजनीतिक जागृति के लिहाज से शुभ संकेत है। आज की प्रदूषित राजनीति महिलाओं के लिए आकर्षण का

क्षेत्र नहीं रही। भारतीय राजनीतिक दलों द्वारा महिलाओं को पर्याप्त संख्या में प्रत्याशी नहीं बनाया जाता है। राजनीतिक दलों का तर्क है कि सामान्यतया महिलाएं चुनावों में जीत नहीं पातीं, लेकिन राजनीतिक दलों की यह धारणा आधारहीन और निर्मूल है।

भारत में महिलाओं के राजनीतिक विकास में अनेक बाधायें हैं जैसे सामाजिक संरचना, अशिक्षा, संकोच, परिवार में निर्धनता, लैंगिक भेदभाव, नैतिकता का दोहरा मापदण्ड, महिलाओं की आर्थिक पराधीनता, असुरक्षा का भय, राजनीतिक दलों में दूषित प्रवृत्ति, खर्चीली चुनाव प्रणाली, महिलाओं में राजनीतिक जागरूकता का अभाव आदि। ये बाधाएं ही उन्हें राजनीति से दूर रखती हैं तथा इन बाधाओं के कारण राजनीति से दूर रहने में ही अपनी भलाई समझती हैं। महिलाओं के रास्ते से इन बाधाओं को दूरकर उन्हें राजनीति के क्षेत्र में सक्रिय भागीदारी निभाने के लिए प्रेरित और प्रोत्साहित करना चाहिए।

संविधान में महिलाओं को कई विशेष अधिकार दिए गए हैं फिर भी वे राजनीति की ऊंची कुर्सी तक पहुंचने या उसे प्राप्त करने में आज भी ये पुरुषों से पीछे हैं।

राजनीति की राह बहुत कंटीली होती है। दूर से देखने पर भले ही पावर और इज्जत का ग्लैमर दिखता है लेकिन वास्तव में ऐसा है नहीं। यहां हर पल संघर्ष होता है। महिलाओं को तो प्रतिदिन तिल-तिल कर जलना पड़ता है, तब जाकर सफलता मिलती है। भारत जैसे समाज में एक महिला के लिए चुनाव लड़ना और जीतना पुरुष की तुलना में बहुत ही कठिन होता है। इसलिए अधिकांश महिलाएं राजनीति से दूर भागती हैं और जिन क्षेत्रों में सरलता से कॅरियर बनाने का मौका मिलता है उन्हीं क्षेत्रों में अपना कॅरियर बनाती हैं।

पूर्वोत्तर राज्यों में महिला आयोगों ने विधान सभाओं और संसद में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण के लिए माँग की है। पूर्वोत्तर में आबादी का आधा हिस्सा महिलायें हैं। इस क्षेत्र की महिलाओं को एक जुट होकर 33 प्रतिशत आरक्षण मांग की लड़ाई लड़नी चाहिए

जिससे विधान सभाओं और संसद में महिलाओं को ज्यादा प्रतिनिधित्व मिल सके।

वर्ष 2012 में राजनीति में सक्रिय रूप से भाग लेने को इच्छुक 30 महिलाओं को आइआइएम बंगलूर ने 'वुमन इन लीडरशीप' कोर्स करवाया है। ये महिलायें अपने देश के आठ राज्यों से हैं। ये संसद में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाना चाहती हैं। इन्होंने प्रधानमंत्री को पत्र लिखकर 33 प्रतिशत आरक्षण की मांग की है।

अंग्रेजों की गुलामी से मुक्त हुए लगभग 68 वर्ष हो रहे हैं। हम भारतवासी हर वर्ष 15 अगस्त को स्वतन्त्रता की वर्षगांठ मनाते हैं, साथ ही अपने संविधान लागू होने के दिन 26 जनवरी को गणतन्त्र दिवस मनाते हैं। गुलामी से मुक्त होने के उल्लास और उत्साह का जज्बा उस दिन आकर मुकम्मल होता है। उस दिन भारतीय गणतन्त्र हमे, हमारे नागरिक होने का अहसास दिलाता है।

इस गणतंत्र में देश के स्त्री-पुरुष दोनों को बराबर की नागरिकता मिली। वोट देने का अधिकार मिला। हम अपना प्रतिनिधि अपनी मर्जी से चुन सकते हैं, चुनाव हमारी इच्छा, आकांक्षा और सपनों का माध्यम बना। वक्त के साथ बहुत कुछ बदला। स्त्रियों को आगे बढ़ने का अवसर मिला। चुनौतियों का महिलाओं ने सामना किया। वे उम्मीदों पर खरी उतरीं। जीवन के हर क्षेत्र में काम करनेवाली महिलाओं ने अपना-अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। स्वतन्त्र भारत में विकास ने पांव पसारे। शिक्षा, कृषि, पर्यावरण आदि के विकास के लिए विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं को लागू किया जाता रहा। किसान मजदूर के हित में सोचा गया। महिलाओं को लेकर समाज कल्याण, महिला मंगल जैसी योजनाएं आयीं।

आज स्त्रियां अपने अधिकारों के प्रति सजग हुई हैं और सक्रिय भी, किन्तु देश और समाज में आज भी नारी किसी न किसी स्तर पर भेदभाव का शिकार है। हालांकि महिलाओं के लिए जीवन के हर क्षेत्र में अवसर बढ़ रहे हैं। शिक्षा-दर में महिलाओं की बढ़ोतरी हुई है।

रोजगार के हर क्षेत्र में महिलाओं ने अपनी भागीदारी बढ़ाई है।

घर संवारने में दक्ष महिलाएं आज देश संवारने को तत्पर हैं। अब महिलाएं देश का नेतृत्व करना चाहती हैं। ये परिवार की समस्याओं को जानती, पहचानती हैं। देश की राजनीति का अध्ययन कर नया इतिहास रचने को तत्पर हैं। हमारी संवेदनशील महिलाएं ही भ्रष्टाचार, अनाचार, अश्लीलता, अनैतिकता से मुक्त प्रशासन दे सकती हैं। इसलिए हमें यह ख्याल रखना होगा कि हमारे देश की महिलायें हमारी प्रतिष्ठा और आदरणीया तो हैं ही, हमारी अमानत भी हैं जो सदैव रक्षणीय और अग्रसार्य हैं। जो लोग केवल आसमान की ओर देखते हैं, उन्हें यह भी समझना चाहिए कि इस जमीन पर भी चाँद की तरह चहकने और तारों की तरह रोशनी बिखेरनेवाली हस्तियाँ हैं और वे केवल और केवल हमारी नारी जाति है

सरहदों की सीमा होती है
ऊँचाई की कोई माप नहीं।
ऐ यार मेरे जन्म माँ देती है
कोई बाप नहीं।

■

स्थानापन्न माता : सरोगेट मदर

जीवन में सबसे बड़ी खुशी मां बनने में मिलती है। कुछ कारणवश कई महिलाएं मां नहीं बन पाती हैं। इन महिलाओं को किराये पर कोख देकर इनके सूने आंगन को सरोगेट मातृत्व के जरिए शिशु की किलकारी से गुंजार किया जाता है। मां को इस तरह निःसंतान सहयोग करने वाली महिलाओं को सरोगेट मदर कहा जाता है। निश्चय ही यह एक सराहनीय कार्य है। विदेशों में सरोगेट मदर का काफी प्रचलन है। भारत में बड़े शहरों में इसका प्रभाव है। सरोगेट मदर जीवन से सामंजस्य स्थापित कर एक महिला होने के नाते दूसरी महिला का सहयोग करती हैं। भले ही इसमें आर्थिक मदद मिलती है लेकिन इतनी बड़ी खुशी देने की तुलना में तो यह आर्थिक मदद कुछ भी नहीं है।

यदि कोई महिला कोई शारीरिक विसंगति के कारण गर्भ धारण नहीं कर पा रही है, लेकिन उसकी प्रजनन-क्षमता में कोई संशय नहीं है और उसका गर्भ धारण करने संबंधी अंडाशय सही है, ऐसी परिस्थिति में उसके भ्रूण को किसी दूसरी महिला के अन्दर प्रवेश कराकर उसे संतान का सुख दिया जा सकता है। इसे ही किराये का कोख (सरोगेसी) कहा जाता है। 20 वर्ष से अधिक आयु की कोई भी महिला सरोगेट मदर बन सकती है, लेकिन उसे स्वस्थ होना चाहिए और उसके गर्भाशय में कोई समस्या नहीं होनी चाहिए। केवल विवाहित निःसंतान दम्पत्ति ही

सरोगेट मदर की मदद से बच्चा पा सकेंगे, दो बच्चों की स्वस्थ मां ही सरोगेट मदर बन पायेगी, साथ ही दूसरे बच्चे के जन्म के दो साल बाद ही कोई महिला सरोगेट मदर बनने के लिए सक्षम होगी। 21 वर्ष से 35 वर्ष की महिला ही सरोगेट मदर बन सकेगी।

भारत में अब किराये की कोख हर किसी को यूं ही नहीं मिलेगी, लिव-इन-रिलेशन में रहने वाले किराये की कोख नहीं ले सकेंगे। भारत सरकार ने सरोगेसी संबंधित कानून के ड्राफ्ट में ये संशोधन किये हैं, जल्द ही इस ड्राफ्ट को केन्द्रीय कैबिनेट के समक्ष रखा जायेगा। हिमाचल प्रदेश समेत पूरे देश में निःसंतान दम्पत्ति सरोगेट मदर के जरिए संतान सुख पा रहे हैं। इसकी वैधता पर अभी कोई कानून नहीं है। वर्ष 2005 में गाइड लाइन्स बनी है, दोषी को दंड देने का भी कोई प्रावधान नहीं है। इसके लिए 'असिस्टिड रिप्रोडक्टिव टेक्नोलॉजी बिल 2010' ड्राफ्ट बनाया गया लेकिन खामियों के चलते यह कानून की शक्ल नहीं ले सका।

प्रस्तावित कानून के तहत इसके लिए हर राज्य में एक बोर्ड बनेगा, इसमें सरोगेसी का लाभ देनेवाले हर क्लीनिक का पंजीकरण होगा, कानून तोड़ने पर संबंधित मामलों की सुनवाई सिविल कोर्ट करेगा। यह दोषी को न्यूनतम तीन साल की कैद और लाखों रुपए का जुर्माना करेगा।

गुजरात में सरोगेसी का व्यापार बहुत बढ़ गया है। गुजरात में सरोगेट मदर को मिलने वाले पैसे में तेजी से बढ़ोतरी हो रही है। एक दो साल पहले जहाँ सरोगेट मदर को एक से दो लाख रुपये ही मिलते थे, वहीं अब यह रकम पांच-पांच लाख रुपये तक पहुंच चुकी है। भारत में विश्व के एक तिहाई गरीब रहते हैं। सरोगेसी की तरफ महिलाओं के रूझान के पीछे गरीबी सबसे बड़ा कारण है। भारत में अच्छी तकनीक उपलब्ध है और लागत भी अन्य देशों की अपेक्षाकृत कम है। यहां का कानून भी अनुकूल है। भारतीय कानून के अनुसार सरोगेट माता का पैदा होने वाली संतान पर न तो कोई हक होता है न ही जिम्मेदारी।

पश्चिमी देशों में जन्म देनेवाली माता ही असली माँ मानी जाती है।

निःसंतान लोगों को सरोगेट माता द्वारा संतान की प्राप्ति तो होती है लेकिन उन महिलाओं की स्थिति दयनीय होती है जो पैसे के लिए दूसरे का भ्रूण वहन करती हैं। गुजरात में महिलाएं अपनी गरीबी दूर करने और एक बेहतर, सुखद जीवन जीने के लिये अपनी कोख किराये पर दे रही हैं। वहां सरोगेसी एक पारिवारिक व्यवसाय के रूप में महिलायें अपना रही हैं। भारत में पारिवारिक सम्बन्ध काफी मजबूत होते हैं। अपने बच्चों के लिए माताएं कुछ भी करने को तैयार रहती हैं। सरोगेसी के लिए पांच लाख-छह लाख रुपये मिल रहे हैं। इस राशि से सरोगेट माताओं को अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा देने, उनका पालन-पोषण सही ढंग से करने और अच्छा भोजन देने का सपना पूरा हो जाता है।

सरोगेसी को एक व्यवसाय के रूप में सम्मान किया जाना चाहिए। सरोगेसी में उतरने वाली महिलाओं के ज्यादातर पति बेरोजगार होते हैं।

सरोगेट माताओं की सामाजिक जिन्दगी इतनी आसान नहीं होती क्योंकि इन्हें हेय दृष्टि से देखा जाता है। यह बात किसी से छिपी नहीं रहती कि सरोगेट माता के गर्भ में एक टेस्ट ट्यूब बेबी पल रहा है। इससे लोगों का नजरिया बदल जाता है।

सरोगेट माताओं को डॉमेट्री में रखा जाता है, वहां उनका रहना अनिवार्य है। दम्पत्ति, अस्पताल या डाक्टर किसी भी दुर्घटना के लिए जिम्मेदार नहीं है। एक महिला अधिकतर तीन बार सरोगेट मां बन सकती है। बच्चे के जन्म के बाद कोई-कोई दम्पत्ति सरोगेट माता को बच्चे की देख-रेख के लिए अपने घर में नौकरी दे देते हैं।

डॉमेट्री की नर्सें सरोगेट माताओं को ध्यान से समय-समय पर खाना, विटामिन और दवाएं देती रहती हैं। आराम करने की सलाह देती हैं। बच्चे के जन्म होने तक घर जाने की अनुमति नहीं होती। महिला को नशीले पदार्थ का सेवन नहीं करना है जिससे बच्चे को नुकसान पहुंचे।

सरोगेट माता यदि जुड़वां बच्चों को जन्म देती हैं तो उसे

लगभग साढ़े छह लाख से सात लाख रुपये मिलते हैं और यदि पहले ही गर्भ गिर जाय तो उसे करीब 40,000 रुपये देकर विदा किया जाता है। बच्चा प्राप्त करने वाले दम्पत्ति से अस्पताल हर सफल गर्भावस्था के लिए लगभग 18 लाख रुपये लेता है।

किराये की मां (सरोगेट मदर) को अपने परिजनों की उपेक्षा, प्रताड़ना और हिंसा का सामना करना पड़ सकता है, क्योंकि यह अपने देश की संस्कृति के विपरीत है कि कोई महिला अपने पति के अलावा किसी अन्य के बच्चे को गर्भ में धारण करे। स्पष्ट है कि किराए की कोख का मामला वैवाहिक जीवन पर और परिवार में महिला की स्थिति पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकता है। ऐसा लगता है कि जो दम्पत्ति बच्चे को प्राप्त कर रहे हैं और जो मां प्रसव के बाद बच्चे को स्वयं से दूर कर रही है ये दोनों ही अनैतिक कृत्य के शिकार हो रहे हैं। कुछ लोगों का कहना है कि किसी बच्चे को किसी महिला के गर्भाशय से पैदा करना अनैतिक नहीं है। आज जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विज्ञान और तकनीक का विकास, प्रचार एवं प्रसार तेज गति से बढ़ता जा रहा है। विज्ञान और तकनीक लोगों को सहूलियत देने के लिए है। यदि विज्ञान की सहायता से निःसंतान दंपत्तियों के चेहरे पर प्रसन्नता लायी जा सकती है, जो किन्हीं कारणों से औलाद से वंचित हैं तो इसे ग्राह्य माना जाना चाहिये, इसे स्वीकृति दी जानी चाहिये।

ऐसे युगल को जब आप औलाद प्रदान करते हैं, तो उनके चेहरे की प्रसन्नता क्या देखने लायक नहीं होगी ? वह सरोगेट मदर जो बेऔलादों को अपना बच्चा प्रदान करती है, उसकी कितनी बड़ी महानता है। उनका महत्व बहुत अधिक है। सच तो यह है कि गोद लेने वाले अभिभावक यदि बच्चे को प्रेम, स्नेह, प्यार दे रहे हैं, उसकी परवरिश अच्छी तरह से कर रहे हैं और उसे मानवीय मल्यों का पाठ पढ़ा कर, इंसान बना रहे हैं तो यहां पर कहीं कुछ गलत नहीं है।

इसके बावजूद यह बात भी सही है कि सरोगेट मदर से पैदा होने वाले बच्चे को ग्रहण करने वाले दम्पत्ति को उस बच्चे के 'जेनेटिक'

सच का पता नहीं चल सकेगा। बच्चे के आनुवंशिक गुणों, आदतों, मूल प्रवृत्तियों और उसके विभिन्न गुणों को समझने में कठिनाइयां आयेंगी।

चिकित्सकीय प्रक्रियाओं को नियंत्रित करने के लिये, शिशु प्राप्त करने वाले दम्पत्ति और सरोगेट माता के सही मार्गदर्शन के लिए अभी और भी सख्त और कारगर कानून बनाए जाने की जरूरत है। यही नहीं सरोगेट माता द्वारा दम्पत्ति को बच्चे को सौंप देने के बाद उस बच्चे की देख-रेख के संबंध में भी कारगर कानून की जरूरत है। तभी सरोगेट माता प्रसन्नतापूर्वक अपना जीवन यापन कर सकती है। जब बच्चा समझदार हो जाय तब उसके और अभिभावकों तथा सरोगेट मदर के लिए काउंसलिंग की जानी चाहिए ताकि बच्चे को उसके जन्म की प्रक्रिया और गोद लिये जाने तथा अन्य बातों की जानकारी उचित तरीके से दी जा सके। इस संदर्भ में बच्चे और अभिभावकों के बीच कोई बात छिपी नहीं रहनी चाहिए।

वास्तव में सरोगेट मदर से संबंधित प्रक्रिया को कानूनी जामा पहनाना आसान बात नहीं है। इस तरह के कानून पारित करने से पहले भारतीय समाज में इस विषय पर गहन रूप से विचार विमर्श होना चाहिए। किराए के मातृत्व से संबंधित मांगों की समीक्षा करने के लिए स्वतंत्र रूप से विशेषज्ञों का एक दल गठित करना चाहिए। इसमें डाक्टरों, समाजशास्त्रियों और न्यायाधीशों आदि को शामिल करना चाहिए। हालांकि इस तरह की मांगे असमान्य ही होंगी। इन जटिल स्थितियों में ऐसा लगता है कि किसी कानून का कारगर हो जाना आसान नहीं है।

■

तीसरा लिंग : किन्नर

लगभग चार महीने पहले की बात है, साऊथ बिहार एक्सप्रेस से मैं, मेरा बेटा, बहू और एक वर्ष का मेरा पोता, पटना से विलासपुर जा रहे थे। ट्रेन अगले दिन प्रातः टाटा जंक्शन पर रूकी। वहाँ पर ट्रेन काफी देर तक रूकती है। वहीं से ट्रेन में आठ-नौ किन्नर एक झुण्ड में चढ़े। गाड़ी खुल गई। उनकी नजरें किसी की तलाश में थीं। चारो तरफ देखते हुए ये लोग तेजी से सीधे हमलोगों के पास पहुंचे, मानो नये बच्चे को वे लोग ढूंढ़ रहे हों। उनमें से एक ने चट से बच्चे को उठाकर सीने से चिपका लिया, खूब प्यार किया, माथे को चूम-चूम कर आशीर्वाद दिया, दुलारने लगे, बधाइयां देने लगे, गाने और नाचने लगे

अरे बबुआ जीवे, ऐसो लला,
टुनटुनवा जीवे, ऐसो लला,
रूनझुनवा जीवे, ऐसो लला,
अरे हमरा के देल जाई खेत खलिहनवा,
हो राजा जी, हमरा घरनी ला टीका चन्द्रहार।

वहां पर बैठे सभी यात्री गीत से प्रभावित हुए, एक और गीत सुनाने के लिए उनसे सबने आग्रह किया। बच्चा उनकी गोद में ही था। उतनी ही छोटी जगह में सभी नाचते हुए एक साथ गाने लगे

पूरबे हम सुमरि, उगलन सुरूज जी,
पछिमे में मीरा सुभियान,

अरे बबुआ जनम सुनि के हम अइनि
हम अइनि, राजा के दुआर।।
अरे बबुआ जीवे ऐसो लला
टुनटुनवा जीवे ऐसो लला
रूनझुनवा जीवे ऐसो लला....।।

अब उनलोगों ने बक्सीस के लिए हाथ बढ़ाये, मोटी रकम की मांग की। मैंने कहा ''हमलोग तो अभी सफर में हैं, अधिक कहां से दिया जा सकेगा, लेकिन एक बात पर ध्यान दीजिए और सुनिए ''आपलोग इस तरह मांग-मांग कर कबतक जीयेंगे? क्यों नहीं कोई छोटा-मोटा धन्धा शुरू कर लेते है?'' इसपर एक किन्नर ने कहा 'मालकिन, आपलोग तो जानती ही हैं कि समाज में हमलोगों का क्या स्थान है? शताब्दियों से किन्नर समुदाय है। फिर भी सरकार ने हमलोगों को सामाजिक, आर्थिक कोई अधिकार नहीं दिया है, मात्र धर्म और संस्कृति में हमारे देश के समाज ने हमें स्वीकार किया है। हमें संवैधानिक अधिकार प्राप्त नहीं हैं' इस पर मेरे बेटे ने कहा 'आपलोगों को मालूम नहीं है कि आपलोग भी इस देश के नागरिक हैं। आपलोगों को भी मतदान का अधिकार प्राप्त है। आपलोगों को वे सभी अधिकार दिए गए हैं, जो अधिकार हमलोगों के हैं। अब आपलोगों को शुभ अवसरों पर मात्र बधाई और मंगलगान ही नहीं करना है, बल्कि अब आप किन्नर समुदाय को सुप्रीम कोर्ट ने पहचान के साथ कानूनी दर्जा देने का आदेश दिया है। सुप्रीम कोर्ट के निर्देश के अनुसार आपलोगों को ओबीसी के तहत् मिलनेवाली सारी सुविधायें मिलेंगी। केन्द्र में ओबीसी यानी पिछड़े वर्ग के लिए 27 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान है, वहीं राज्य में पिछड़े तथा अतिपिछड़े वर्ग में बंटे इस वर्ग को कुल 30 प्रतिशत आरक्षण दिया जाता है। इसमें 12 फीसदी पिछड़े और 18 फीसदी अति पिछड़े को आरक्षण दिया जाता है।' यह सब सुनकर वे सभी खुशी से भाव विह्वल हो उठे। सभी एक दूसरे की तरफ आंखें फाड़-फाड़ कर देख रहे थे। उनमें से एक किन्नर ने मेरे बेटे से कहा 'ओ राजा जी, हम किन्नर

वर्ग सम्मान के साथ जीना चाहते हैं। यह सब सुनाकर आप ने तो हमलोगों को बहुत बड़ी खुशी दे दी है। यह सब सुनकर, जानकर मन गद्-गद् हो रहा है। क्या नौकरी पाने का अधिकार हमलोगों को भी मिला है? हमारे समाज के बच्चे भी शिक्षण संस्थाओं में पढ़ सकेंगे? यह तो बहुत ही गर्व का विषय है कि हमारे समाज को भी शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार मिल गया।' वे इतने खुश थे मानो जीवन की सबसे बड़ी खुशी उन्हें मिल गई हो। हमलोग इनलोगों के साथ काफी देर तक बातें करते रहे, नाच-गाना देखते और सुनते रहे, आनन्द लेते रहे, बच्चा भी गाना सुनकर खुश हो रहा था। रायपुर आने ही वाला था। मेरे बेटे को कुछ काम से वहीं पर उतर जाना था। इसलिए उनकी बिदाई 501 रूपए से मेरी बहू ने कर दी। वे लोग बहुत खुश हुए, फिर सभी मिलकर गाने और नाचने लगे

'बोल दुर्गा केर नामे,
सब देवतन केर नामे,
पूरब में सुमरि, पछिमे में सुमरि,
उत्तर, दक्खिन केर नामे,
बोल दुर्गा केर नामे,
बोल लोगवन केर नामे,
बबुआ जनम सुनकेर हम अइलीं,
अईलीं मालिक केर नामे,
अरे बोल दुर्गा केर नामे।
जुग-जुग जीए हमार ललना,
झूला झुलयबई हम पलना,
दान दहेज में भेटबे करतई,
भाई-बहन केर कंगना,
बोल दुर्गा केर नामे,
सब देवतन केर नामे।

गाते हुए सभी चले गए।

यह एक प्रशंसनीय एवं अह्म कदम है कि मात्र शुभ-अवसरों पर बधाई और मंगल गान गानेवाले किन्नरों को सुप्रीम कोर्ट ने पहचान के साथ कानूनी दर्जा देने का निर्देश दिया है। सुप्रीम कोर्ट ने स्त्री और पुरुष से अलग लिंग के तीसरे वर्ग के रूप में इन्हें मान्यता दे दी है। इन्हें बराबरी का हक देते हुए केन्द्र और राज्य सरकारों को निर्देश दिया है कि वे उनकी सामाजिक और लिंगानुगत समस्याओं का निवारण करें। इतना ही नहीं उन्हें चिकित्सा और अन्य सुविधायें भी उपलब्ध करावें।

किन्नरों को अपने लिंग की पहचान तय करने का हक है, केन्द्र और सभी राज्य सरकार उन्हें कानूनी पहचान दें। संविधान में सभी को बराबरी का दर्जा दिया गया है। लिंग के आधार पर भेदभाव को कोर्ट ने मौलिक अधिकार का हनन बताया है। बिहार में भी अब किन्नरों को सामाजिक मान्यता मिलेगी। सरकारी प्रपत्रों में अब स्त्री और पुरुष कॉलम के साथ थर्ड जेन्डर या अन्य जेन्डर लिखा होगा। सभी सक्षम प्राधिकार द्वारा किन्नर प्रमाणपत्र जारी किया जायेगा, इस प्रमाणपत्र का आधार कार्ड, राशन कार्ड, पासपोर्ट आदि बनवाने में उपयोग होगा। साथ ही सभी जिलों में किन्नरों का सर्वेक्षण होगा।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) ने किन्नरों को तीसरे लिंग के रूप में अधिसूचित किया है, जिससे इस समुदाय को उच्च शैक्षणिक संस्थाओं में छात्रवृत्ति और फेलोशिप कार्यक्रमों का लाभ मिल सकेगा, अधिसूचना में सभी विश्वविद्यालयों और कॉलेजों को किन्नरों को दाखिले और विभिन्न छात्रवृत्ति तथा कार्यक्रमों में तीसरे लिंग के रूप में मानने का निर्देश दिया गया है। यह सम्मानपूर्ण निर्देश समाज में बड़ा बदलाव लाने वाला है, जो प्रशंसनीय है, वन्दनीय है।

संविधान के आर्टिकल 14, 15, 16 और 21 के तहत किन्नर भी देश के नागरिक हैं। कोर्ट ने कहा कि किसी का लिंग उसकी आन्तरिक भावना से तय होता है कि वह अपने को पुरुष महसूस करता है या स्त्री, या फिर तीसरे लिंग में आता है। किन्नर को न तो स्त्री मान सकते हैं और न ही पुरुष। वे तीसरे लिंग में आते हैं। किन्नर एक विशेष

सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक समूह हैं। इसलिए स्त्री-पुरुष से अलग तीसरा लिंग माना जाना चाहिए। पंजाब में सभी किन्नर को पुरुष माना जाता है। केरल, त्रिपुरा और बिहार में किन्नरों को तीसरे लिंग में शामिल किया गया है। कुछ अन्य राज्यों में भी इन्हें तीसरी श्रेणी में ही माना गया है। तमिलनाडु ने किन्नरों के कल्याण के लिए काफी कुछ किया है। हमारे पड़ोसी देश नेपाल और पाकिस्तान ने उन्हें पहचान और कानूनी हक दिए हैं। अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता के अधिकार में स्व पहचान का अधिकार शामिल है। किन्नरों को सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ा हुआ मानकर कोर्ट ने केन्द्र और राज्य सरकार को आदेश दिया है कि वे शैक्षणिक संस्थानों और नौकरियों में पिछड़ों को दिया जाने वाला आरक्षण किन्नरों को भी दें।

कोर्ट के इस फैसले से याचिकाकर्त्ता लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी और किन्नर समुदाय बहुत खुश हैं क्योंकि सुप्रीम कोर्ट ने उन्हें वे अधिकार दिये हैं जिनकी मांग वे वर्षों से करते आ रहे हैं। किन्नर समुदाय और भी जोश-खरोश के साथ राष्ट्र निर्माण में अब अपनी पूरी भूमिका निभा सकेंगे।

भारत दुनिया का पहला देश है, जहां ऐसा कदम उठाया गया है। ऐसा करने से संविधान या कानूनों में किसी तरह की फेरबदल करने की जरूरत नहीं पड़ी है क्योंकि भारतीय संविधान में सभी नागरिकों के लिए समान अधिकारों का प्रावधान है।

सुप्रीम कोर्ट ने किन्नर समुदाय को तीसरी श्रेणी में रखने एवं उन्हें आरक्षण देने का आदेश दिया है। यह वास्तव में सकारात्मक सोच है, यह काबिलेतारीफ है। लेकिन ऐसे लोगों को सर्वप्रथम समाज की मुख्यधारा से जोड़ने की जरूरत है। इसके लिए समाजिक जागरूकता की भी जरूरत है।

यह सोचनीय है कि हमारे समाज में किन्नरों को तिरस्कार की नजर से देखा जाता है। कुछ ही समय के लिए शादी-ब्याह, बच्चों के जन्मोत्सव, मुँडन आदि में इनकी सहभागिता देखी जाती है। किन्नरों को

अपने जीवन में तरह तरह की आपदाओं को झेलना पड़ता है। कठिन परिस्थितियों से गुजरते हुए संघर्ष और अपमान सहकर अभद्र व्यवहार का सामना करना पड़ता है। हालांकि किन्नर समुदाय के लोगों में एक अच्छा जीवन जीने की प्रतिभा एवं क्षमता है, बस कमी है उचित प्रोत्साहन और एक सहयोगी तथा स्वस्थ वातावरण की। माहौल अच्छा मिले तो वे जीवन में बहुत आगे बढ़ सकते हैं। सामाजिक विषमताओं के चलते इनकी सारी संभावनाएं और प्रतिभाएं अन्दर ही दबी रह जाती हैं। इनमें बदलाव लाना जरूरी है। मुख्य परेशानी यह है कि समाज की सोच ही नकारात्मक है। जैसे ही लोगों को पता चलता है कि यह व्यक्ति किन्नर है, तो भेद-भाव और बहिष्कार की प्रक्रिया शुरू हो जाती है। शायद इसका एक कारण अज्ञानता भी है। आज भी अधिकतर लोग स्त्रीलिंग और पुलिंग को ही जानते हैं। तीसरे लिंग के बारे में उनकी जानकारी नहीं के बराबर है। इसकी जानकारी के अभाव के कारण लोगों का रवैया अधिक तिरस्कारपूर्ण हो गया है, जिसे समाप्त करना अनिवार्य है। स्कूल एवं कॉलेज के पाठ्यक्रम में इस विषय की जानकारी देनी चाहिए। शासन और पुलिस कर्मियों को भी इस विषय को लेकर सहनशीलता का परिचय देना चाहिए। किन्नर समुदाय के प्रति समाज में घनघोर भेदभाव व्याप्त हैं, जिसके चलते युवा किन्नरों की क्षमताएं बंजर हो रही हैं। रोजगार के अधिकांश द्वार उनके लिए बंद हैं। अतः पेट भरने के लिए केवल भीख मांगने, घर-घर जाकर बधाई गाने के अलावा कोई और विकल्प नहीं बचता है। अतः किन्नरों की युवा पीढ़ी को इन नकारात्मक परिस्थितियों से निकालकर एक स्वस्थ वातावरण में रखना जरूरी है।

हाल ही में 'यू एन डी पी (U.N.D.P.)' ने एक लीडरशिप ट्रेनिंग प्रोग्राम चलाया था। उसमें भाग लेनेवाले किन्नरों के बर्ताव और आचरण में 30 दिनों में ही सकारात्मक बदलाव आया। जब 30 दिनों में इतना बढ़िया नतीजा सामने आ सकता है तो युवा किन्नरों के रहने के लिए, पढ़ने के लिए हॉस्टल बनाने की कोई योजना यदि सरकार बनाये

(जैसे आदिवासी, हरिजनो और अल्पसंख्यकों के लिए बनाये गये हैं) तो इसके बहुत ही अच्छे परिणाम सामने आयेंगे और तीन-चार साल में उनका आचरण एकदम बदल जायगा। हॉस्टल में रहने से किन्नरों में व्याप्त अशिक्षा भी काफी हद तक दूर हो सकती है क्योंकि वर्तमान परिवेश में पढ़नेवाले किन्नरों को बहुत ही नकारात्मकता का सामना करना पड़ता है।

भेदभाव दो तरीकों से मिट सकता है एक तो उन्हें एक स्वस्थ वातावरण में पढ़ने-बढ़ने का मौका दिया जाय और दूसरा समाज में यह जागरूकता फैलाएं कि तीसरा लिंग भी होता है, उनकी भी अपनी समस्याएं हैं। उनकी भी अपनी जिन्दगी है। उन्हें लड़का या लड़की की तरह रहने के लिए मजबूर करना, उनके साथ बहुत बड़ा अत्याचार है।

आज किन्नरों में भी काफी जागृति आ गई है। किन्नर वर्ग भी देश को संवारने और लोकतन्त्र को मजबूत बनाने में लगे हुए हैं। लोकसभा 2014 के चुनाव कार्य में इन्होंने अपनी पूरी सहभागिता दी है। चुनाव जीतकर ये किन्नर विधान सभा में अपनी हाजिरी दे रहे हैं। 16वीं लोकसभा चुनाव में मतदान प्रतिशत बढ़े, इसको ध्यान में रखकर चुनाव आयोग के द्वारा रैली और दौड़ का आयोजन मतदाताओं को जागरूक और प्रोत्साहित करने के लिए किया गया, इस अभियान में किन्नरों ने भी उत्साह के साथ हिस्सा लिया। सरकार के सभी अभियानों को पूरी मजबूती प्रदान करने की कोशिश की। लोगों को वोट का अहमियत बताया तथा मतदाताओं को जागरूक किया।

शबनम मौसी मध्य प्रदेश की पहली किन्नर विधायक बनीं। संसद में अभी तक इनका कोई प्रतिनिधि नहीं पहुंचा है। इनका कहना है कि अन्य सांसदों से किन्नर सांसद, संसद में बेहतर काम कर सकते हैं। ये भारतीय राजनीति में अपने को तीसरे मोरचे का उद्‌भव करार दे रहे हैं। इनका कहना है कि हमारा कोई अपना परिवार नहीं है, हम किसी के साथ भेद-भाव नहीं करते, हम बेहतर काम कर सकते हैं। इनका दावा है कि ये लोग सरकार को हर तरह से सहयोग देंगे। आज

यह तीसरा लिंग भी पारिवारिक और सामाजिक जागरूकता फैलाने में अपना पूरा सहयोग दे रहे हैं। ये अपने गीतों और अपने हाव-भाव के माध्यम से शिशु मृत्यु एवं मातृ मृत्यु की समस्या पर काबू पाने के लिए, मातृ शिशु के स्वास्थ्य एवं पोषण हेतु बच्चे के जन्म के बाद बधइयां गाते हुए घर-घर में जाते हैं और उनके सुखद और सफल जीवन जीने के लिए परिवार और समाज को जागरूकता का संदेश देते हैं

पहला बच्चा होने के बाद,
पांच बरस की दूरी रखा।
हमको ना चाहिए बच्चा अनेक,
बेटी हो या बेटा, बच्चा हो एक।।
माई के दूध, जे बच्चा पीवे
दो ही दिन में, कुप्पा बने।
गल घोंटू ना हो, काली खांसी ना हो,
टेटनेस ना हो भइया, पोलियो ना हो।।

इस प्रकार ये परिवार और समाज को जागरूक तो कर ही रहे हैं साथ ही साथ सरकार की नीतियों और योजनाओं को भी सफल बनाने में अपना पूरा सहयोग दे रहे हैं।

हिमालय की गोद में बसे उत्तराखंड में 60,000 से 70,000 किन्नर हैं। वहां पर किन्नर नेता रजनी रावत काफी लोकप्रिय हैं। देहरादून के मेयर चुनाव में इन्हें दो बार 40,000 से अधिक मत मिले। इनका वहां पर काफी दबदबा है।

कन्नम्मा देश के पहले किन्नर हैं, जिन्हें लोक अदालत में नियुक्त किया गया। ये सामाजिक कार्यकर्त्ता हैं, इन्होंने किन्नरों के साथ मिलकर टेलरिंग का व्यवसाय शुरू किया। सभी को काम दिया। एक 'एन.जी.ओ' की मदद से बड़ी संख्या में किन्नरों को तमिलनाडु होमगार्ड में भर्ती करवाया। उत्तर से दक्षिण तक इनकी तादाद अच्छी खासी है।

यह जरूरी है कि अब इन्हें समाज में मानवीय नजरिये से देखा जाय, उपेक्षित दृष्टि से नहीं। उनके प्रति समाज की सोच को बदलना

जरूरी है। समाज को किन्नरों को स्वीकार करना ही होगा। वे भी समाज के एक अंग हैं। ईश्वर के बनाए हुए तीसरे लिंग के साथ, जन्म लेने वालों को अपराधी मानना अन्याय है। समाज में उन्हें भी महत्वपूर्ण माना जाय एवं सम्मानजनक स्थान दिया जाय।

सुप्रीम कोर्ट का आदेश स्वागत योग्य है क्योंकि लम्बे समय से किन्नर समुदाय की जो मांग रही है, उसे पूरा करके कोर्ट ने सराहनीय कदम उठाया है।

इस तीसरी शक्ति का उपयोग देशहित, जनहित और लोकहित में होना चाहिए। इनकी बिखरी और विकेन्द्रित आत्मशक्ति को हमें दीप दिखाना होगा, जाग्रत करना होगा और जब यह शक्ति अपने पूरे वेग में जग जायेगी तो इनकी विलुप्त आन्तरिक शक्ति महाशक्ति बनकर उठ खड़ी होगी देश के नव निर्माण में।

■

अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस

8 मार्च को पूरे विश्व में अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस मनाया जाता है। वर्ष 2011 महिला दिवस का वैश्विक शताब्दी वर्ष है। 8 मार्च 2011 को विश्व महिला दिवस की शुरुआत हुए 100 साल पूरे हो चुके हैं। यह दिन शोषण और अन्याय के विरोध में आवाज उठाने का दिन है। यह दिन संघर्ष और चुनौतियों का प्रतीक है। आत्ममंथन एवं आत्मसम्मान का दिन है।

आज महिलाएँ जिस मुकाम पर पहुँची हैं, उसे हासिल करने में इतिहास की उन महिलाओं का योगदान है जिन्होंने स्त्री समानता, स्वतंत्रता और न्याय के लिए तथा नारी को कुप्रथाओं, अंधविश्वासों की बेड़ियों से आजाद करने के लिए अपना पूरा जीवन बलिदान कर दिया। यह दिन उन महान् नारियों के संघर्षों को याद करने और उनकी जलाई लौ को और तेज करने का दिन है। बराबरी और आजादी के लिए लड़ते हुए उन महिलाओं ने इतिहास रच दिया। आज भी यह संघर्ष जारी है और इस संघर्ष को आगे बढ़ाना ही उन महिलाओं के प्रति सच्ची श्रद्धांजली है। अपने अधिकार की लड़ाई महिलाएँ बखूबी जीत रही हैं लेकिन अभी भी इन्हें एक लम्बी दूरी तय करनी है

सितारों से आगे जहाँ और भी है
अभी इश्क के इम्तहाँ और भी हैं।

1870 में 8 मार्च को पहली बार संगठित रूप में महिलाएँ शिकागो की सड़कों पर उतरी थीं, उन्होंने अपनी फैक्ट्री मालिकों से काम के घंटे 16 से घटाकर 10 करने की मांग की थी।

1909 में डेनमार्क की राजधानी कोपेनहेगेन में आयोजित **'कॉन्फ्रेंस ऑफ वर्किंग वीमेन'** में क्लारा जेटकिन (जर्मनी की सोशल डेमोक्रेटिक) पार्टी की महिला शाखा की प्रमुख) ने अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस का प्रस्ताव रखा। 17 देशों की 100 से अधिक प्रतिनिधियों ने इसका समर्थन किया। तभी से अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस मनाया जाने लगा। पहली बार 19 मार्च को आस्ट्रिया, डेनमार्क, जर्मन और स्वीटजरलैंड में महिला दिवस मनाया गया।

वर्ष 1913 में काफी विचार-विमर्श के बाद 8 मार्च को अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस मनाने का फैसला किया गया।

इस दिन महिला सम्बन्धित विभिन्न मुद्दो पर महिलायें कार्यक्रम आयोजित करती हैं। रैलियां निकालती हैं, सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। स्त्री-मुक्ति के अधूरे संघर्ष को पूरा करने का संकल्प लिया जाता है।

महिला दिवस के दिन को रस्मअदायगी के रूप में नहीं मनाया जाय, बल्कि महिलाओं के साथ होनेवाली हर प्रकार की असमानता, हिंसा, शोषण के खिलाफ एक जुट होकर जागरूकता अभियान चलाया जाय। आज महिलाएं हिंसा और असुरक्षा की शिकार हैं।

पिछले 20-25 वर्षों में शिक्षा के क्षेत्र में महिलाएँ काफी आगे बढ़ी हैं। देश के हर क्षेत्र में महिलाओं ने उल्लेखनीय प्रगति की है। पुरुषों के क्षेत्रों में भी अपनी पहचान बनाई है। आज महिलाएं बड़ी-बड़ी कम्पनियों, संस्थानों की मुखिया बनकर काम कर रही हैं और प्रतिदिन नई-नई चुनौतियों का सामना कर रही हैं।

महिलाओं ने राजनीति में अपना उचित प्रतिनिधित्व प्राप्त करने की पूरी कोशिश की है। हर राजनीतिक पार्टी में उनकी हिस्सेदारी बढ़ी है। हमारे देश में पहली बार एक महिला, श्रीमती प्रतिभा पाटिल ने

राष्ट्रपति का पद सुशोभित किया। इसके पहले देश की प्रथम महिला प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने लगभग 16 साल देश का सफल नेतृत्व किया। डेढ़ दशक से ज्यादा समय से कांग्रेस जैसी राष्ट्रीय पार्टी की बागडोर सोनिया गांधी के हाथों में है। उत्तर प्रदेश में मायावती एक मजबूत राजनीतिक स्तंभ हैं। कई बार इन्होंने मुख्यमंत्री का पद भी सुशोभित किया है। दिल्ली में शीला दीक्षित दस साल सत्ता में रहीं। बंगाल में ममता बनर्जी ने 34 सालों की वामपंथी सरकार को उखाड़ फेंका, राजस्थान की वसुन्धरा राजे सत्ता में है। जयललिता ने अन्नाद्रमुक पार्टी का नेतृत्व सफलतापूर्वक किया। मध्यप्रदेश की मुख्यमंत्री उमा भारती रह चुकी हैं। अन्य पार्टियों में भी महिलाएं महासचिव, प्रदेश पार्टी अध्यक्ष जैसे महत्वपूर्ण पदों को सुशोभित कर रही हैं। महिलाओं का समर्थ होना किसी भी राष्ट्र के विकास का चिह्न है।

पिछले कुछ वर्षों में जिस तेजी से भारतीय महिलायें आगे बढ़ी हैं, यह आधी आबादी के लिए शुभ संकेत है। भारत में न सिर्फ पढ़ी-लिखी महिलायें आगे आ रही हैं, बल्कि ग्रास रूट से जुड़ी महिलाओं में भी अपने अधिकार के प्रति जागरूकता देखने को मिलती है। यों तो पूरे विश्व की महिलाओं में जागरूकता आयी है लेकिन जहाँ तक भारत की बात है यहाँ की महिलाओं में पूर्ण आत्मविश्वास जागृत हुआ है और यही कारण है कि हर क्षेत्र में भारतीय महिलाएं अपने लिए उपलब्धियों की नयी मिसाल कायम कर रही हैं। कोई भी राष्ट्र तबतक तरक्की नहीं कर सकता है जब तक वहाँ की महिलाएं शिक्षित एवं संतुष्ट नहीं हों। यहाँ आज भी पितृ सत्ता का ही बोलबाला है, लेकिन यह भी सही है कि वर्तमान में महिलाओं की दिशा और दशा में पहले से अधिक सुधार हुआ है। आज की महिलाएं अपने कैरियर और अधिकारों के प्रति जागरूक हैं और उन्हें घरवालों का भी सहयोग मिल रहा है। यह शुभ संकेत है। आत्मविश्वासी हैं भारतीय महिलाएं ये विश्व का नेतृत्व करेंगी। इनका भविष्य उज्ज्वल है।

दूसरी तस्वीर यह भी है कि यहां की अधिकांश महिलाओं पर

अनाचार, अत्याचार, बलात्कार जैसे अपराध लगातार बढ़ रहे हैं। यह देश की गंभीर समस्या है, अहम् मुद्दा है। राजनीति में कुछ महिलाओं के होते हुए भी, वे इतनी सक्षम नहीं हैं कि अपनी समस्याओं को संविधान में उचित संशोधन करवा सकें।

संतोष की बात यह है कि मौजूदा लोकसभा में 61 महिलाएं चुनाव जीतकर पहुँची हैं। भारतीय लोकसभा के इतिहास में यह पहला अवसर है जब इतनी संख्या में महिलाएँ इस सदन में पहुँची हैं और पहली बार छह महिलाएं कैबिनेट मंत्री बनी हैं। इन्हे महत्वपूर्ण मंत्रालयों की जिम्मेवारी भी दी गई है। कैबिनेट महिला मंत्रियों के ये चेहरे हैं निर्मला सीता रमण वाणिज्य एवं उद्योग व कॉरपोरेट मामलों की राज्य मंत्री, उमा भारती जल संसाधन, नदी विकास एवं गंगा पुनरोद्धार मंत्री, मेनका संजय गांधी महिला एवं बाल कल्याण मंत्री, स्मृति इरानी मानव संसाधन मंत्री, हरसिमरत कौर बादल खाद्य प्रसंस्करण, उद्योग मंत्री एवं डा. नजमा हेपतुल्ला अल्पसंख्यक मामलों की मंत्री। तेज तर्रार, अनुभवी राजनेता सुषमा स्वराज विदेश मंत्री बनी हैं। यह सब देश के लोकतांत्रिक इतिहास में पहली बार हुआ है। यह एक नयी प्रेरक और प्रशंसनीय पहल है। इन महिलाओं के लिए यह एक बड़ी जिम्मेदारी है, इन्हें इसे ईमानदारी और लगन से निभाना है। शिक्षामंत्री प्रयास करें जिससे लड़कियों की शिक्षा 100 प्रतिशत तक पहुंच जाए।

68 वर्षों से राजनीति में महिलाओं की सहभागिता निराशाजनक रही। आज राजनीति में महिलाओं का अधिक से अधिक प्रतिनिधित्व देने की जरूरत है जिससे ज्यादा संख्या में संसद में महिलाएं पहुंचकर महिलाओं के कल्याण के लिए नीतियां बना सकें। 33 प्रतिशत महिलाओं का स्थान निर्धारित करने के लिए लंबित विधेयक को तुरत पास करवाने की जरूरत है।

पूरे देश की स्वास्थ्य व्यवस्था डांवाडोल है, विशेषकर मातृमृत्यु दर। देश की प्रगति के लिए देश वासियों का स्वस्थ होना आवश्यक है। इसके बाद आती है महिलाओं की सुरक्षा। ये चारों मुद्दे एक दूसरे से जुड़े

हुए हैं। सरकार इन चारों मुद्दों को ध्यान में रखकर महिला सशक्तीकरण की नीतियां बनाये जिससे देशभर की महिलाओं की आवश्यकताओं, इच्छाओं और अधिकारों के लिए काम हो सके।

युग बदल रहा है। विश्व की नारियों में भी बदलाव आ रहा है। विश्व के हर कोने में ऐसी बयार है कि महिलाओं के विकास के साथ परिवेश भी बनता जा रहा है। आज महिलायें पूर्ण आत्मविश्वास और पक्के इरादे से आगे बढ़ रही हैं।

रूस में महिलाओं की जनसंख्या 53 प्रतिशत है जिसमें 47 प्रतिशत रोजगार में लगी हैं। नौकरी में लगी उच्च शिक्षा प्राप्त महिलाओं की संख्या 50.5 प्रतिशत है और 56.2 विशिष्ट उच्चतर शिक्षा प्राप्त है। वहाँ के राष्ट्रपति ने एक अध्यादेश पारित किया कि महिलायें जो समाज में जैसी भूमिका अदा कर रही हैं उन्हें उसी अनुपात में राज्य प्रणाली के उच्च एवं मुख्य पदों पर प्रतिनिधित्व दिया जाय।

ईरान के राष्ट्रपति ने कहा मजहब के आधार पर महिलाओं को उनके वाजिब अधिकारों एवं अवसरों से वंचित नहीं करना चाहिए। उन्होंने महिला न्यायाधीशों की नियुक्ति भी की।

जापान में भी नारियों की स्थिति में बहुत बदलाव आया है। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद जापान के श्रम बाजार में महिलायें काफी तेजी से प्रवेश कर रही हैं। अभी तक महिलायें केवल बैंक और डिपार्टमेंटल स्टोर तक ही सीमित थीं। केवल लिपिकीय कार्य और चाय पिलाने तक सीमित थीं किन्तु अब महिलायें प्रबन्ध की ओर अग्रसर हो रही हैं और इनकी संख्या बढ़ती जा रही हैं। टकाको डोई वह पहली महिला थीं जो जापान के इतिहास में पहली बार पार्लियामेंट में बहुमत से चुनी गईं।

सिडनी में हुए एक अन्तर्राष्ट्रीय सर्वेक्षण के अनुसार पुरुषों की तुलना में महिलायें अच्छी अधिकारी सिद्ध हो सकती हैं क्योंकि वे अपने काम के प्रति पूर्णरूप से समर्पित होती हैं।

मुस्लिम देशों में भी अब औरतों को तरजीह दी जाने लगी है। कुबैत जैसे मुस्लिम देश में एक बार में आठ औरतों ने सांसद बनकर

नया रिकार्ड बनाया है।

एक सर्वेक्षण में यह भी पाया गया है कि महिलाओं में नेतृत्व क्षमता अधिक है, पुरुष अपनी नेतृत्व क्षमता विकसित करने के लिए महिलाओं से सीख ले सकते हैं।

अपने देश में पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी एक क्रान्तिकारी कदम है। 73वें संविधान संशोधन बिल के परिणामस्वरूप अधिक से अधिक महिलाओं को राजनीति में भाग लेने के अवसर मिल रहे हैं। आज महिलाएं अपनी भूमिका पूर्ण सक्षमतापूर्वक निभा रही हैं। शराब के विरुद्ध आन्दोलन छेड़ रही है। मद्यपान, निरक्षरता एवं अन्धविश्वास के विरुद्ध रैलियां निकाल रही हैं। उत्तराखंड की महिलाएं भी पंचायती राज से मिले आरक्षण का भरपूर उपभोग कर रही हैं।

हरियाणा में पंचायती राज में चुनी गई अधिकांश महिलाएं अनपढ़ थीं किन्तु दो सालों में वे शिक्षित और सरकारी कामकाज में सक्षम प्रतीत हुईं। यह सही है कि आज ग्रामीण महिलाओं में भी असाधारण रूप से जागृति बढ़ी है। उत्तर प्रदेश में आरक्षण की नीति ने औरतों के विश्वास को मजबूत किया है। लखनऊ में एक पंचायत सदस्या का कहना है कि "वे महिलायें जो घर से बाहर निकलने में झिझकती थीं, आज प्रशासन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं।" फरिदाबाद जिला परिषद् की एक सदस्या का कहना है कि "पंचायत चलाने में क्या कठिनाई है ? जब हम परिवार को चला सकती हैं तो समाज का संचालन क्यों नहीं कर सकती हैं ?"

मध्य प्रदेश के पिछड़े और आदिवासियों के क्षेत्रों में जागृति एवं परिवर्तन की लहर शहरों से कम नहीं है।

आज महिलाओं की स्थिति बदल रही है। परिवार के साथ अब वे अपने सामाजिक दायित्वों का पालन कुशलतापूर्वक कर रही हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में भी धीरे-धीरे नारी शक्ति नेतृत्व के क्षेत्र में आगे बढ़-चढ़ कर भूमिका निभा रही है।

आज महिला मुद्दों पर होनेवाले आन्दोलन का मूल्यांकन करने

की जरूरत है। आजादी के बाद यहां आन्दोलन की शुरुआत ही मुद्दा आधारित रहा, जैसे बलात्कार विरोधी आन्दोलन, दहेज-उत्पीड़न तथा दहेज हत्या विरोधी आन्दोलन, घरेलू हिंसा के खिलाफ अभियान, कार्यस्थलों को यौन अत्याचारों से सुरक्षित करने के लिए आन्दोलन आदि। फिर दहेज विरोधी अभियान के दबाव में ही दहेज निरोधक कानून बने।

'घरेलू हिंसा सुरक्षा कानून' 2005 में बना। यह कानून घर में रहनेवाली महिलाओं को घर में पुरुषों की हिंसा से बचाने के लिए है। इसका कोई खास फल नहीं मिला।

'पैतृक सम्पत्ति पर अधिकार कानून' 2005 में बना। भारत की संसद ने हिन्दू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम पास किया जिसे सरकार ने 9 सितम्बर 2005 से लागू कर दिया। यह मूल रूप में 1956 के इसी संशोधित कानून का संशोधन है। इसके मुताबिक बेटे और बेटियों को माता-पिता की पूरी चल-अचल सम्पत्तियों में बराबर का अधिकार होगा, किन्तु भारतीय समाज में इसका भी मात्र कागज पर ही अस्तित्व है। लड़कियों को शुरू से ही उनके पालन-पोषण में भेद-भाव किया जाता रहा है। उन्हें आत्मनिर्भर नहीं बनाकर ससुराल के लिए तैयार किया जाता है।

एक और मुख्य बात है कि प्रायः ग्रामीण महिलाओं को जमीन के अधिकार से बंचित किया जाता है। जबकि खेती का सारा काम महिलाएं ही करती हैं, पर मिलकीयत पुरुषों की मानी जाती है। इससे असुरक्षा की भावना आती है। इसलिए भूमि अधिकार भी महिलाओं के लिए जरूरी है।

यदि सुरक्षित समाज का निर्माण करना है तो बड़ी संख्या में महिलायें बाहर निकलें। इसके लिए उन्हें सुविधा और सुरक्षा भी मिलनी चाहिए। महिलाओं को घर से बाहर निकलने के लिए प्रेरित करना होगा। नई नीति बनानी होगी।

हर स्थान पर कार्यालयों में, संस्थाओं में, पुरुषों और महिलाओं की संख्या बराबर हो, तभी पुरुष प्रधान वर्चस्व टूटेगा। आर्थिक रूप से

मजबूत और सामाजिक रूप से सशक्त महिलाएं हों तो घरेलू हिंसा में कमी आयेगी। आपसी एकता से भी आधी आबादी मजबूत होगी। आज विभाजित समाज में महिलायें भी विभाजित हैं। महिलाओं में आपसी समन्वय नहीं हैं देश की आधी आबादी यदि उपेक्षित है तो इसके लिए जिम्मेवार हम महिलायें भी हैं। आज जरूरत है महिलाओं को एकजुट होने की। यदि हम एक जुट होंगे तो हमारी मांग को भी तरजीह दी जायेगी। यदि देश की सारी महिलायें एक जुट होकर सरकार में प्रस्ताव भेजेंगी तो उन्हें हक जरूर मिलेगा।

आज महिलाओं को बराबरी, आजादी और इंसाफ चाहिए। परन्तु इन तीनों से नारी को आज अलग कर दिया गया है। परम्परा, धर्म, दहेज प्रथा आदि के नाम पर अधिकारों को छीन लिया गया जिससे नारी इन तीनों सूत्रों से दूर रहे।

आधुनिक शिक्षण पाठ्य पुस्तकों में कहीं भी नारी की सम्मानित छवि को दर्शाया ही नहीं गया है।

आज इक्कीसवीं सदी में भी, आजादी के 68 वर्ष बाद भी देश की महिलाओं का बुरी तरह से शोषण हो रहा है। इनका शोषण, प्रताड़ना दिल दहला देने वाला है। गांव हो या शहर, हर जगह महिलाओं के खिलाफ आपराधिक घटनाएं घट रही हैं और इसमें दिन-प्रतिदिन बढ़ोतरी हो रही है। आज महिलाओं के साथ, लड़कियों के साथ (इसमें पाँच वर्ष की बच्ची भी शामिल है) सामूहिक बलात्कार, हत्या, भ्रूण हत्या, दहेजहत्या, बहुओं को जला देना, लड़कियों को बेच दिया जाना आदि अनेक अमानवीय कार्य समाज में हो रहे हैं, जो नारी उत्थान के मार्ग में रोड़े बने हुए हैं। सामूहिक बलात्कार के शर्मनाक मामले सुनकर लज्जा से सिर झुक जाता है।

आज हमें एक सख्त कानून ही नहीं, हमारे सोच में पुरुषों के सोच में, समाज के सोच में एक बड़े बदलाव की जरूरत है।

लाख कानून बनाने पर भी बाल विवाह, भ्रूण हत्या आज भी जारी है, विधवाओं की स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ है। शराब की

दुकानें बेतहाशा खुल रही हैं। दहेज का लेन-देन तेजी से हो रहा है। शिक्षा में चरित्र निर्माण का अभाव है। जीवन मूल्यों की कमी हो रही है। ग्रामीण महिलाओं के स्वास्थ्य के साथ बेइन्साफी की जा रही है। डाक्टरों द्वारा पैसे के लालच में कम उम्र की महिलाओं का भी गर्भाशय निकाल लिया जा रहा है। जादू-टोना के नाम पर गरीब महिलाओं का शोषण हो रहा है।

खाने-पीने की चीजों में धड़ल्ले से मिलावट हो रही है। सरकार का कोई नियंत्रण इस पर नहीं हो पा रहा है।

आज महिलाओं के अन्तःकरण को जागृत करना है। अपने देश में महिलाओं का एक वर्ग ऐसा भी है जो आज भी पिछड़ा हुआ है, उन्हें अपने अधिकारों का ज्ञान नहीं है। उनमें शिक्षा की कमी है। वे रूढ़िवादिता से ग्रसित हैं। आज हमें उनके हितों के लिए आवाज उठानी है। उनमे आत्मबल और आत्मविश्वास जगाना है। उन्हें उनके अधिकारों के प्रति जागरूक बनाना होगा। उन्हें आगे बढ़ाना होगा। उनको मदद करनी होगी। उन्हें सम्मान देना है। जब तक नारी जाति के लिए सम्मानजनक दृष्टिकोण समाज नहीं अपनाता है तब तक सरकार द्वारा बनाए गए कानून कारगर नहीं होंगे।

उद्योगों में महिलाओं की लगन और मैनेजमेंट क्षमता सराहनीय है, लेकिन उनके सामने बहुत चुनौतियां हैं जिनका उन्हें सामना करना है।

महिलायें सशक्त और निष्पक्ष हों। साथ ही उन्हें कठोर होना भी जरूरी है। आज महिलाओं को खुद आगे बढ़ना होगा। उन्हें खुद फैसला लेने की आजादी होनी चाहिए। उनमें भरपूर ऊर्जा है, आवश्यकता है बुलन्द हौसले की।

महिला सुरक्षा से संबंधित अनेक कानून संविधान में होने के बावजूद लगातार महिलाओं का शोषण हो रहा है। इसके लिए रूढ़िवादी विचारों को त्यागकर हम अपनी सम्पूर्ण ऊर्जा शक्ति के साथ अन्याय और शोषण का विरोध करें। रूढ़िवादिता और स्वार्थ के कारण कुछ लोग

दूसरों की स्वतंत्रता को प्रतिबन्धित करते हैं। परिवार से लेकर समाज तक हर स्तर पर महिलाओं को प्रोत्साहित करने की जरूरत है।

कानून में बदलाव होना चाहिए। देश में नीति निर्माताओं द्वारा महिलाओं के लिए बेहतर कानून बनाने की आवश्यकता है। साथ ही कानून का पालन भी सख्ती से होना चाहिए। थानों में अभी भी महिला पुलिसकर्मी नहीं के बराबर हैं जो महिलाओं की शिकायतें सुन सकें और उन्हें पंजी में दर्ज कर सकें।

यह सही है कि पिछले कुछ वर्षों से इस दिशा में तरक्की हुई है लेकिन अभी भी महिलाओं का सशक्तीकरण नहीं हुआ है। सरकार को यह भी ध्यान रखना होगा कि समय पर न्याय मिले और तय समय में मिले। इस दिशा में ठोस पहल होना चाहिए ताकि गाँव की महिलाएं भी सुरक्षित और आत्मनिर्भर हो सकें। आज विश्व की सभी महिलाओं को अपने अधिकार के प्रति जागरूक बनना पड़ेगा। पंडित जवाहर लाल नेहरू ने कहा था, "एक महिला को जागरूक करने का अर्थ है पूरे परिवार को जागरूक करना। परिवार को जागरूक करने का अर्थ है देश को जागरूक करना।"

आज सभी महिलाओं को शिक्षित करने की जरूरत है। अशिक्षित महिलाओं को शिक्षित महिलाएं शिक्षित करें, जागरूक करें। आज सामाजिक कुरीतियों, अंधविश्वासों, रूढ़ियों, गलत परम्पराओं, गलत रीति-रिवाजों का विरोध करना होगा। गांव-गांव की महिलाओं को जागरूक करने के लिए एक मुहिम चलानी होगी। महिला हिंसा, भ्रूण हत्या, दहेज प्रथा के खिलाफ एक जुट होकर महिलाओं को साप्ताहिक जागरूकता अभियान चलाना होगा। इसमें गांव-गांव की महिलायें जुड़े और जागरूक बनें। उनके अन्दर आत्मविश्वास, आत्मबल पूर्ण रूप से जगाना होगा। उनकी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ करनी होगी। इसके लिए पढ़ी-लिखी महिलाओं को ही गांव की महिलाओं को चुनौतियों, संघर्षों से लड़ना सिखलाना होगा।

वर्ष 2015 के अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर संयुक्त

राष्ट्र ने सारी दुनिया को आह्वान किया है कि इस दिन को इस रूप में मनाया जाए जिससे सबको यह संदेश मिले कि 'महिला सशक्तीकरण का अर्थ है मानवता का सशक्तीकरण।'

संयुक्त राष्ट्र ने दुनिया के सामने यह भी लक्ष्य रखा कि '2030 तक स्त्री-पुरुष का अनुपात समान हो जाए, जिससे लैंगिक समानता के लक्ष्य को हासिल किया जा सके', लेकिन यह कार्य तभी सफल होगा जब अपने समाज को स्त्री-विरोधी रूढ़िवादी विचारों से मुक्त कर हम एक स्वस्थ समाज का निर्माण करेंगे।

आज के दिन उन महिलाओं को याद करना है जिन्होंने महिला अधिकार के लिए अनवरत संघर्षरत रहकर चुनौतियों का सामना करते हुए हम महिलाओं को इस मुकाम पर पहुंचाया है।

यों तो महिलाओं को हर मुकाम पर चुनौतियों का, संघर्षों का सामना करना पड़ता है और इन संघर्षों में हर तरह की पुरानी रूढ़ियों, मान्यताओं, व्यवस्थाओं से टकराना पड़ता ही है। इन्हीं संघर्षों एवं चुनौतियों का सफलतापूर्वक सामना करना ही महिला दिवस का संदेश है और आज इसी नारी-आन्दोलन की जरूरत है

नारी तेरी पुचकार बने हुंकार तभी परिवर्तन है।
तेरे सुहास्य की खनक क्रान्ति का नर्तन और विवर्द्धन है।।

■

मातृ दिवस Mothers Day

'मां' मानवता की देवी, उत्कृष्टता की देवी, शालीनता की देवी, सिद्धान्तों की देवी, आदर्शवादिता की देवी, प्रखरता की देवी है। 'मां' में भावना, आदर्श, उत्कृष्टता, पवित्रता और प्रखरता है। मां से बच्चों का रिश्ता भावनाओं से जुड़ा हुआ है। 'मां' शब्द ही अपने आप में परिपूर्ण है। उसमें सागर की गहराई, धरती की दृढ़ता हैं, वह तमाम झंझावतों से तटस्थ होकर बच्चे की रक्षा जीवन भर करती है। आज जितने भी संबंध कायम हैं, उनमें मां का रिश्ता ही निस्वार्थ है। मातृत्व, वात्सल्य और करूणा की देवी है मां। मां का कर्त्तव्य केवल लालन-पालन और स्नेहदान तक ही सीमित नहीं है। बालक को जीवन में विकसित होने, उत्कर्ष की ओर बढ़ने के लिए मां ही शक्ति प्रदान करती है। सही प्रेरणा देती है। माता द्वारा सुनाई गई कहानियां, दिया गया ज्ञान तथा उपदेश ही सम्पूर्ण जीवन में उसका मार्गदर्शन करता है। मातृत्व को इस धरती पर देवत्व का रूप हासिल है। मां त्याग की प्रतिमूर्ति है। मां के आंचल में बच्चे की पूरी दुनिया है। यही दुनिया बच्चे की प्रथम पाठशाला होती है। भावी पहचान यहीं से बनती है। मां के लिए एक दिन मातृ दिवस के रूप में निश्चित करना बेइमानी है। हां, इस दिन को एक प्रतीक मानकर हम याद कर सकते हैं मां के श्रेष्ठ, महान रूप को, जो हमें उनके कर्म की शाश्वत रूप को फिर से याद दिलाता है।

सबसे पहले यूनान में 'मदर्स डे' मनाया गया। 'मदर्स डे' मई के दूसरे रविवार को मनाया जाता है। एक अनुमान के अनुसार यूनान से 'मदर्स डे' मनाने का सिलसिला शुरू हुआ। इंगलैण्ड के लोग भी चौथे रविवार को इसे मदर्स डे के रूप में मनाने लगे जिसे नाम दिया गया मदरली संडे।

इसकी आधुनिक शुरुआत का श्रेय अमेरिका की दो महिलाओं 'जुलिया वार्ड होवे' और 'ऐना जार्विस' को जाता है। जुलिया वार्ड होवे ने सर्वप्रथम 'मदर्स डे' मनाया था, इसके बाद ऐना जार्विस ने सरकार से 'मदर्स डे' के नाम पर एक दिन की छुट्टी घोषित करने की मांग की थी।

इनके प्रयास से ही 1914 में प्रेसिडेन्ट वुडरो विल्सन ने मई के दूसरे संडे को 'मदर्स डे' के रूप में मनाने की घोषणा की। इस तरह विश्व के अन्य देशों में भी 'मदर्स डे' मनाने का सिलसिला लागू हो गया।

मां सबसे अनमोल होती है। जग में यदि दो सुन्दर नाम चुनने को दिया जाय तो सबसे पहले मां का नाम होगा और दूसरा ईश्वर का। मां को सम्मान देनेवाला व्यक्ति जरूर सम्मान पाता है। ऐसे बच्चों की मां भी स्वयं को गौरवान्वित महसूस करती है। अमर शहीद भगत सिंह, चन्द्र शेखर आजाद, लोकमान्य तिलक जैसे अनेक लाल मां की आराधना करते-करते मां की गोद में समा गये। हर पुत्र को कल्पना करनी चाहिए कि उसकी मां ने उसे पालने के लिए क्या-क्या कष्ट नहीं उठाए। देवकी ने जेल में यातना सहकर भगवान कृष्ण को जन्म दिया, मां मरियम भगवान यिशु को, घुड़साल की यातना भोगकर, उन्हें संसार में लाई। मां का नाम लेते ही जो सौम्य तस्वीर सामने आती है, उसके आगे सिर खुद-व-खुद नतमस्तक हो जाता है। ईश्वर हर जगह मौजूद नहीं होता इसलिए उसने मां को बनाया है। मां के गर्भ से लेकर बड़े होने तक या यों कहें बूढ़े होने तक मां को हमारी चिन्ता रहती है। पुत्र कुपुत्र हो सकता है। माता कभी भी कुमाता नहीं हो सकती।

अमेरिका के भूतपूर्व राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन ने कहा था, "आप मुझे अच्छी मां दे दें तो मैं आपको अच्छा राष्ट्र दे सकता हूँ।"

मां का प्यार सबसे गहरा होता है। जान से प्यारे होते हैं बच्चे मां के लिए। बच्चों के लिए सबसे अहम् है मां। प्रथम गुरू माँ होती है। केट नाइट के अनुसार

"जब एक स्त्री पहली बार अपने नन्हें
शिशु की हथेली पर ऊंगली रखती है और
वह नींद में खोया होने पर भी उसे कसकर
थाम लेता है, तब स्त्री की आंख पहली
बार छलकती है, वह मां बन जाती है।"

मां के आंचल की महिमा को शब्दों में बयान नहीं किया जा सकता है। जब मां के गर्भ में बच्चे का अंश पनपता है, उसी समय से बच्चे की डोर मां से जुड़ जाती है। दुनिया की सभी संस्कृतियों में मां का स्थान सबसे ऊंचा बताया गया है। धैर्य देखो तो वह है मां में। मां बच्चे को जन्म देती है, पाल-पोसकर बड़ा करती है। मां का प्यार-दुलार सदा बच्चों के साथ रहता है। मां बच्चे को अपना दूध पिलाती है। खुद गीले में सोकर बच्चे को सूखे में सुलाती है। पापा गलती करने पर मारते तो वह बच्चे को बचाती है। मां इस दुनिया में सर्वाधिक पूजनीय और वंदनीय होती है। मां बच्चे को जिन्दगी का पाठ सिखलाती है, बच्चे को विपरीत परिस्थितियों से भी लड़ने का हौसला देती है। दुनिया भर की दौलत एक तरफ और मां की ममता एक तरफ

"सब देवी-देवियां एक ओर
ए माँ मेरी तू एक ओर।"

दुनिया की सबसे बड़ी दौलत मां की ममता है। मां को नहीं बांध सकते शब्दों और रेखाओं में। मां बहुत छोटा किन्तु अत्यन्त अर्थ गर्भित शब्द है। सिर्फ दो शब्दों के मेल से 'मां' शब्द बना है किन्तु इसका अर्थ महासागर की तरह गहरा और अनोखा है। मां शब्द अपने अन्दर अनगिनत गुणों को समेटे हुए है। मां हर पल, हर क्षण बच्चे के

लिए समर्पित रहती है। मुसीबत में फंसने पर मां के ममतामय स्पर्श से ही बच्चा स्वस्थ हो जाता है।

मां, मम्मी, अम्मा, माताजी, माई, मदर ये सभी शब्द भले ही अलग-अलग भाषा का प्रतिनिधित्व करते हों लेकिन इन शब्दों से एक ही भाव निकलता है, वह है मां की ममता। मां की ममता और प्यार बड़े से बड़े जख्मों पर मरहम का काम करता है। माता-पिता के चरणों में बच्चों का स्वर्ग होता है। अमेरिका के प्रथम राष्ट्रपति जार्ज वाशिंगटन ने कहा है कि ''आज मैं जो हूँ, वह मां की वजह से हूँ। मैं अपनी सफलता का श्रेय उनके द्वारा दिये नैतिक, बौद्धिक और शारीरिक ज्ञान को देता हूँ, जो उन्होंने मुझे दिया था।''

मां जिन्दगी का वह तोहफा है जिसके पास होने के एहसास को शब्दों में बयां नहीं किया जा सकता। अपनी ममता और मातृत्व शक्ति से मां बिना कुछ कहे ही अपने बच्चे की भाषा समझ जाती है। मातृत्व के बिना वह स्वयं को पूर्ण नहीं मानती, वहीं मां के बिना बच्चे के जीवन में एक बड़ा अधूरापन रह जाता है। बच्चे के प्रति माता का प्यार परमात्मा का प्रकाश है।

मां जीवन है, जननी है, जिन्दगी की मार्गदर्शक है। मां से ही यह दुनिया है, मां समय के साथ चलना जानती है, बच्चे को कभी हारते नहीं देखना चाहती

''लबों पर कभी बददुआ नहीं होती
बस एक मां है, जो कभी खफा नहीं होती
इस तरह वह मेरे गुनाहों को धो देती है,
मां बहुत गुस्से में होती है, तो रो देती है,
हंसते हंसते अपनी जिम्मेवारी निभाती है,
वह बच्चों की हिम्मत और ताकत होती है।''

बचपन में एक कहानी मैंने सुना था जो मां की महानता को परिलक्षित करती है ईश्वर कुछ गढ़ रहे थे। एक अप्सरा वहां से गुजरी और उसने ईश्वर से पूछा 'ये आप क्या बना रहे हैं? मैं आपको

लगातार छह दिनों से काम करते देख रही हूँ।' ईश्वर ने जवाब दिया 'मैं मां को गढ़ रहा हूँ' अप्सरा को जिज्ञासा थी ''कैसी बनानी है?'' ईश्वर ने उत्तर दिया ''जिसकी गोद में सृष्टि समा जाए....जिसका स्पर्श बड़ी से बड़ी चोट को सहलाकर ठीक कर दे....जिसका दुलार बड़े से बड़े सदमें को उबार दे....जिसके दो हाथ सबको दिखे, पर हों कई, ताकि जीवन संवारने का उसका कर्त्तव्य बिना बाधा पूरा हो सके.....जिसके मन में भी आंखें हों, जिनसे वह दूर बैठी अपनी संतान को देख सके....जो बीमार होने पर भी दस लोगों वाले परिवार के लिए हंसकर भोजन बना दे... नाजुक हो, पर हर मुश्किल को हरा सकने का दम रखे... जिसके आंचल तले सृष्टि को सुरक्षा मिले....जिसके नेत्रों में अपने बच्चों के लिए भाव भरा जल हो और उनके शत्रुओं के लिए ज्वाला....जिसके दर्शन मात्र से मानवता कृत-कृत हो....मैं उसे गढ़ रहा हूँ जिसे मानव ठेस तो बहुत पहुंचायेगा, पर उसका हाथ न आशीर्वाद देने से रूकेगा और न दिल दुआ मांगने से।' मैं अपना प्रतिरूप गढ़ रहा हूँ'' ईश्वर प्रतिरूप को नमन, मां को नमन!!

मां के आंचल के छांव में कोई दुःख तकलीफ सता नहीं सकती। वह मां ही है जो बच्चे के लिए सामाजिक, आर्थिक, शारीरिक और मानसिक रूप में अपना सब कुछ न्योछावर करने को तैयार रहती है।

ओशो रजनीश का कहना है कि 'जिस पल बच्चे का जन्म होता है, उसी समय एक मां का भी जन्म होता है। इसके पहले उसका कोई अस्तित्व नहीं होता। वह सिर्फ एक महिला होती है, लेकिन मां नहीं।'

बच्चा जब जन्म लेता है तो सबसे पहले मां उसे प्यार करती है। जब भी बच्चे को मां की जरूरत होती है, मां पास में होती है। मां बच्चे को सहारा देती है, चलना सिखलाती है। वह जब रोता है, मां उसके आंसू पोंछती है। गलती करने पर उसे हाथ पकड़कर समझाती है, रास्ता दिखलाती है। सबसे नजदीक से यदि हम अपनी जिन्दगी में किसी को देख पाते हैं तो वह मां होती है।

समय में बदलाव के साथ-साथ, जीने के तरीकों में भी बदलाव आये हैं। रिश्तों में भी बदलाव आये हैं, लेकिन एक चीज आज भी यथावत् है, वह है मां का बच्चे के साथ अटूट रिश्ता। यह रिश्ता मजबूती से अपनी डोर थामे हुए है। मां बच्चे की चिन्ता से कभी मुक्त नहीं होती है। आज हर मां को चुनौतियों और चिन्ताओं से जूझना पड़ता है। शिक्षा, सुरक्षा और स्वास्थ्य ये तीन उनके सामने बड़ी चुनौतियां हैं। यदि बेटी है तो सबसे बड़ी चुनौती सुरक्षा की है। बच्चों की सुरक्षा को लेकर वह परेशान रहती है। कामकाजी मां के लिए तो और भी मुश्किलें हैं। समय की कमी के कारण मां और बच्चे में संवाद नहीं हो पाता है। पहले संयुक्त परिवार होते थे। वहां बहुत से लोग बच्चे की देख-रेख के लिए होते थे, लेकिन आजकल एकल परिवार है और उसमें भी मां बाप दोनों कामकाजी। ऐसे में कामकाजी मां को बच्चे की सुरक्षा, स्वास्थ्य और शिक्षा भी सुनिश्चित करनी है। समय और संवाद में कमी के कारण बच्चे को मां से दूरी नहीं बने, इसके लिये मां ओर बच्चे में संवाद अवश्य हो। साथ ही साथ एक दूसरे में प्रेम और विश्वास होना जरूरी है। नौकरी के वजह से कामकाजी मां बच्चों को पूरा समय नहीं दे पाती है। परिस्थितियाँ बदल गई हैं लेकिन भावनाएं नहीं बदली हैं। अब मां को पहले से ज्यादा सशक्त और जागरूक बनना होगा। बेटा बेटी में समता का भाव हो, शिक्षा, खान-पान और सुरक्षा में कोई भेद-भाव नहीं हो, सजगता हो। मां बच्चे को यह शिक्षा अवश्य दे कि वह अपनी सुरक्षा को लेकर स्वयं सचेत रहे। यह भी मां को ध्यान रखना है कि बाहर बच्चे किन लोगों के सम्पर्क में आते हैं जिससे बाहरी दुनिया में बच्चा यदि पांव रखे तो वहां की मुश्किलें उसे विचलित नहीं कर सकें।

मां की जिम्मेदारियां दोहरी तेहरी हो गई हैं। घर-बाहर और बच्चों की देख-रेख की जिम्मेदारी से आज मां बोझिल महसूस कर रही है। दिल मां का ही है लेकिन समय नहीं है उसके पास, फिर भी भावी पीढ़ी को तैयार करने का दायित्व वह आज भी निभा रही है।

मां सृष्टि की जन्मदात्री है। उसकी ममता वक्त या उम्र की

मोहताज नहीं है। मां तो जहां होती है, वहीं होता है पूरा घर, पूरा संसार।

मातृ दिवस हमें याद दिलाता है कि हम उनकी सेवा करें, उनके प्रति प्रेम और आदर व्यक्त करें। जिस तरह मां अपना जीवन बच्चे के लिए समर्पित करती है वैसे ही बच्चे को अपनी मां का ध्यान रखना चाहिए। कोई भी ऐसा काम नहीं करना चाहिए जिससे मां को दुःख पहुंचे। जब मां की आंखे धुंधली हो जाएं तो बच्चे का मां के प्रति यह दायित्व बनता है कि वह उसका हाथ थामे जैसे मां ने बचपन में उसके लिए किया था। प्रतिदिन समय निकालकर मां के संग बच्चों को वक्त बिताना चाहिए। हमेशा मां को खुश रखने का प्रयास करना चाहिए। इससे मां को खुशी और सन्तोष मिलेगा। वह चैन से अन्तिम सांस ले सकेगी और भगवान के पास पहुंचकर भी वह बच्चे को ढ़ेर सारा प्यार और आशीर्वाद दे सकेगी।

आकाश में चमकते हुए तारों के प्रति समाज में यह अवधारणा है कि उन तारों की आँख से माँ अपने पुत्र-पुत्रियों को देखती रहती है, मृत्यु के बाद भी। महाभारत में जब यक्ष युधिष्ठिर से प्रश्न करता है कि पृथ्वी से भी बड़ा कौन है तो यक्ष का उत्तर होता है कि माता पृथ्वी से भी बड़ी है 'पृथिव्यां महती माता'। इस तरह मातृदिवस वह दिवस है जहाँ से वात्सल्य-वाटिका की मृदु गंध और स्नेह की सुखदायिनी वायु के झोंके प्राप्त होते हैं।

■

बच्चों का चरित्र-निर्माण ही विश्व कल्याण

वस्तुतः मां की कोख से ही बच्चे का चरित्र निर्माण प्रारम्भ हो जाता है। गर्भावस्था से ही बालक मां के संस्कारों, आचरणों को आहार के रूप में ग्रहण करता है। जन्म के बाद भी बालक मां के आश्रित रहता है। मां की गोद में खेलता-कूदता है, आंचल तले दूध पीता है और विकसित होता है। प्राचीन काल में माताएं बच्चों को रामायण, महाभारत, गीता, पुराणों की कहानियां सुनाकर उनमें श्रेष्ठ संस्कारों का बीजारोपण करती थीं, फलस्वरूप उनकी संतान धीर, वीर, कर्तव्यपरायण और संस्कारी होती थीं। जिस प्रकार शिल्पकारों और मूर्त्तिकारों द्वारा पत्थर और कच्ची मिट्टी को मनचाहा आकार देकर खिलौने, मूर्त्तियां और तरह-तरह के बर्तन बनाए जाते हैं, ठीक उसी प्रकार मां अपने शिशु को अपने संस्कारों द्वारा मानव, महामानव, धीर, वीर, परमवीर बना सकती है। अबतक जितने भी ऐतिहासिक महापुरुष हुए हैं उन सभी को श्रेष्ठ बनाने का श्रेय उनकी माताओं का ही रहा है। मां पैदा करती है महात्मा गांधी, लोकमान्य तिलक, दयानन्द, विवेकानन्द, अरविन्द जैसे महापुरुषों को।

मदालसा ने अपने बच्चों को ब्रह्मज्ञानी बनाया, महाभारत का प्रसिद्ध 'विदुलोपाख्यान' में रानी विदुला ने युद्ध से भागे अपने बेटे संजय को प्रेरणा देकर विजयी बनाया।

यदि बचपन में अच्छे संस्कार का बीजारोपण हो गया तो समय

पाकर वह अवश्य पुष्पित और पल्लवित होगा और यह कार्य केवल मां ही कर सकती है।

बच्चों के चरित्र निर्माण में बाल-साहित्य की विशेष भूमिका है। पंचतन्त्र के रचयिता विष्णुशर्मा ने कहानियां सुना-सुना कर मन्द बुद्धिवाले बच्चों को राजनीति और व्यावहारिक जीवन में सफल होने योग्य सभी गुण सिखा दिया था।

दादी-नानी की कहानियों से भी अच्छी सीख मिलती है। कभी दादी-नानी की कहानियां हुआ करती थीं, लेकिन अब वह दौर बदल चुका है। अब एकल परिवार होने के कारण दादी-नानी बच्चों से दूर हैं। माता-पिता के पास भी बच्चों को कहानियां सुनाने का वक्त नहीं है। कहानियों से बच्चों की निपुणता बढ़ती हैं, वे नयी-नयी बातों से अवगत होते हैं। इससे बच्चों का मानसिक विकास हेाता है तथा देश-दुनिया की तमाम बातों की जानकारी होती है, बुद्धिमता बढ़ती है। इससे बच्चे साहित्य की दुनियां से भी रूबरू होते हैं।

कहानियों के जरिए यदि बचपन से ही बच्चों को नये-नये शब्द सिखाये जायें तो ताउम्र ये शब्द उनके साथ हो जाते हैं।

कहानियों के जरिये बच्चों को जिन्दगी के कई नैतिक मूल्य भी सिखाये जा सकते है। जैसे कहानियों के माध्यम से ही उन्हें सिखाया जाय कि 'चोरी करना बुरी बात है....' इस सीख के आधार पर ही बच्चों को कहानी सुनाएं और उन्हें अच्छी आदत अपनाने के लिए प्रेरित किया जाये।

कहानियों के माध्यम से बच्चे अच्छे श्रोता भी बनेंगे। सुनने की क्षमता बढ़ेगी। स्मरण शक्ति बढ़ेगी।

यदि बच्चों में कहानी सुनने और कहने की आदत बनेगी तो वे दादा-दादी, नाना-नानी के करीब आना चाहेंगे, बच्चे बुजुर्गों से कटने की कोशिश नहीं करेंगे।

किस्से-कहानियां सुनने से बच्चे अपनी संस्कृति से जुड़ते हैं। वे समझ पायेंगे कि संस्कृति क्या है? और वे किस तरह मूल्यों से संबंध

रखते हैं।

बच्चों को ऐसी कहानियां भी सुनानी चाहिए जो उन्हें भावात्मक रूप से जोड़ती हैं। इससे बच्चों में अच्छी भावना जागृत होगी।

कहानी एक ऐसा माध्यम है जिससे बुद्धिमता बढ़ती है। चरित्र-निर्माण होता है। इसके द्वारा मंद से मंद बुद्धि वाले बालक को भी शिक्षित और संस्कारित किया जा सकता है।

बच्चा स्वयं भी एक विचारशील प्राणी होता है। उसके अपने संस्कार भी होते हैं। आत्मप्रदर्शन का भाव प्रत्येक बच्चे में अपना ही होता है। अभिभावकों को इस पर सूक्ष्म दृष्टि रखनी चाहिए कि उसकी यह भावना अच्छे अर्थ में है या खराब अर्थ में। यदि अच्छी और रचनात्मक दिशा में उनकी विचार शक्ति और भावनाएं काम कर रही हैं तो उन्हें रोकना नहीं चाहिए बल्कि सहयोग देना चाहिए जैसे कुछ बच्चे छोटी उम्र से ही अध्यापक बनकर अपने पिता का चश्मा पहनकर, झूठ-मूठ का शिक्षण कार्य करने और बच्चों को डांटने का अभिनय करते हैं। इससे बच्चे बहुत कुछ सीखते हैं। उन्हें अनुशासन, प्रशासन, पंक्तियों में बैठने, पढ़ाई पर ध्यान देने की सीख मिलती हे। सर जगदीश चन्द्र बोस बाल्यावस्था में पौधों से बहुत प्रेम करते थे। छोटे छोटे पौधे लाना, उनको लगाना, सींचना, उन्हें जानवरों से बचाना और फल फूलों की रक्षा करने में उन्हें बहुत खुशी होती थी। यदि उनकी इस भावना को रोका गया होता, तो वह प्रसिद्ध वनस्पति शास्त्री नहीं बन सके होते।

बच्चा अपनी आयु के प्रारम्भिक पांच-छह वर्षो में अपने जीवन की नींव पक्की करता है। इसी नींव पर बाद में उसके जीवन का भवन खड़ा होता है। यदि नींव पक्की और सुदृढ़ होगी और भावी जीवन की आधारशिला पूर्ण समझदारी के साथ रखी जायगी तो उसके जीवन का निर्माण भी सुन्दर और सुखद होगा।

घर, परिवार और वातावरण का बच्चे के विकास में बहुत हाथ रहता है। बच्चे के स्वस्थ और स्वच्छ जीवन के लिए स्वस्थ घर एवं स्वच्छ वातावरण अनिवार्य है। घर में शान्तिपूर्ण वातावरण का होना

अत्यन्त आवश्यक है। जिस घर में शान्ति का माहौल होता है, आपस में प्रेम, सौहार्द और छोटे बड़ों का आदर होता है, उस घर के बच्चों में भी ये गुण अपने-आप पैदा हो जाते हैं। परिवार बच्चे की प्रारम्भिक पाठशाला है। परिवार में ही बच्चे नागरिकता का पाठ सीखते हैं। आदर्श परिवार के बच्चों में प्रेम, सहयोग, ईमानदारी, सेवा, सहिष्णुता, विनम्रता, स्वच्छता, सुशीलता आदि गुणों की अधिकता होती है।

बच्चों का पालन पोषण स्वच्छ और स्वस्थ वातावरण में होना चाहिए। इसका अमिट प्रभाव बच्चे पर पड़ता है। बच्चों के जीवन पर माता पिता के जीवन का गहरा प्रभाव पड़ता है। जिस घर में माता और पिता में आपस में अनबन रहती है, उस घर का बच्चा अपने भावी जीवन में सफल नहीं हो पाता है। बच्चों को समाज का श्रेष्ठ नागरिक बनाने के लिए माता पिता को पहले स्वयं श्रेष्ठ, उत्तम माता पिता बनना होगा। बच्चा माता पिता दोनो के लिए प्रसन्नता का स्रोत है। पति पत्नी के जीवन में बच्चे का अस्तित्व बहुत महत्त्व रखता है। उनके जीवन का महान् कर्त्तव्य बच्चे को महान बनाना है।

माँ बाप अपने बच्चे के लिए दर्पण का काम करते हैं। बालक अपना स्वरूप उन्हीं में देखता है। माता पिता के रहन सहन की सूक्ष्म छाप बच्चे पर रहती है। बचपन के ये प्रभाव जीवन पर्यन्त बने रहते हैं।

मैडम मांटेसरी ने अपने परीक्षणों से यह सिद्ध कर दिया है कि बच्चे की प्रारम्भिक छह सालों में से तीन साल बड़े महत्वपूर्ण होते हैं। इन वर्षो में वह जो कुछ सीख लेता है, शेष जीवन में वह उसी का विकास करता है। संसार में जन्म लेने वाला प्रत्येक अबोध शिशु परमात्मा की एक पवित्र धरोहर है जिसकी उचित प्रकार से रक्षा और विकास करके ही हम अपने उत्तरदायित्व से मुक्त हो सकते हैं।

जब बच्चा बोलना और चलना सीख जाता है, तब वह नाना प्रकार की वस्तुओं को देखता है, परखता है, नए नए प्रश्न पूछता है, अपनी जिज्ञासु प्रवृत्ति को सामने रखता है। माता पिता को उस समय धैर्य के साथ, शान्ति से उसकी हर बात को सुनकर, बड़े प्रेम से उसे

समझाना चाहिए। उनके प्रश्नों के सही सही उत्तर देना चाहिए। नई नई वस्तुओं को देखने एवं अनुभव करने से उनका ज्ञान बढता है। बच्चे बोलना जल्दी सीख जाते हैं। अक्षर ज्ञान के बाद उन्हें बच्चों की पत्रिकाओं से कहानियां, महापुरुषों के संस्मरण और शिशु-गीत, आदि सुनाना चाहिए ताकि उनकी रुचि पुस्तकों की ओर बढ़े। बच्चों के स्वतन्त्र विचारों को पनपने देना चाहिए। नन्हें मुन्ने बच्चे फूल की तरह होते हैं। इन्हें विकसित तथा सुसंस्कारों से युक्त होने का अवसर मिलना चाहिए। ये खिलती कलियां अपने ही रंग में विकसित होंगी।

बच्चे को शिक्षित और सुयोग्य बनाने के लिए साधन की भी आवश्यकता होती है। अतः उनके पूर्ण विकास के लिए नियोजित परिवार यानी छोटा परिवार होना चाहिए। परिवार में ही माता पिता से बच्चों को नैतिक शिक्षा मिलती है। किसी विद्यालय में आज यह शिक्षा नहीं मिलती है। बच्चों को दण्ड नहीं दिशाएं देनी चाहिए। यदि बच्चे को अच्छा वातावरण मिले तो साधारण घर में जन्म लेने वाला बच्चा भी महान् बन सकता है, जबकि बुरे वातावरण में पड़कर अच्छे घरों के लड़के भी बुरे बन जाते हैं। अच्छे या बुरे विचार दूषित वातावरण की ही उपज होते हैं। बच्चों की इस प्रकार परवरिश करें कि वह डरपोक बनने के बजाए जिज्ञासु बने। बच्चों को दिन रात उपदेश देने से अच्छा है, उनके कार्यो की सराहना की जाए। उनके मस्तिष्क को जितना अधिक इस्तेमाल करने का अवसर मिलेगा, उतना ही अधिक उनका विकास होगा। प्रत्येक स्थिति में बच्चे को व्यस्त रखना आवश्यक है। सभी बच्चों के साथ समान रूप से व्यवहार करना चाहिए। अनुशासन के नाम पर परिवार में बच्चों पर अधिक प्रतिबन्ध लगा दिए जाते हैं। उनके प्रत्येक कार्य में जब अपनी इच्छा लादी जाती है, तब उनका बौद्धिक विकास रूक जाता है। उनके स्वयं की निर्णय की शक्ति कुंठित हो जाती है। अधिक डांट डपट करने से उनके मन में कुंठा और क्षोभ पनपने लगता है। बच्चे चिड़ चिड़े हो जाते हैं।

शहरों में माता पिता दोनों कामकाजी होते हैं और उनके पास

बच्चों के लिए बहुत ही कम समय होता है। वे थके हुए रहते हैं और घर पर भी काम के तनाव से ग्रस्त होते हैं। माता पिता का बच्चों के साथ खेलना और समय बिताना उनके अच्छे विकास में सहायक तो होता ही है, साथ ही बड़ों की थकान को भी कम करता है तथा उन्हें तनावमुक्त रखता है। यह सही है कि काम से समय निकालना मुश्किल होता है, पर समझदार माता-पिता को यह कोशिश जरूर करनी चाहिए कि वे बच्चों के साथ भी समय व्यतीत करें। रविवार का दिन बच्चों के लिए समर्पित होना चाहिए। जिन लोगों को रविवार के दिन अवकाश नहीं मिल पाता, वे सप्ताह का कोई और दिन नियत कर सकते हैं। इस दिन को वे बच्चों के साथ पढ़ने, खेलने और मनोरंजन करने में बिता सकते हैं। शहर में ही या आस-पास की यात्रा कर सकते हैं। बच्चों के साथ समय बिताकर माता-पिता उनके अंदर के अवसाद, अकेलापन, चिड़चिड़ापन जैसी मानसिक संकटों को पैदा होने से रोक सकते हैं। सप्ताह का पूरा एक दिन बच्चों के नाम करने का तय करें।

बच्चे खेल के द्वारा भी जीवन जीने की कला सीख लेते हैं। आमतौर पर जो बच्चे भविष्य में स्पोर्टस में अच्छा कर सकते हैं, उनके लक्षण बचपन से ही नजर आने लगते हैं, ऐसे में माता पिता को चाहिए कि वे अपने बच्चे के इस मेधा को फीका न पड़ने दें। समय समय पर होने वाली खेल प्रतियोगिताओं में बच्चों को भाग लेने का मौका दें। इससे बच्चों में प्रतियोगिताओं को लेकर प्रतिस्पर्धा जगेगी और वे अपने कार्य-कलापों पर ज्यादा ध्यान देंगे।

प्राचीन काल में हमारी संस्कृति में, हमारे समाज में बच्चों के चरित्र निर्माण पर काफी जोर दिया जाता था, किन्तु आज यह मुद्दा हाशिये पर चला गया है। पहले गुरुकुल में शिक्षा ग्रहण करनेवाले बच्चों में शिक्षक उन संस्कारों को भरते थे जो उनके जीवन को सार्थक मूल्यों से अवगत कराते थे। पर आज बच्चे अपने आदर्श स्वयं गढ़ते हैं, इसलिए उनके चरित्र का निर्माण भी वैसा ही हो रहा है। आज सिफ 5 प्रतिशत शिक्षक बच्चों के प्रति समर्पित हैं। औसतन का कहना है कि

''बच्चों को पढ़ाना मेरा काम है, इसलिए पढ़ाता हूँ।'' शिक्षक को ध्यान देना होगा कि उन्होंने जो पढ़ाया, उसे सभी बच्चों ने कितना सीखा, कितना ग्रहण किया। पहले शिक्षक और शिष्य के बीच जो मनोवैज्ञानिक संबंध हुआ करता था, आदर का भाव था, वह सब आज लुप्त हो चुका है। गुरुकुल में राजा प्रजा सबको समान रूप से रखा जाता था। सबकी जीवन शैली एक जैसी थी। छात्रों में अहंकार नहीं आए, इसलिए सबसे भिक्षाटन कराया जाता था। शिष्य अपनी इन्द्रियों पर संयम रखते थे। पांच वर्ष की आयु से शिक्षा आरम्भ कर छात्र पन्द्रह वर्ष की आयु में उस विद्या में पारंगत हो जाता था। विद्यार्थी को प्रारम्भ से ही उसी विद्या में ढ़ाला जाता था जिसमें उसकी रुचि रहती थी और वह उसी विद्या में निपुण हो जाता था।

जब ईस्ट इंडिया कम्पनी आई तो गुरुकुल की परंपरा को तोड़ने के लिए मैकाले ने नई शिक्षा नीति का बजट बनवाया। कोलकाता और मुम्बई में कॉलेज खुलवाये। उसकी सोच थी कि भारतीयों का एक ऐसा वर्ग तैयार किया जाय जो रंग और रक्त में भारतीय हों लेकिन सोच और शैली अंग्रेजों जैसी हो। शिक्षा महंगी हो गई। गरीब बच्चे शिक्षा से वंचित हो गये। नई शिक्षा पद्धति में सभी को सभी विषय पढ़ाया जाने लगा। यहीं से देश की मानसिक शक्ति का ह्रास और विघटन शुरू हुआ।

आज शिक्षा का स्वरूप बिल्कुल बदल गया है। नैतिकता सदाचार, ईमानदारी, शिष्टाचार, आत्मीयता, विनम्रता, अच्छे संस्कार गौण पड़ते जा रहे हैं। अब तो बच्चों के छोटे छोटे, टेढ़े मेढ़े डग भरने से पहले ही माता पिता को चिन्ता होती है, उनकी शिक्षा दीक्षा की और फिर शुरु होती है विद्यालयों में बच्चे के रजिस्ट्रेशन की भाग दौड़। माता पिता दोनों यदि नौकरी करते हैं तो बच्चों का पालन-पोषण या तो आया करती है या उन्हें क्रेच में रखा जाता है। यहीं से भावात्मक जुड़ाव में कमी आती है। माता पिता पैसे खर्च करके अपने कर्त्तव्य की इतिश्री मान बैठते हैं, लेकिन बचपन वह उम्र है जब बच्चे को स्नेह आत्मीयता, ममत्व और भावात्मक सुरक्षा की जरूरत सबसे अधिक होती

है, पर उनके जिज्ञासु मस्तिष्क में उठनेवाले सैकड़ो प्रश्न स्नेहासक्त वातावरण के अभाव में मन में ही घुमड़कर रह जाते हैं। भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति करके माँ बाप बच्चे की भावात्मक जरूरतों को प्रायः नजरअंदाज कर रहे हैं। माँ-बाप की तरफ से उपेक्षित ये बच्चे टी.बी. सीरियल, आया की झिड़की तथा गली-मुहल्लों के लड़कों के बीच अपना सुकून तलाशते हैं, जो उन्हें उचित संस्कार देने में बिल्कुल समर्थ नहीं है। नशे की लत इन बच्चों में पड़ जाती है। जबतक माता पिता कोई कदम इस सम्बन्ध में उठा पायें, तबतक उनका सारा व्यक्तित्व ही खंडित हो जाता है। घर में रहते हुए भी ऐसे बच्चे घर के परिवेश से दूर जा रहे हैं। स्नेह, वात्सल्य और ममत्व से जिगर के टुकड़े को संरक्षण मिलना चाहिए।

बच्चों के समुचित विकास के लिए चाहिए भौतिक सुविधाओं के साथ साथ भावात्मक सुरक्षा का अहसास, प्रोत्साहन तथा प्रेरणा। बच्चों की परवरिश करते वक्त इस बात का हमेशा ख्याल रखें कि प्रशंसा, हर्ष और प्रोत्साहन से भरे बचपन ही सुदृढ़ जीवन की आधारशिला बनते हैं।

इन दिनो अनैतिकता की वृद्धि का एक मात्र कारण मातृ शक्ति की अवमानना है। श्रेष्ठ और गौरवशाली समाज बनाने के लिए पुनः मातृशक्ति को गरिमामय पद पर प्रतिष्ठित करना होगा।

आज जरूरत है ऐसी शिक्षा की जिसमें बच्चों के लिए प्रतिदिन विद्यालय में नैतिक शिक्षा का एक पीरियड अनिवार्य हो जाए। बच्चे के रिपोर्ट कार्ड पर उनके चरित्र का अंकन आवश्यक रूप से हो जिससे मां बाप भी बच्चे के नैतिक विकास के प्रति सचेत हो जाएं। शिक्षा के साथ साथ यदि संभव हो तो बच्चों को बोर्डिंग में ही रखने की व्यवस्था की जाये, बल्कि प्राचीनकालीन गुरुकुल परम्परा को पुनः जीवित करने की आवश्यकता है। प्राचीन काल में गुरुकुल प्रणाली शिक्षा की अच्छी प्रणाली थी। प्रायः ऐसा देखा जाता है कि प्रत्येक परिवार का वातावरण उतना अच्छा नहीं होता, जो शैक्षिक माहौल वहां होना चाहिए, वह नहीं

होता है। अच्छे वातावरण में जबतक बच्चे को नहीं रखा जायगा, तबतक बच्चों का नैतिक और सांस्कृतिक विकास नहीं हो सकता। पुरानी पद्धति में जहां शिक्षा दी जाती थी, वहां बच्चे को संरक्षण भी मिलता था। यह प्रथा गुरुकुलों द्वारा ही संभव थी क्योंकि वहां महर्षियों के आश्रम में ऋषियों की धर्मपत्नियां उत्कृष्ट विचारधारा वाली होती थीं। सहायक अध्यापकों से लेकर कर्मचारियों तक सभी उसी स्तर के होते थे, जिससे बच्चों के उपर एक स्वस्थ एवं स्वच्छ प्रभाव पड़ता था। उस समय बच्चों को कुमार्ग पर जाने की गुंजाइश ही नहीं थी। आज भी इसी प्रकार की शिक्षा की आवश्यकता है।

शिक्षा ऐसी मिलनी चाहिए जहां बच्चों की पढ़ाई से लेकर उनकी दिनचर्या, उनके सोचने की शैली से लेकर बौद्धिक व्यवस्था, बौद्धिक ज्ञान के विकास की पूरी गुंजाइश रहे। शिक्षा राष्ट्र की प्राथमिक और महत्ती आवश्यकता है। इसका समाधान करने के लिए ऐसा हल ढूंढ़ निकालना चाहिए जिससे अपना देश शिक्षित बन सके।

भावी पीढ़ी के निर्माण को एक राष्ट्रीय कर्त्तव्य मानकर यदि शिक्षा पर ज्यादा खर्च भी करना पड़े, सरकार को व्यापक व्यवस्था भी बनानी पड़े, तो भी इसके लिए प्रबन्ध किया जाना चाहिए। ऐसी शिक्षा प्रणाली ही हमारे देश को ऊँचा उठा सकती है। हमारे धर्म, संस्कृति और राष्ट्र को मजबूत बना सकती है। इसी से विश्व-शान्ति की स्थापना हो सकती है और विश्व-कल्याण हो सकता है।

■

वेदना से चेतना की ओर

वेदना से चेतना की ओर

कामिनी अग्रवाल

समीक्षा प्रकाशन
दिल्ली/मुजफ्फरपुर

ISBN : 978-93-84722-44-9

प्रथम संस्करण
2015

सर्वाधिकार ©
कामिनी अग्रवाल

प्रकाशक
समीक्षा प्रकाशन
जे.के.मार्केट, छोटी कल्याणी
मुजफ्फरपुर (बिहार)-842 001
फोन : 09334279957, 09905292801
E-mail : samikshaprakashan@yahoo.com
www : samikshaprakashan.blogspot.com

दिल्ली कार्यालय
आर-27, रीता ब्लॉक
विकास मार्ग, शक्करपुर, दिल्ली–92
मो.-08527482726

प ष्ठ-सज्जा
सतीश कुमार

मुद्रक
बी०के० ऑफसेट,
शाहदरा, दिल्ली।

मूल्य
200.00 (दो सौ रुपये)

Vedana Se Chetna Ki Ore

by Kamini Agrawal **Rs. 200.00**

करूणामयी शक्ति सम्पन्ना दबी हुई चिनगारी
तनी हुई सीधी रेखा नर का प्रत्युत्तर नारी
उसे समर्पण जिसने चूमा है आकाश धरित्री
नमन उसे जो मनुज मात्र की है पूज्या जनयित्री

—कामिनी

अनुक्रम

दो शब्द	**: डॉ. देवनारायण झा**	**09**
भूमिका	**: डॉ. महेश झा**	**11**
एक दृष्टि	**: गुलाबचन्द**	**15**
अनुवाक्	**: डॉ. देवनारायण यादव**	**17**
लेखकीय	**: कामिनी अग्रवाल**	**19**

1.	नारी शोषण और पीड़ा : 21वीं सदी के शर्मनाक तथ्य	23
2.	कोपलान्तक युग (भ्रूण हत्या)	39
3.	बाल विवाह बनाम विधवापन	54
4.	पारंपरिक रूढ़ियाँ और महिलाएँ	67
5.	सर्वशक्तिमयी : नारी	77
6.	संयुक्त परिवार की धुरी : नारी	103
7.	राजनीति और महिलाएं	111
8.	स्थानापन्न माता : सरोगेट मदर	121
9.	तीसरा लिंग : किन्नर	125
10.	अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस	134
11.	मातृ दिवस Mothers Day	145
12.	बच्चों का चरित्र-निर्माण ही विश्व-कल्याण	152

■

श्रीमती कामिनी अग्रवाल ने मौजूदा परिवेश में नारी प्रवृत्तियों, स्थितियों का पूर्ण मूल्यांकन, अपनी इस पुस्तक 'वेदन से चेतना की ओर' के माध्यम से किया है। इसके पूर्व इनकी पहली पुस्तक ''आधी दुनिया की धमक'' को समीक्षकों द्वारा पूर्ण रूप से सराहा गया है। इससे यह प्रतीत होता है कि श्रीमती कामिनी के अचेतन मस्तिष्क से लेकर चेतन मस्तिष्क तक की शुभ्रतर और उज्ज्वल सोच है उनकी यह दूसरी पुस्तक 'वेदना से चेतना की ओर'।

नारी जो ममता की प्रतिमूर्ति है, वह केवल अबला न होकर दैवीय शक्ति से सम्पन्न, समयानुकूल अपने अस्तित्व को सार्थकता प्रदान करती है। भारतीय समाज अनादि काल से पुरुष प्रधान रहा है और जहाँ स्त्रियाँ शोषित होती रही हैं उन्हें केवल भोग्या समझा जाता रहा है सिर्फ किताबों के पन्नों में ही स्त्री को काली, दुर्गा तथा अनादि शक्ति का दर्जा दिया गया है, जबकि वास्तविकता तो यह है कि आज भी बेटियों को सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जाता। देश में पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों का अनुपात काफी कम है, इसका कारण आए दिन होने वाली भ्रूण-हत्याएँ हैं। लगातार बलात्कार की घटनाएँ भी घटित हो रही हैं। कुल मिलाकर किसी भी परिस्थिति में स्त्री जाति सुरक्षित नहीं है। अपने 'स्व' को तलाशती स्त्री जाति गहन अंधकार में जी रही है।

नारी नारीत्व के पुरातन अंधकार से प्रकाश की ओर की ही यात्रा है यह पुस्तक 'वेदना से चेतना की ओर' जिसमें केवल नारी की, अबला की, शेषिता की जीवनगाथा नहीं वरन उसकी ऐसी उड़ान का संकेत है जो आकाश को नापने और समुद्र को आपार तैरने के लिए आकुल है।

कमलेन्द्र चक्रपाणि
'शोध-प्रज्ञ' हिन्दी
ल॰ना॰मि॰ विश्वविद्यालय

कामिनी अग्रवाल

जन्म-स्थान : औरंगाबाद, बिहार

शिक्षा : एम.ए. (हिन्दी एवं इतिहास), डिप-इन-एड.

वृत्ति : पूर्व प्रधनाध्यापिका, देशरत्न डॉ. राजेन्द्र प्रसाद बा.उ.वि., दरभंगा।

लेखन/प्रकाशन : पुस्तक **'आधी दुनिया की धमक'** 2012 में प्रकाशित। इसके अलावे स्तरीय पत्र-पत्रिकाओं में आलेखों का प्रकाशन।

प्रसारण : आकाशवाणी दरभंगा से वार्त्ताओं एवं परिचर्चाओं का निरंतर प्रसारण।

सम्मान/पुरस्कार
- शिक्षा के क्षेत्र में प्रतिभा सम्पन्न एवं विशिष्ट सेवा के लिए **बिहार सरकार** द्वारा **'राज्य पुरस्कार'** से सम्मानित।
- अध्यापन के क्षेत्र में **प्रशंसनीय लोक सेवा** के लिए **महामहिम राष्ट्रपति श्री के.आर. नारायणन द्वारा** राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित।
- बिहार सरकार द्वारा जापान फाउन्डेशन के निमंत्रण पर वर्ष 1999 में जापान के अध्ययन-भ्रमण हेतु मनोनयन किया गया।
- शिक्षा विभाग एवं जिला प्रशासन तथा विभिन्न संस्थाओं द्वारा जिला स्तरीय, प्रमण्डल स्तरीय, एवं राज्य स्तरीय अनेक पुरस्कार एवं सम्मान से सम्मानित।

अभिरूचि : लेखन, समाज-सेवा, कला एवं संगीत में विशेष रूचि।

सम्पर्क : बंगलागढ़, लालबाग, दरभंगा। पिनकोड-846004 (बिहार)

चलभाष : 9835071982